हिन्दी प्रचारिणी सभा: (कैनेडा) की अंतर्राष्ट्रीय त्रैमासिक पत्रिका
Hindi Chetna: International quarterly magazine of Hindi Pracharini Sabha Canada
वर्ष : १७, अंक : ६८, अक्टूबर २०१५ •Year 17, Issue 68, October 2015

शिवना प्रकाशन

डॉ. भागीरथ बड़ोले समग्र
भाग-1, (कहानियाँ एवं व्यंग्य)
संपादन : बसंत निरगुने
ISBN:
978-93-81520-22-2
मूल्य : 650.00 रुपये

डॉ. भागीरथ बड़ोले समग्र
भाग-2, (एकांकी एवं नाटक)
संपादन : बसंत निरगुने
ISBN:
978-93-81520-21-5
मूल्य : 650.00 रुपये

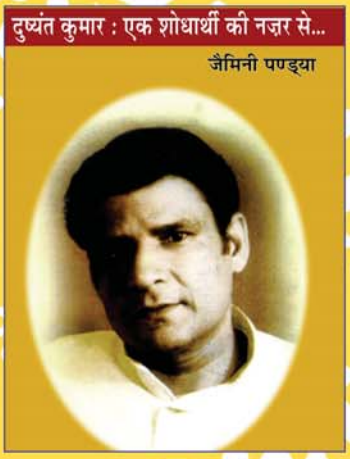

दुष्यंत कुमार :
एक शोधार्थी की नज़र से
डॉ. जैमिनी पण्ड्या
ISBN:
978-93-81520-23-9
मूल्य : 150.00 रुपये

दस प्रतिनिधि कहानियाँ
(कहानी संग्रह)
ISBN:
978-93-81520-17-8
सुधा ओम ढींगरा
मूल्य : 100 रुपये

शिवना प्रकाशन की पुस्तकें अब सभी प्रमुख ऑनलाइन शॉपिंग स्टोर्स पर उपलब्ध हैं

http://www.flipkart.com

flipkart.com

http://www.amazon.in

amazon

http://www.ebay.in

ebay

कसाब.गांधी@यरवदा.in
(कहानी संग्रह)
ISBN:
978-93-81520-18-5
पंकज सुबीर
मूल्य : 150 रुपये

शिवना प्रकाशन
शॉप नं. 3-4-5-6, पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्यप्रदेश 466001
फोन 07562-405545, 07562-695918, मोबाइल +91-9977855399
Email: shivna.prakashan@gmail.com, http://shivnaprakashan.blogspot.in

संरक्षक एवं प्रमुख सम्पादक
श्याम त्रिपाठी
(कैनेडा)

सम्पादक
सुधा ओम ढींगरा
(अमेरिका)

सह-सम्पादक
रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' (भारत)
पंकज सुबीर (भारत, समन्वयक)
अभिनव शुक्ल (अमेरिका)

परामर्श मंडल
पद्मश्री विजय चोपड़ा (भारत)
कमल किशोर गोयनका (भारत)
पूर्णिमा वर्मन (शारजाह)
निर्मला आदेश (कैनेडा)
विजय माथुर (कैनेडा)

सहयोगी
सरोज सोनी (कैनेडा)
राज महेश्वरी (कैनेडा)
श्रीनाथ द्विवेदी (कैनेडा)

विदेश प्रतिनिधि
डॉ. एम. फ़िरोज़ ख़ान (भारत)
चाँद शुक्ला 'हदियाबादी' (डेनमार्क)
अनीता शर्मा (शिंघाई, चीन)
अनुपमा सिंह (मस्कट)

वित्तीय सहयोगी
अश्विनी कुमार भारद्वाज (कैनेडा)

आवरण चित्र तथा अंदर के रेखाचित्र
रोहित रूसिया (छिंदवाड़ा)

डिज़ायनिंग
सनी गोस्वामी (सीहोर, भारत)
शहरयार अमजद ख़ान (सीहोर, भारत)

हिन्दी चेतना

(हिन्दी प्रचारिणी सभा कैनेडा की त्रैमासिक पत्रिका)
Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna
ID No. 84016 0410 RR0001
Financial support provided by
Dhingra Family Foundation
वर्ष : 17, अंक : 68
अक्टूबर-दिसम्बर 2015
मूल्य : 5 डॉलर ($5), 50 रुपये
'हिन्दी चेतना' को आप ऑनलाइन भी पढ़ सकते हैं :
http://www.vibhom.com/hindi chetna.html
http://hindi-chetna.blogspot.com
फेसबुक पर 'हिन्दी चेतना' से जुड़िये
https://www.facebook.com/hindi.chetna

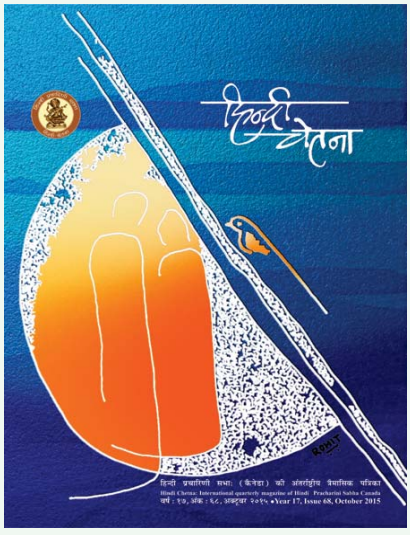

HINDI CHETNA

6 Larksmere Court, Markham Ontario, L3R 3R1
Phone : (905) 475-7165, Fax : (905) 475-8667
e-mail : hindichetna@hotmail.com
Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna ID No. 84016 0410 RR0001

Hindi Chetna is a literary magazine published quarterly in Toronto, Ontario under the editorship of Mr. ShiamTripathi. Hindi Chetna aims to promote the Hindi language, Indian culture and the rich heritage of India to our children growing in the Canadian society. It focuses on Hindi Literature and encourages creative writers, young and old, in North America to write for the magazine. It serves to keep readers in touch with new trends in modern writing. Hindi Chetna has provided a forum for Hindi writers, poets, and readers to maintain communication with each other through the magazine. It has brought local and international writers together to foster the spirit of friendship and harmony.

इस अंक में

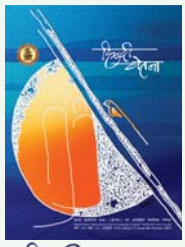

हिन्दी चेतना

वर्ष : 17, अंक : 68

अक्टूबर-दिसम्बर 2015

सम्पादकीय 5

उद्‌गार 6

कहानियाँ

चाहत की आहट

पुष्पा सक्सेना 11

बस, अब बहुत हुआ !

मंजुश्री 16

चायना बैंक

रामगोपाल भावुक 21

बड़ी हो गई हैं ममता जी....

वंदना अवस्थी दुबे 24

कारावास

उषा वर्मा 26

व्यंग्य

मौनीराम मुखौटावाले

गिरीश पंकज 30

एक मनोविज्ञानी का प्रतिवेदन

अरविन्द कुमार खेड़े 32

लघुकथा

हवा

अशोक गुजराती 35

बदलती सोच

बालकृष्ण गुप्ता 'गुरु' 35

एहसास

ओजेन्द्र तिवारी 35

लेख

लोक साहित्य में ब्रज लोक गीतों का स्वरूप

अकरम हुसैन 36

संस्मरण

श्रीमती चन्द्रकिरण सोनरिक्सा

गरिमा श्रीवास्तव 39

अविस्मरणीय

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना 40

भाषांतर

पेर लागरकविस्त की कविताएँ

अनुवादः सरिता शर्मा 41

सिन्धी कहानी/ गरम स्पर्श

मूलः अर्जुन चावला

अनुवादः देवी नागरानी 42

विश्व के आँचल से

बदलते परिवेश में वृद्ध और समकालीन कहानियाँ

सुबोध शर्मा 44

चोका

डॉ. भावना कुँअर 46

कविताएँ

बृजेश नीरज 47

डॉ. अंजना बख्शी 48

अंशु जौहरी 49

मृदुला प्रधान 50

ग़ज़ल

गिरिराज शरण अग्रवाल 51

हाइकु

अनिता मण्डा 52

सेदोका

कृष्णा वर्मा 52

माहिया

ज्योत्स्ना प्रदीप 52

पुस्तक समीक्षा

सरकती परछाइयाँ : सुधा ओम ढींगरा

समीक्षक : मनीषा जैन 53

जिनके संग जिया : अजित कुमार

समीक्षक : पुष्पा मेहरा 55

नींद कागज़ की तरह : यश मालवीय

समीक्षक : सौरभ पाण्डेय 56

साहित्यिक समाचार

डॉ.कमल किशोर गोयनका को व्यास सम्मान 58

झिलमिल कवि सम्मेलन सियैटल 59

व्यंग्य यात्रा का आयोजन 60

प्रलेसं, घाटशिला का आयोजन 60

ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान समारोह रिपोर्ट 61

ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान समारोह चित्रमय झाँकी 62

आख़िरी पन्ना

सुधा ओम ढींगरा 66

'हिन्दी चेतना' की सदस्यता प्राप्त करने हेतु सदस्यता शुल्क 200 रुपये (एक वर्ष), 400 रुपये (दो वर्ष), 1000 रुपये (पाँच वर्ष) अथवा 3000 रुपये (आजीवन) आप 'हिन्दी चेतना' के बैंक एकाउंट में सीधे अथवा ऑनलाइन भी जमा कर सकते हैं।

Bank : YES Bank, **Branch :** Sehore (M.P.)

Name : Hindi Pracharini Sabha Hindi Chetna

Account Number : 041185800000124

IFS Code : YESB0000411

भारत में 'हिन्दी चेतना' के सदस्य बनने हेतु संपर्क करें-

पंकज सुबीर, पी. सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट

बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश-466001

मोबाइल : 09977855399, दूरभाष 07562-405545

ईमेल : subeerin@gmail.com

'हिन्दी चेतना' सभी लेखकों का स्वागत करती है। अपनी मौलिक रचनाएँ चित्र और परिचय के साथ भेजें। 'हिन्दी चेतना' एक साहित्यिक पत्रिका है, अतः रचनाएँ भेजने से पूर्व इसके अंकों का अवलोकन ज़रूर कर लें। रचनाएँ भेजते समय निम्नलिखित नियमों का ध्यान रखें:

- 'हिन्दी चेतना' जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होगी।
- प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा।
- पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी।
- रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा।
- प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा।
- सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में भेजें, पीडीएफ़ अथवा स्कैन इमेज न भेजें।
- बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें।

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं।
संपादक मंडल तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

शोषण की यह क्रूरता मानवता की भी सभी हदें लाँघ गई है

भारत के एक अंग्रेज़ी चैनल 'एन डी न्यूज़' पर मैंने एक समाचार सुना था, केरल के एक अस्पताल में सरे आम रोगियों के गुर्दे, व अन्य अमूल्य अंग निकाल लिए जा रहे हैं। यह सब कुछ उन्हें बेहोश कर उनकी अनुमति के बिना किया जा रहा था। इसमें अस्पताल के मैनेजमेंट और डॉक्टरों की मिली भगत थी। डॉक्टरों को इस प्रकार का आदेश दिया जाता था कि अस्पताल को चलाने लिए अधिक से अधिक धन की आवश्यकता है। यदि तुम यह काम कर सकते हो, तो तुम्हारी नौकरी सुरक्षित है, अन्यथा तुम्हारी कोई आवश्यकता नहीं। डॉक्टर विवश होकर यह दुष्कर्म कर रहे थे।

निस्संदेह वहाँ पर विदेशी पर्यटक एवं धनी लोग, जिनके शरीर का कोई अंग बीमारी के कारण काम करना बंद कर रह होता है, बहुत कम पैसों में अपने अंगों का प्रतिरोपण करवा लेते हैं। इसीलिए भारत के कुछ अस्पताल इस अवैध और क्रूर व्यापार में बड़े सफल हो रहे हैं। कुछ साल हुए भारत के एक डॉक्टर; जो इस कार्य में बहुत निपुण थे और बिना बताए मरीज़ों के गुर्दे निकालकर अपना निजी व्यापार कर रहे थे, उनकी कैनेडा में एक कोठी थी और बाद में उन्हें जेल हो गई।

इंसान क्यों इतना गिरता जा रहा है! डॉक्टर तो भगवान का रूप माना जाता है। वह मानव सेवा की शपथ लेकर इस पुण्य कार्य को करने के लिए मैदान में उतरता है। वह समाज के लिए महान् आदर्श होना चाहिए; क्योंकि वह जीवन दाता होता है। अगर वह ऐसे घृणित कर्म करता है और इस प्रकार के अनैतिक कार्यों से अपना पेट भरता है, तो उसे मानव कहलाने का कोई अधिकार नहीं।

मैं भारत से हज़ारों मील दूर कैनेडा में रहता हूँ और यहाँ की मेडिकल प्रणाली से पूर्ण रूप से परिचित हूँ। यहाँ भी हर दिन इस प्रकार के अंगों के इलाज होते है; किन्तु समाज सेवा के आधार पर। सामाजिक संस्थाएँ निरंतर समाज से अपील करती हैं कि वे अंगदान करें। रक्तदान तो बहुत समय से चला आ रहा है। यहाँ हर व्यक्ति के हृदय में यही भावना रहती है कि यदि वह किसी के जीवन को बचाने में सहायक हो सके, तो वह अवश्य अपना अंग बिना किसी प्रलोभन के दान देगा।

यह प्रश्न चिन्ता का विषय है। इसके मूल में क्या मानसिकता है? डॉक्टर का पेशा सेवा का पेशा न होकर अधिक से अधिक धन कमाना रह गया है। ऐसे भी क्लिनिक मिल जाएँगे, जहाँ मरीज़ को अधिक से अधिक दिनों तक अस्पताल में रोक कर रखा जाता है ताकि अधिकाधिक वसूली हो सके। शोषण की यह क्रूरता मानवता की भी सभी हदें लाँघ गई है। नकली दवाइयों का व्यापार अलग तरह से मानुषी जानों का दुश्मन बना हुआ है। इस अराजकता पर अंकुश लगना बहुत ज़रूरी है। मानव अधिकारों के रखवालों और सरकार की नींद खुलने का इंतज़ार है।

आपका

श्याम त्रिपाठी

ईमेल पता परिवर्तन की सूचना

'हिन्दी चेतना' का ईमेल पता बदल गया है, सभी लेखकों से आग्रह है कि अब पत्रिका हेतु अपनी रचनाएँ तथा पत्र आदि नए पते पर ही भेजें। पूर्व के पते पर न भेजें, वह बंद कर दिया गया है। नया ईमेल पता यह है:-

e-mail :
hindichetna@hotmail.com

उद्‌गार

समकालीन चिंताओं को वाणी

हिन्दी चेतना का जुलाई-सितम्बर 2015 अंक मिला। उत्कृष्ट संपादन एवं टंकण के लिए आप एवं आपका समूह बधाई का पात्र हैं। गीताश्री की कहानी और सुधा अरोड़ा का लेख बहुत अच्छे लगे अपनी पूरी रचनात्मकता के साथ। सम्पादकीय, समकालीन चिंताओं को वाणी दे रहा है। सम्पादकीय आज के भारतीय प्रसंग में एकदम मौजूं है; जबकि 2010 में इंडियन रेवेन्यू सेवा के लिए चुनी गई इरा को चार साल का इंतज़ार करना पड़ा ट्रेनिंग के लिए। उसकी जंग लम्बी थी; क्योंकि वह एक विकलांग लड़की है। अपनी प्रतिभा और काबिलियत से उसने संघ लोक सेवा की परीक्षा में प्रथम स्थान पाया है, और अपनी शारीरिक कमज़ोरी के जवाब में उन सब लोगों की अपंग-मानसिकता को कटघरे में खड़ा कर दिया है-जो मस्तिष्क नहीं मांसपेशियों की ताक़त पर ज़िन्दगी की जंग जीतते हैं। इरा सिंघल ने पढ़कर और सफल होकर उन सभी को करारा जवाब दिया है, जो शारीरिक सौन्दर्य और शारीरिक क्षमता के पुजारी हैं। इरा सिंघल झमझमाता मौन प्रत्युत्तर है 'जीरो फ़िगर' और करोड़ों के सौन्दर्य प्रसाधनों से सजी-सँवरी कमोडिटी के रूप में इस्तेमाल होने वाली काया का। बेआवाज़ प्रेरणा है उनके लिए, जिनका मानना है कि ज़िन्दगी में समझौते तो करने ही पड़ते हैं,चाहे इसके लिए आत्मसम्मान ही दाँव पर क्यों न लगाना पड़े। आज 'प्लेटो' बहुत शिद्दत के साथ याद आ रहे हैं जिन्होंने कहा था -स्त्रियों के पास इतनी कम बुद्धि होती है कि उनसे किसी उच्चतर मानसिक कार्यव्यापार की अपेक्षा नहीं की जा सकती। अठारहवीं शताब्दी में मैडम द-स्टेल ने कहा था कि स्त्रियों को प्रेम करने के अलावा आता ही क्या है-सच है महानुभावों स्त्री को लिखने-पढ़ने का मौका दो फिर देखो उसकी बुलंदियाँ। भारत सरकार को ही नहीं हमें भी अपना नज़रिया और रवैया बदलना पड़ेगा-लड़कियों, विकलांगों और हाशिये के उन सब मनुष्यों के प्रति जिनकी तरफ से हम बेख़बर रहते हैं अक्सर।

-गरिमा श्रीवास्तव (भारत)

****

शोषण के विरुद्ध हस्तक्षेप

'हिन्दी चेतना' अब एक पत्रिका नहीं रही, वो समकालीन साहित्यिक पत्रिका के आंदोलन का जीवंत हिस्सा बन चुकी है। हिंदी की दुनिया में अनेक पत्रिकाएँ निकल रही हैं। मगर इक्का-दुक्का ही होंगी जो रचनाओं के चयन के मामले में इतनी सतर्क हैं। हिंदी चेतना में कहीं भी अश्लीलता को बढ़ावा नहीं देखा। प्रकाशित रचनाओं में जीवन-मूल्य नज़र आते हैं। कहीं कोई उपदेश नहीं है, सिर्फ कलात्मकता का तड़का भर है, तो दिशाहीनता भी नहीं है। जुलाई-सितम्बर 2015 अंक में हर बार की तरह आपका 'अंतिम पृष्ठ' पर छपने वाला 'अग्रलेख' मनुष्य के उन्नयन की दिशा में सार्थक पहल है। आपकी प्रज्ञाचक्षु मौसी ने जो बोध कथा बताई, वो हम सबके काम की है। शोषण के विरुद्ध हस्तक्षेप ज़रूरी है। और बड़ी चालाकी से भी आतताइयों से निपटना होगा। सभी रचनाओं पर लिखूँगा, तो एक लेख बन जायेगा, मगर कुछ रचनाओं पर बात ज़रूर करूँगा। अग्रज लेखक प्रताप सहगल ने समकालीन लेखन की दुनिया में बढ़ती भीड़ पर चिंता की है। प्रेम जनमेजय के साथ उनकी लम्बी बातचीत हम सबके लिए वैचारिक खाद है। साहित्य की अनेक विधाओं पर यह बातचीत इस अंक की बौद्धिक सामग्री है। ज़हीर क़ुरैशी की ग़ज़लें भी। गीताश्री की कहानी 'प्रश्न-कुंडली' मनोभावों की बेहतर ढंग से पकड़ने वाली है। सुधाकर अदीब का व्यंग्य, व्यंग्य कम, संस्मरण अधिक है, मगर रोचक है। आपकी पुस्तक (दस प्रतिनिधि कहानियाँ) पर पूजा प्रजापति की समीक्षा पढ़कर लिखी गयी समीक्षा है, वरना आजकल बिना पढ़े ही समीक्षा का चलन हो गया है, जिसमें लेखक की चर्चा कम होती है, समीक्षक अपनी बात ज़्यादा करने लगता है। 'कसाब गांधी एट यरवदा इन' मैंने भी पढ़ी है। इस पुस्तक की संतुलित समीक्षा की है वंदना गुप्ता ने। वन्दना ने ठीक ही लिखा है कि पंकज की अलग लेखन शैली उन्हें आज की नई पीढ़ी के लेखकों से अलग स्थान दिलाती है। पत्रिका की आपकी टीम कमाल की है और पंकज सुबीर जैसे मेरे अनुज बेहतर काम कर रहे हैं। उनके सहयोग से पत्रिका और निखर रही है। यह इसी तरह दिनोंदिन निखरती रहे और ख़ुशबू बिखेरती रहे।

-गिरीश पंकज (भारत)

****

'मोह-भंग' घर-घर की कहानी

'हिन्दी चेतना' का अप्रैल-जून अंक 2015 'ऑन लाइन' आते ही चाव से पढ़ना शुरू किया। माया एंजेलो के मार्मिक आरंभ से गौरव पूर्ण अंत की सफल जीवन गाथा, वंदना मुकेश की कहानी 'गॉड ब्लेस यू...' का अकेलापन कैसे मिस्टर हम्फ्री को तिल-तिल कर लील जाता है और महेंद्र दवेसर दीपक की कहानी 'शारदा' के बाँझपन के अभिशाप की कहानी है; जिसे दक्ष लेखक ने बख़ूबी गढ़कर पाठकों का दिल दहला दिया और अपनी छाप छोड़ दी।

वन्दना देव शुक्ल की कहानी 'मोह-भंग' आधुनिक जीवन में घर-घर की कहानी है। इस कहानी ने मेरे मन को रात-दिन उलझाए रखा और अभिव्यक्ति के लिए मुझे विवश किया।

भागते हुए, होड़ लेते हुए आगे बढ़ना और सफलता के शिखर तक पहुँचाना, मात्र नव युवक-युवतियों की ही कामना नहीं है, अपितु उनके माता-पिता का भी यही सपना होता है कि हमारा बच्चा अव्वल कहलाए और हमारा, घर-परिवार का नाम रौशन करे! माता-पिता अपना सर्वस्व न्योछावर करके उन्हें हर संभव सुविधाएँ प्रदान करते हुए, स्नेह से पालते और आनन्दित होते हैं। इनका देना और उनका पाना एक सहज सी आदत बन जाती है। जीवन के जाने किस मोड़ पर अनायास सब कुछ बदलने लगता है और उसकी टीस वे महसूस करते हैं।

लड़कपन में जब बच्चे आत्मनिर्भरता का प्रदर्शन करते हैं, तो हम उनकी सराहना करते हैं और जो भी उनके हित में है; वही राह दिखा कर अपने को सफल व संतुष्ट अनुभव करते हैं। अपनी मेहनत और अभिभावकों के स्नेहसिक्त सुरक्षित वातावरण में पल कर वे सफल, विवेकी और कर्त्तव्यनिष्ठ नागरिक बनते हैं। जब वे अपनी स्वतंत्र इच्छा और भावनानुसार अपना जीवन साथी चुनते हैं, निवास स्थान और व्यवसाय का निर्णय स्वयं लेते हैं, माता-पिता का दर्द यहीं से आरम्भ होता है। वे महसूस करने लगते हैं कि उनका बच्चों पर 'ग्रिप' ढीला पड़ता जा रहा है। इससे उनके अहम् को ठेस पहुँचती है। प्रायः वे बहुत सारे तर्क से अपने को समझाने का प्रयत्न भी करते हैं, पर हृदय में एक टीस बनी ही रहती है।

क्यों होता है ऐसा ? क्या ये हमारा व्यापारिक सौदा था, जिसमें धोखे और नुकसान का दुःख होता है ? बच्चों की दुनिया विस्तृत हो गई है, उनके जीवन में और भी रुचिकर लोग आ गए हैं, माता-पिता की महत्ता कम हो गई है। ऐसा कुछ नहीं है ! यह उनका भ्रम मात्र है। दोनों पक्षों को अपने अनकण्डीशनल लव पर विश्वास होता है और वे प्रायः लापरवाही का शिकार होते हैं। जितना प्रगाढ़ प्रेम, उतनी गहरी पीड़ा। सदियों से ऋषि-मुनि, ज्ञानी कहते आए हैं मोह सब दुखों की खान !!

Life is not a puzzle to be solved, but a mystery to be lives.

इस कहानी में मुझे जितनी पीड़ा प्रो. राकेश और उनकी संवेदनशील पत्नी की निराशा के लिए हुई, उतना ही कष्ट और दुविधा मुझे उनके दोनों बेटों, सौजन्य और सुशांत के लिए भी हुई, जो समय से जूझते, डूबते-उतरते अपनी नइया खे रहे हैं।

प्रोफ़ेसर साहेब के बच्चे उनकी भौतिक आवश्यकता पूरी करने के लिए हर समय तत्पर रहते हैं। पिताजी ने अमरीका आने की इच्छा प्रकट की तो रोशी ने कहा-'प्लान अच्छा है पापा', टिकट और वीज़ा का इंतज़ाम भी मुश्किल नहीं है। माता-पिता की अमरीकी विज़िट को रोशी ने नकारा नहीं था। उसका सोचने का ढंग फ़र्क़ था। यूएस में उसका अपना जीवन बहुत व्यस्त है, अतः वह अधिक समय नहीं दे पाएगा और माता-पिता बंधन और अकेलापन महसूस करेंगे। भारतीय जीवन की चहल-पहल यहाँ नहीं है। शायद रोशी ने मात्र सतर्क करना चाहा था। उसको क्या पता था कि माँ-बाप को अपने बच्चों के साहचर्य से समस्त सुख मिल जाएगा, इससे अधिक उनको और कुछ चाहिए ही नहीं था। प्रोफ़ेसर पिताजी ने समझा, बेटा बुलाना नहीं चाहता। कम्युनिकेशन गैप !! हमारी भारतीय परंपरा रही है कि हम हृदय से अधिक और मस्तिष्क से कम सोचते हैं। ज्ञान और भावना का मेल प्रायः कठिन होता है।

माता जी को निराशा की पीड़ा इतनी होती है कि वे रोशी और संजू को भूल जाना चाहती हैं ! आख़िर उनका अपराध क्या है ? समर्थ और होनहार वयस्क बेटों के भविष्य का निर्णय प्रोफ़ेसर साहेब और उनकी पत्नी ने उनसे पूछे बग़ैर ले लिया और मेरठ में नर्सिंग होम का प्लाट खरीद लिया ! यह सौजन्य और पत्नी सुजाता के सपने से बिलकुल भिन्न था। बड़े बेटे ने अपने मन से शादी करके माँ का दिल तोड़ा था। संजू ने मेरठ में न बसने का निर्णय ले कर एक बार फिर माँ का सपना बिखेर दिया, इगो कुचल दिया। यह है मात्र जनरेशन गैप ! यदि दो पीढ़ियों के सपने, उनके विचार एक से हों, तो कहना ही क्या ! पर बदलाव और प्रगति नियम है इस संसार का !! नदी सदा आगे ही बहती है, सजग, सहज, किलकित ! जीवन प्रवाह भी वैसा ही है। आप ईमानदारी से याद कीजिये, आपने अपने माता-पिता के लिए क्या किया या क्या कर रहे हैं ?

हॉस्टल जाते समय पापा के लम्बे 'वाक' और मम्मी के चश्मे की फ़िकर थी स्नेही बेटे को। विदेश गया तो अक्सर फ़ोन करता, पैसे भेजता। मनचाही शादी की, त्योहारों पर हो सका तो बीबी बच्चे को भारत लाया, दादा-दादी से मिलाने, स्काईप के जरिये पोते रोमिल से परिचय कराया और वीकेण्ड में दोनों भाइयों के परिवार साथ बिताते।

गर्व कीजिए अपने उन सुपूतों पर, जिन्होंने आपकी शिक्षा और साहचर्य से निर्विकार स्नेह और अपनत्व सीखा और बरता। आप के बेटे आत्मनिर्भर और प्रसन्न चित्त युवक हैं।

माता-पिता डेज़ी के साथ व्यस्त और प्रसन्न रहते हैं जानकर रोशी खुश हुआ, क्योंकि उनका स्वास्थ्य, सुरक्षा और मन बहलाव उसके लिए महत्त्व रखता है, उसे मानसिक शांति मिलेगी। माँ ने शायद उसको कुछ और ही समझा और दुःख पाया।

ज़रूरत पड़ने पर संजू ने माँ-बाप को बुलाया, क्योंकि आप हमेशा उनकी हर आवश्यकता, आशा और इच्छा को अपनी आवश्यकता से ऊपर रखते रहे हैं। उसने सीखा ही यही है आपसे। ज़रूरत पर आपको नहीं तो किसको पुकारेगा !

मुझे लग रहा है, मैं रोशी और संजू यानी सभी समकालीन पुत्रों की वकालत कर रही हूँ, जैसे उनकी तो कोई ग़लती है ही नहीं, बस आपके देखने और समझने का दोष है। उनके दोष में भी हमें अपनी हार दिखाई देती है, जो कम पीड़ा जनक नहीं होती। माता-पिता की निराशा और भी सघन इसलिए हो जाती है कि वे अपनी संतान को जन-साधारण से ऊपर समझते हैं और वैसे ही देखना चाहते हैं। रोशी और संजू ने कभी नहीं कहा कि वे पर्फेक्ट हैं और वे आपकी स्ट्रगल से अनभिज्ञ, अपना इम्पर्फेक्ट जीवन सानंद निर्वाह कर रहे हैं।

प्रोफ़ेसर साहेब, उतारिये गुलाबी ऐनक और लीजिए आनंद अपनी भरी-पूरी भाग्यशाली ज़िन्दगी का ! विलाप और दुःख करने को बहुत सी दारुण दशा है इस संसार में। ईश्वर के इस उपहार का व्यर्थ तिरस्कार मत कीजिए।

हमें मानना पड़ेगा कि हमारी संतान हमारी संपत्ति नहीं हैं, वे हम से उत्पन्न हुए हैं, पर हम से भिन्न हैं और अपने में पूर्ण हैं। वे स्वेच्छा से आए हैं और अपने हक़ से अपनी इच्छानुसार जीने के लिए स्वतंत्र हैं, हमें भी वही करना चाहिए।

अपनी पीढ़ी के स्वस्थ रहने और दीर्घायु को ईश्वर का आशीर्वाद समझें, अभिशाप नहीं। व्यक्तिगत शांति और फुलफिल्मेंट के लिए सब को अपना रास्ता ख़ुद ढूँढना होगा। न हम दूसरों से अपनी पूर्णता की अपेक्षा कर सकते हैं और न ही यह न्याय संगत होगा।

कहानी का अंत बहुत उपयुक्त है। जब प्रोफ़ेसर और उनकी पत्नी का मोह भंग हुआ, घर बैठे परमानन्द की प्राप्ति हुई।

संत कबीर की अमृत वाणी :

सुर नर मुनि औ देवता, सात द्वीप नौ खण्ड
ये सब ही भोगिहैं, देह धरे का दंड
देह धरे के दंड को भोगत हैं सब कोय
ज्ञानी भोगे ज्ञान से, अज्ञानी भोगे रोय।

-मीरा गोयल (अमेरिका)

****

'प्रश्न-कुंडली' संबंधों का चिट्ठा

'हिन्दी चेतना' के जुलाई 2015 अंक की पहली ही कहानी गीताश्री की 'प्रश्न-कुंडली' स्त्री-पुरुष के संबंधों का चिट्ठा है ; जहाँ पति-पत्नी में नहीं बनती तो वो ज्योतिष, टैरो रीडर आदि में उपाय खोजने चल देते हैं। कहानी ने पढ़ते ही कहा पाठक को 'कुछ कहो' और पाठक मन फ़ौरन कहने को विवश हो उठा।

शिवांगी एक ऐसी ही स्त्री है, जहाँ पति-पत्नी के सम्बन्ध टूटने की कगार पर हैं और वो उम्मीद का दामन थामे हैं कि शायद कोशिशों या उपायों से संबंध सुधर जाएँ और इसी आशा के चलते वो स्मिता से मिलने आती है; लेकिन यहाँ तो अपना भविष्य जानते-जानते वो टैरो रीडर के अतीत से जब परिचित होती है, तो समाधान उसकी आँख के सामने होता है..... जो यही दर्शा रहा है कि यदि हम ख़ुद ध्यान से सोचें तो किसी भी समस्या का समाधान हमारे सामने ही होता है। मगर उद्वेलित पल हमें इतना बेचैन किए रहते हैं कि हम ध्यान नहीं दे पाते। वहीं ये कहानी एक अहम मुद्दे पर प्रकाश डालती है, जो लेखिका ने बड़ी चतुराई से बुना है। स्मिता के लिए पति-पत्नी का संबंध एक बच्चे के खिलौने सरीखा है, एक पसंद नहीं आया तो दूसरा और दूसरे से नहीं निभी तो तीसरा, मानो विकल्पों के अलावा जीवन में और कुछ है ही नहीं यानि स्त्री को ज़रूरत है एक पुरुष की। विकल्प के रूप में फिर चाहे बार-बार बदलना ही क्यों न पड़े। मानों लेखिका कहना चाहती है कि स्त्री ने आधुनिकता का अर्थ सिर्फ इसी सन्दर्भ में समझा है कि ख़ुद को वस्तु बनाओ और बढ़ते जाओ, जो कभी इंसान को संतुष्टि नहीं दे सकता। जो एक समझौता भर हो सकता है मगर बेफ़िक्री नहीं और शिवांगी ने ये कहकर मानों स्मिता को ही आईना दिखा दिया। जब उसे समझ आ गई ये बात

कि जब हर मुमकिन कोशिश के बाद रिश्ता सहेजना संभव न हो तो ज़रूरी नहीं होता कि एक पुरुष के काँधे का सहारा लिया ही जाए बल्कि ख़ुद को इतना सशक्त बनाया जाए कि ज़रूरत ही न महसूस हो। न कि ख़ुद को खिलौना बना लिया जाए। शिवांगी जिसकी शादी को महज पाँच साल ही हुए हैं, एक समझदार स्त्री का प्रतिरूप है। कोशिशों की सीढ़ियाँ चढ़ने पर भी जब मुकाम नहीं मिलता और शक़ का शिकार होती रहती है, चाहती तो दूसरा विवाह कर सकती थी और आगे बढ़ सकती थी जैसा कि टैरो रीडर स्मिता कहती है। लेकिन वो एक मज़बूत संस्कारों वाली स्त्री है और सही और ग़लत में भी फ़र्क़ करना समझती है और समय आने पर उचित निर्णय लेने में भी सक्षम है; एक ऐसे पात्र के रूप में उभरी है। कहानी का शिल्प, बुनावट और कसावट सब पाठक को बाँधे रखने में सक्षम हैं। लेखिका ने कहानी के माध्यम से मानों यही सन्देश दिया है, आज की पढ़ी-लिखी स्त्री को, कि ख़ुद को वस्तु बनाने से बेहतर है सही दिशा में सही निर्णय लेना; जो तुम्हारे भविष्य निर्माण में सहायक सिद्ध होगा, वरना पुरुष रुपी बैसाखी के सहारे जीने वालों की कोई मंज़िल नहीं हुआ करती। कोशिश करो संबंध सँभल जाएँ, न सँभलें तो सारा संसार तुम्हारा है। एक व्यापक आकाश तुम्हारी प्रतीक्षा में है, बस ज़रूरत है आत्मचिंतन और मनन कर सही निर्णय लेने की। लेखिका की कहानी सोचने पर विवश करते हुए एक दिशा भी देती है, जो पाठक के मुख पर मुस्कान उभार देती है।

दूसरी कहानी नीलम मलकानिया की 'काँच की दीवार' एक यौन शोषण की शिकार मालती की कहानी है; जो अब एक टीवी शो में महिलाओं के मुद्दों और यौन शोषण के शिकारों को बेनक़ाब करती है। देखने में साधारण होते हुए भी इतनी गहराई में उतरी है; जहाँ लेखिका ख़ुद कुछ नहीं कह रही, लेकिन सन्दर्भ सोचने पर विवश करता है पाठक को, कि एक बार बचपन में जब कोई लड़की यौन शोषण का शिकार होती है, तो सारी ज़िन्दगी उस भयावह परिस्थिति से बाहर नहीं निकल पाती। बेशक ख़ुद को इतना सक्षम बना ले कि सारे जहान से लड़ सके। दूसरों को इन्साफ़ दिला सके। मगर कभी ख़ुद उस तकलीफ़ से बाहर नहीं आ पाती। एक लड़की की मनःस्थिति को शायद कोई नहीं समझ सकता, जब तक कोई उससे गुज़रा न हो और यहाँ मालती जो जाने कितने ही लोगों को इन्साफ़ दिला चुकी ख़ुद के आगे हार जाती है। किसी पर विश्वास नहीं कर सकती, फिर चाहे कोई उसे कितना ही चाहता हो, वह भी ऐसा प्रेम जिसके लिए कोई भी लड़की तरसती है उम्र भर। वह भी मिल रहा हो और वो उसे ठुकराए; क्योंकि कहीं न कहीं वो ज़िन्दगी भर उस हादसे से उभरी ही नहीं होती और इसके लिए ज़रूरी होता है अपनों का साथ। जो उसके बारे में सोच सकें, उसे समझ सकें, उसके आंतरिक उद्वेलन और आंतरिक पीड़ा से उसे मुक्त कर सकें। तभी वो लड़कियाँ अपनी ज़िन्दगी में आगे बढ़ पाती हैं, ख़ास तौर से रिश्तों में, वरना तो उनका रिश्तों जैसी परंपरा से विश्वास ही उठा चुका होता है। यहाँ सुहास ही है, जो उसके लिए सब कुछ कर सकता है। उसे ही माध्यम बनाया गया है कि यौन शोषण की शिकार लड़कियाँ तभी अपने आंतरिक द्वन्द्व और पीड़ा से बाहर आ सकती हैं; जब उनके मुजरिम को सज़ा मिले और वो सर उठाकर समाज में जी सकें, न कि यौन शोषण का शिकार होने पर वो ही दोषी ठहराई जाएँ। ज़रूरी है इस काँच की दीवार का गिरना, ताकि वो भी एक सहज जीवन जी सकें। लेखिका का लेखन-कौशल चमत्कृत करता है; क्योंकि वो कहती कुछ नहीं, फिर भी जो कहना चाहती हैं वो पाठक तक पहुँचता ज़रूर है और वो सोचने को मजबूर हो जाता है। लेखिका बधाई की पात्र हैं, जो अदृश्य को दृश्यमान करने में सक्षम हैं।

यह पत्रिका के संपादकों का कमाल ही है; जो ऐसी कहानियाँ चुनीं और पाठक विवश हो उठा कहने को। इस बार कहानियाँ बहुत सोच समझ कर चुनी गई हैं; जिसके लिए संपादक बधाई के पात्र हैं।

-वंदना गुप्ता (भारत)

****

आख़िरी पन्ना मन को छू गया

हिन्दी चेतना का जुलाई-सितम्बर 2015 का अंक देखा। मुखपृष्ठ पर चेतना जगाती पेंटिंग, और अंक की तमाम स्तरीय रचनाओं के लिये बधाई। खासकर आपका ज्वलंत आख़िरी पन्ना 'हमारी गर्दनें और क़लम दोनों झुकी हुई हैं।' मन को छू गया। सचमुच कहने सुनने से रिश्ते मज़बूत होते हैं। पंकज सुबीर की किताब कसाब.गाँधी .....पर वन्दना गुप्ता और पवन कुमार की 'पाल ले एक रोग नादाँ' अच्छी समीक्षाएँ है। अंक के लिये पुनः बधाई।

- संतोष श्रीवास्तव (भारत)

****

'प्रश्न-कुंडली' बहुत अच्छी लगी

जुलाई-सितंबर 2015 अंक की गीताश्री की कहानी 'प्रश्न-कुंडली' बहुत अच्छी लगी। सबसे अच्छी बात यह कि इस कहानी में स्त्रियाँ ख़ुद नारी विमर्श के लिए उत्सुक दिखाई देती हैं। हिन्दी कहानी में नारी विमर्श की बहुत चर्चा है, जिसमें पुरुष वर्ग अधिक सक्रिय है। किंतु इन पुरुष कहानीकारों की व्यक्तिगत ज़िन्दगी में स्त्रियों के प्रति कितना सम्मान है, उसकी रिपोर्टें पढ़कर मन विकृत हो जाता है। इस कहानी में गीताश्री ने नारी विमर्श में स्त्रियों को शामिल कर उनके भीतर के दमित भावों को उनके ही माध्यम से आने दिया है। स्त्रियों के भावों को पढ़ना और बात है और उनका स्वयं का, अपने भीतर की कुंठा, भय, संत्रास आदि का अनुभूत कुछ और ही होगा। इससे वे नारी विमर्श में स्वयं को खोलने की उलझन से दूर हो सकेंगीं।

-शेषनाथ प्रसाद (भारत)

****

सम्पादकीय बड़े अच्छे लगे

हिन्दी चेतना के अप्रैल और जुलाई 2015 दोनों अंक पढ़े। आपके सम्पादकीय बड़े अच्छे लगे। आपके विचारों से मैं पूरी तरह सहमत हूँ। भारतीय अंग्रेज़ी-दाँ ऐसा लगता है कि हिन्दी को किसी योग्य भाषा मानने को ही तैयार नहीं हैं। हिन्दी को अंग्रेज़ी लिपि में लिखना अधिक प्रचलित होता जा रहा है, जबकि हिन्दी उन्नत भाषा है, उसकी अपनी देवनागरी लिपि है। पता नहीं भारतवासी कब अंग्रेज़ी की दासता से मुक्त होंगे।

-राज कुमारी सिन्हा (अमेरिका)

****

महत्त्वपूर्ण सामग्री

समय रहते आपकी पत्रिका का जुलाई 2015 अंक प्राप्त हुआ। एक बार में ही पत्रिका में प्रकाशित सभी रचनाओं से गुज़रता चला गया। रचनाएँ स्तरीय व पाठक को बाँधे रखने में सक्षम हैं। इतनी महत्त्वपूर्ण सामग्री को पढ़वाने के लिए आभारी हूँ तथा आपको बधाई देता हूँ।

-अशोक आंद्रे (भारत)

****

भव्य एवं शालीन कार्यक्रम

'हिन्दी चेतना'का 67 अंक मिलते ही इसे पढ़ने बैठ गई। सब से पहले सम्पादकीय में 'हिन्दी को रोमन लिपि' में लिखने के चेतन भगत जी के सुझाव को पढ़ कर मन बहुत खिन्न हुआ। लिपि तो भाषा का शरीर है, शरीर के बिना तो आत्मा अमूर्त होगी ना। ऐसी सोच ने ही मन को झझकोर दिया।

'आख़िरी पन्ना' में सुधा जी ने भारत की न्याय प्रणाली में न्याय में होते वर्षों के विलम्ब पर जो प्रश्न उठाए हैं; वो प्रत्येक प्रबुद्ध भारतीय के मन में उठते प्रश्नों का ही प्रतिबिम्ब हैं। इस ज्वलंत मुद्दे को आम जनता तक लाने के लिए हर लेखक को क़लम उठानी ही पड़ेगी। पत्रिका में प्रस्तुत प्रत्येक कहानी अपने में विशिष्ट है अतः सभी कहानीकार बधाई के पात्र हैं। डॉ. गिरिराज शरण जी के निबन्ध में प्रस्तुत 'पगडण्डी से पुस्तकालय' के मार्ग पर चलना हमें भी अच्छा लगा। इसके साथ ही कविताएँ, हाइकु, ताँका, माहिया, दोहे, नवगीत इस पत्रिका को एक वृहत फ़लक प्रदान करते हैं। पुस्तक समीक्षाएँ, पाठक को पुस्तक पढ़ने को लालायित करती हैं। अंत में सम्पादक मंडल को ढेर सी बधाई और शुभकामनाएँ।

'हिन्दी चेतना' एवं 'ढींगरा फ़ाउण्डेशन' की ओर से मोरिंस्विल्ल, नॉर्थ कैरोलाइना में सम्पन्न हुए सम्मान समारोह में भागीदारी करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इस भव्य एवं शालीन कार्यक्रम की प्रस्तुति हेतु सम्मानित साहित्यकार, हिन्दी चेतना के संरक्षक श्री श्याम त्रिपाठी जी, सम्पादक मंडल एवं ढींगरा फ़ाउण्डेशन के श्री ओम जी एवं सुधा जी बधाई के पात्र हैं। सम्मान समारोह में मोरिंस्विल्ल के साहित्य प्रेमी तथा स्थानीय मेयर की उपस्थिति ने इस कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई। पंकज सुबीर जी के कुशल संचालन ने इसे और रुचिकर कर दिया। अंत में सभी सम्मानित साहित्यकारों के उद्गार सुन कर उनके प्रति आदर और मान के भाव उभरने तो स्वाभाविक ही थे। हिन्दी भाषा, साहित्य और संस्कृति के पथ पर ऐसे समारोह एक प्रकाश स्तम्भ की तरह सदैव दैदीप्यमान रहेंगे और अन्य लेखकों को भी बेहतर लेखन के लिए प्रेरित करते रहेंगे। आप सब को बधाई और साधुवाद।

-शशि पाधा (अमेरिका)

****

सारी सामग्री रोचक व सारगर्भित

'हिन्दी चेतना' का नया अंक मिला। पत्रिका की सारी सामग्री रोचक व सारगर्भित लगी। पढ़ने में बड़ा आनन्द आया। मैं हिन्दी चेतना के विकास की आरम्भ से साक्षी रही हूँ। शिशु की तरह घुटनों पर चलना शुरू करके आज यह पत्रिका सुंदर कलेवर व स्तरीय रचनाएँ लेकर, वयस्क रूप में हमारे सामने खड़ी है। इसके द्वारा कैनेडा में हिन्दी के उत्थान व प्रसार के लिए आपने जो प्रयत्न किया है, वह सचमुच बहुत प्रशंसनीय है। इसके लिए मैं आपको हृदय से बधाई देती हूँ।

यह पत्र मैं विशेष रूप से आपके सम्पादकीय को पढ़कर लिख रही हूँ। इसमें आपने जिस मानवीय समस्या के विषय में लिखा है, एक शिक्षिका होने के नाते मैं उससे परिचित हूँ। यहाँ किसी भी प्रकार की शारीरिक असफलता के लिए सरकार प्रवधान रखती है।

मेरी कक्षा में, एक समय, एक छह-सात साल का बच्चा था; जो आंशिक रूप से बधिर था। उसके कारण, आस-पास के शोर को दबाने के लिए कक्षा में मोटा कारपेट लगवाया गया। यह कारपेट उसके साथ-साथ उन कक्षाओं में भी भेजा जाता था; जिससे मेरी आवाज़ तेज़ होकर उस तक पहुँच सके। इन सब सुविधाओं के कारण वह बच्चा कक्षा का काम सुचारू रूप से कर लेता था। न कोई उस पर हँसता था, न मज़ाक बनाता था। उसकी उन्नति व आत्म विश्वास में कोई कमी मैंने नहीं देखी।

मैं नहीं जानती कि भारत के विद्यालयों ने इस दिशा में कितनी उन्नति की है। आशा करती हूँ कि यदि अभी नहीं तो निकट भविष्य में इस समस्या पर ध्यान दिया जाएगा वरना कालान्तर में मिलती रहेगी। इससे पहले भी मैं 'हिन्दी चेतना' की उपलब्धियों की चर्चा कर चुकी हूँ। डॉ. कामिल बुल्के के विषय में 'हिन्दी चेतना' के द्वारा जो सामग्री हम तक पहुँचाई गई थी, उसके लिए आप बधाई के पात्र हैं। ढींगरा फ़ाउण्डेशन हिन्दी चेतना द्वारा साहित्यकारों को दिए जाने वाले सम्मानों की घोषणा देखकर बहुत अच्छा लगा। उषा प्रियंवदा जी मेरे समय में प्रयाग विश्वविद्यालय में थीं। पुरस्कृत साहित्यकारों में उनका नाम देखकर बहुत अच्छा लगा।

आपके सम्पादकीय में डॉ. रघुवंश के विषय में पढ़ा। उनसे हमारे बहुत निकट के पारिवारिक सम्बन्ध रहे हैं। उनकी पंगुता केवल दोनों हाथों की थी। वे सदा भूमि पर बैठकर लिखते थे-मोती जैसे अक्षर। उनमें आत्मविश्वास की कोई कमी नहीं थी। वे कठिन श्रम करने में समर्थ थे। प्रयाग विश्वविद्यालय से हिन्दी में 'डॉक्टरेट' करने के बाद हिन्दी विभाग में उनकी नियुक्ति का प्रश्न उठा। शैक्षिक रूप से पूरी तरह योग्य होने के बावजूद उनकी नियुक्ति पर आपत्ति की गई। एक शिक्षक को बहुधा ब्लैक बोर्ड पर लिखना होता है, यह डॉ. रघुवंश कैसे कर सकेंगे। यह प्रश्न उठाया गया।

मुझे इस बात का गर्व है कि उस समय के वरिष्ठ आचार्यों ने, जिनमें मेरे श्वसुर डॉ. धीरेन्द्र वर्मा (अध्यक्ष हिन्दी विभाग), मेरे पिता (डॉ. बाबूराम सक्सेना) अध्यक्ष संस्कृत विभाग भी सम्मिलित थे। इन सभी ने उनका समर्थन किया। ये लोग उस समय विश्व विद्यालय की कार्यकारिणी समिति के सदस्य थे। इलाहाबाद के सभी साहित्यकारों ने व्यक्तिगत रूप से अपना समर्थन दिया व डॉ.रघुवंश की नियुक्ति हुई। उनकी उपलब्धियों की चर्चा आपने की है। डॉ. रघुवंश प्रयाग विश्वविद्यालय से ही रिटायर हुए। उनकी पत्नी सावित्री जी ने उनका पूर्ण रूप से सहयोग दिया। आज उनकी चारों संतानें अच्छे पदों पर आसीन हैं।

आधी सदी से काफी पहले प्रयाग विश्वविद्यालय ने जो ठोस क़दम इस दिशा में उठाया था, उसकी मैं मन से प्रशंसा करती हूँ।

-दीप्ती कुमार 'अचला' (कैनेडा)

****

कहानियाँ पसंद आईं

हिन्दी चेतना का जुलाई-सितंबर 2015 अंक पढ़ा। अनीता ललित की लघुकथा 'ख़ास आपके लिए' पसंद आई। आधुनिक नारी की स्वछन्द प्रवृत्ति जो आज की कहानी में दी जाती है, के विपरीत गीताश्री की कहानी प्रश्न-कुंडली का अंत था। स्त्री स्वयं में मज़बूत होती है। वह अपना जीवन अपने बूते पर जी सकती है। हर बार पुरुष की ओर देखने की ज़रूरत भी नहीं होती। इसे जब तक नारी स्वयं नहीं समझेगी, वह अपनी शक्ति से भी अनभिज्ञ रहेगी। नीलम मलकानिया की कहानी का विषय हर दूसरी तीसरी कहानी में मिलता है, पर नीलम जी के शिल्प कौशल और कलात्मक अभिव्यक्ति की दाद दूँगा। कहानी गहरी छाप छोड़ कर सोचने पर मजबूर कर गई।

शोषण करने वाले को सज़ा तो मिलनी चाहिए। उसे किसी भी कीमत पर छोड़ना नहीं चाहिए। अगर शोषक घर का सदस्य है तो अक्सर छूट जाता है। हमारे समाज और परिवारों की सोच ही ऐसी है, लड़की के बारे में, लड़की के मानसिक आघात के बारे में तो सोचा ही नहीं जाता, बस उसकी इज़्ज़त की ख़ातिर पूरा किस्सा ही दबा दिया जाता है। लड़की से उम्मीद की जाती है, वह सब कुछ भूल जाए। इस कहानी को पढ़ने के बाद मन में यह उभरा है कि वे लड़कियाँ उम्र भर कितनी पीड़ा सहती होंगी; जो अपनों द्वारा शोषित होती हैं और शोषक को कुछ नहीं कहा गया होता। निस्संदेह ऐसों की शादी भी हो जाती है और बच्चे भी। उल्टा लड़कियों को ही चुप रहने की सज़ा दी जाती है। त्रासद स्थति से गुज़रती होंगी मासूम पीड़ित लड़कियाँ। जिंगल की मानसिक स्थिति के मार्मिक वर्णन में लेखिका सफल रही है। उसने हृदय को छुआ। अंत में

लेखिका ने जो हल दिया, वैसा ही होना चाहिए। चेहरों से नक़ाब उतरने चाहिए।

-मनोज कुमार त्रिखा (भारत)

****

'कहानी कला दौड़ रही है।'

'हिन्दी चेतना' का अप्रैल 2015 अंक देखा। कहानियों से जड़ित एवं सुसज्जित। विकसता हुआ 'हिन्दी चेतना' का रूप देखकर अच्छा लगता है कि प्रवासी कह कर-हाशिये पर डाले जाने वाले साहित्य की गम्भीरता को आँका जा रहा है; क्योंकि हिन्दी चेतना उनका परचम लहरा रही है। लम्बी-चौड़ी प्रतिक्रियाएँ इस तथ्य की साक्षी हैं, कि कहीं इसकी पैठ गहरी हो रही है। 'एक थी माया' गरिमा श्रीवास्तव का एक सार गर्भित लेख है पर प्रवासी साहित्य की अवधारणा और स्त्री कथाकार तथा अमेरिका में बसे प्रवासी और उनकी काव्य साधना जैसे लेख कुछ अधूरे और अपरिपक्व लगे। कहानियों का चुनाव सधा हुआ और परिपक्व लगा। सब कहानियों पर टिप्पणी देना कठिन होगा। इसलिए एक वाक्य-'कहानी कला दौड़ रही है।' साधुवाद।

जुलाई अंक भी आ गया है। वह भी अपनी परिपक्वता दर्शा रहा है। सुधा अरोड़ा के 'एसिड अटैक और प्रेम के प्रति हिंसा' ने ध्यान खींचा और उसकी गहराई ने छुआ भी। कहानियों में एक ही कहानी पढ़ पाई हूँ, 'प्रश्न-कुंडली' और अटक गई स्वयं प्रश्नों में। नए ढंग से ज़िन्दगी के संबंधों और गुंजल्कों को उकेरा गया है; जो अपना सिर उठाकर जीवन भर झुकाए एवं दबाए रखते हैं। सुधा जी का आख़िरी पन्ना मथ गया। पत्रिका की इस सुघड़ प्रस्तुति के लिए संपादक मंडल बधाई का पात्र है।

-सुदर्शन प्रियदर्शिनी (अमेरिका)

****

लघुकथा 'ख़ास आपके लिए' बहुत ख़ास

हिन्दी चेतना के जुलाई-सितंबर 2015 अंक में अनीता ललित की लघुकथा 'ख़ास आपके लिए' बहुत दिनों बाद पढ़ी गई कोई बहुत अच्छी लघुकथा। छोटे से स्पेस में समग्रता के साथ लिखे जाने की लघुकथा की परिभाषा को पूरी तरह से निभाती है। वर्तमान पर सटीक व्यंग्य। बहुत दिनों तक याद रहेगी यह लघुकथा।

-पंकज सुबीर (भारत)

****

लेखकों से अनुरोध

बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फाइल अथवा वर्ड की फाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीऍफ़ या स्कैन की हुई जेपीजी फ़ाइल में नहीं भेजें। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ईमेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। चित्र की गुणवत्ता अच्छी हो तथा चित्र को अपने नाम से भेजें। पुस्तक समीक्षा के साथ पुस्तक आवरण का चित्र, रचनाकार का चित्र अवश्य भेजें। **-सम्पादक**

सूचना

'हिन्दी चेतना' पत्रिका अब कैनेडा के साथ-साथ भारत से भी प्रकाशित हो रही है। पत्रिका के सदस्य बनना चाहते हैं तो संपर्क करें-

रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु'
मोबाइल : 9313727493
पंकज सुबीर
मोबाइल : 9977855399

Hindi Pracharni Sabha

(Non-Profit Charitable Organization)
Hindi Pracharini Sabha & Hindi Chetna ID No. 84016 0410 RR0001
'For Donation and Life Membership
we will provide a Tax Receipt'
Annual Subscription: $25.00 Canada and U.S.A.
Life Membership: $200.00
Donation: $
Method of Payment: Cheque, payable to "Hindi Pracharni Sabha"

सदस्यता शुल्क (भारत में)
वार्षिक : 200 रुपये
दो वर्ष : 400 रुपये
पाँच वर्ष : 1000 रुपये
आजीवन : 3000 रुपये

Contact in Canada:
Hindi Pracharni Sabha
6 Larksmere Court
Markham,
Ontario L3R 3R1
Canada
(905)-475-7165
Fax: (905)-475-8667
e-mail: hindichetna@hotmail.com

Contact in USA:
Dr. Sudha Om Dhingra
101 Guymon Court
Morrisville,
North Carolina
NC27560
USA
(919)-678-9056
e-mail: sudhadrishti@gmail.com

Contact in India:
Pankaj Subeer
P.C. Lab
Samrat Complex Basement
Opp. Bus Stand
Sehore -466001, M.P. India
Phone: 07562-405545
Mobile: 09977855399
e-mail: subeerin@gmail.com

चाहत की आहट

पुष्पा सक्सेना

सियाटेल, अमेरिका में रहने वालीं पुष्पा सक्सेना के देवयानी, वह साँवली लड़की, रिचा, लौट आओ तुम, बाँहों में आकाश (उपन्यास) हैं, उसके हिस्से का पुरुष, पीले गुलाबों के साथ एक रात, उसका सच, सूर्यास्त के बाद, एक नया गुलाब, अलविदा, प्यार के नाम, वैलेंटाइंस डे, प्यार की शर्त, तुम्हें पाकर, मीत मेरे और अन्य कहानियाँ (कहानी संग्रह) हैं, अनारकली का चुनाव, पत्नी हो तो ऐसी(नाटक संग्रह) हैं। सात-महक, माटी के तारे, नन्हें इंद्र धनुष, अनोखा रिश्ता हिन्दी, अनोखा रिश्ता मराठी, अनोखा रिश्ता पंजाबी, A bond of love English (बाल साहित्य)। पुष्पा जी की भारत तथा अमरीका की समस्त स्तरीय पत्रिकाओं में 150 से अधिक कहानियाँ प्रकाशित हैं। कई सम्मानों से सम्मानित पुष्पा सक्सेना को हाल ही में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का प्रवासी भारतीय हिन्दी भूषण सम्मान से सम्मानित किया गया है।
Email: pushpasaxena@hotmail.com
सम्पर्क:13819 NE 37TH PL, Bellevue, WA 98005,

मेक्सिको का काबो सागर-तट सैलानियों के हास-उल्लास से गुलज़ार था। चारों ओर बिखरी ख़ुशी के साथ सागर की लहरें भी अठखेलियाँ करती लग रही थीं। सागर के वक्ष पर तैरते बड़े-बच्चे सब लहरों पर चढ़ कर उन्हें पराजित करने का प्रयास कर रहे थे। ऊपर चमकते सूर्य की रश्मियाँ रेत को शीशे सा चमका रही थीं। कुछ सैलानी सन टैनिंग के लिए आँखों पर काला चश्मा लगाए धूप में लेटे हुए धूप की उष्णता का मज़ा ले रहे थे।

उस कोलाहल से दूर एक युवक तन्मयता से अपने गिटार पर मीठी धुन बजा रहा था। कुछ सैलानी उसके आसपास जमा थे, पर उनसे निर्लिप्त वह अपनी दुनिया में मस्त था। हाथ में चप्पल उठाए रेत पर चलती क्रिस्टीना भी वहाँ पहुँच कर रुक गई। गिटार की मीठी धुन ने उसे बाँध सा लिया। युवक के सामने बैठी क्रिस्टीना मन्त्र-मुग्ध युवक को देखती रह गई। कुछ देर बाद अपना गिटार रख युवक ने चारों ओर खड़े लोगों पर नज़र दौडाई थी। हलकी सी मुस्कान उसके चहरे को और भी कमनीय बना गई।

'क्या तुम सैलानी हो और यहाँ पैसों के लिए गिटार बजाते हो?' अचानक क्रिस्टीना पूछ बैठी।

'मेक्सिको मेरा देश है और गिटार मेरा सबसे अच्छा दोस्त है। पैसों के लिए नहीं, अपनी ख़ुशी के लिए गिटार बजाता हूँ। क्या आपको सागर की लहरों का संगीत नहीं सुनाई देता? अक्सर मुझे ये लहरें मेरी धुन के साथ गीत गाती लगती हैं।' मुस्कुरा कर युवक ने जवाब दिया।

'शायद तुम ठीक कह रहे हो। तुम्हारा नाम क्या है?' विस्मित क्रिस्टीना ने जानना चाहा।

'विक्टर, मेरा ये नाम पापा के एक दोस्त ने दिया था। उसे मुझमें कुछ ख़ास दिखा होगा।' वह मुस्कुराया।

'मेरा नाम नहीं जानना चाहोगे? मेरा नाम क्रिस्टीना है, पर सब मुझे टीना पुकारते हैं।' पूछे न जाने पर भी न जाने क्यों क्रिस्टीना को अपना नाम बताना ज़रूरी लगा।

'टीना नाम ज़्यादा अच्छा और कहने में आसान है।' इतना कहता हुए अपने गिटार को कंधे पर टाँग कर विक्टर खड़ा हो गया।

'कल फिर यहाँ आओगे?' टीना का जवाब अनुत्तरित ही रहा और वह चला गया।

दूसरे दिन टीना फिर उसी जगह जा पहुँची; जहाँ एक दिन पहले विक्टर गिटार बजा रहा था। विक्टर को न देख टीना निराश सी हो उठी। तभी उसे याद आया कल उसी जगह एक औरत सीपी की मालाएँ बना रही थी। आज भी वह औरत तन्मयता से माला पिरो रही थी। एक-दो स्त्रियाँ उसके पास जमा थीं।

'क्या आप जानती हैं वो गिटार वाला आज आएगा या नहीं?'

'उसका कोई ठिकाना नहीं है, कब कहाँ जाएगा; वो खुद नहीं जानता।' हाथ रोक स्त्री ने जवाब दिया।

उस औरत की बात ख़त्म होते-होते कंधे पर गिटार लटकाए विक्टर आ पहुँचा। टीना का चेहरा ख़ुशी से खिल उठा। टीना पर एक हल्की नज़र डाल विक्टर आराम से साथ लाई फोल्डिंग चेयर खोल कर बैठ गया। कंधे से गिटार उतार सुर ठीक से मिलाने के बाद एक मीठी धुन हवा में बहने लगी। क्रिस्टीना जैसे उस धुन पर बेसुध-सी बैठी रह गई। एक के बाद एक और धुन सुनती क्रिस्टीना को लगता वो धुनें कभी ख़त्म न हों। रात का अँधेरा घिरता आ रहा था, अब सैलानी अपने-अपने होटल या ठहरने के स्थानों को जाने लगे थे। दिन के समय का मोहक सागर अँधेरे में भय-सा उत्पन्न कर रहा था।

'आपको क्या वापस नहीं जाना है?' अचानक विक्टर ने क्रिस्टीना से पूछा।

'आप क्या कल भी यहाँ आएँगे, अगर कहीं और जाएँ तो बता दीजिए?'

'किसी अन्जान इंसान से परिचय बढ़ाने की बात तो नहीं सोच रही है?'

'जी नहीं, मुझे आपके संगीत से प्यार हो गया है। काश मैं भी ऐसे ही गिटार बजा सकती।'

'किसी भी इंसान या किसी चीज़ से प्यार करने का अंजाम अच्छा नहीं होता, उससे सिर्फ धोखा ही मिलता है। बहुत देर हो गई आप को जाना चाहिए।' अचानक उसके चहरे पर उदासी की छाया घिर आई।

'क्या अपने गिटार से प्यार के बारे में भी आप ऐसा ही सोचते हैं?' क्रिस्टीना पूछ बैठी।

'गिटार तो मेरी आत्मा है, उससे अलग हो कर मैं जीवित नहीं रह सकूँगा।' इतना कह कर वह चला गया।

अगले दो दिनों में क्रिस्टीना जैसे गिटार से निकली धुनों के पीछे दीवानी हो उठी थी। उसे दिन में सागर में

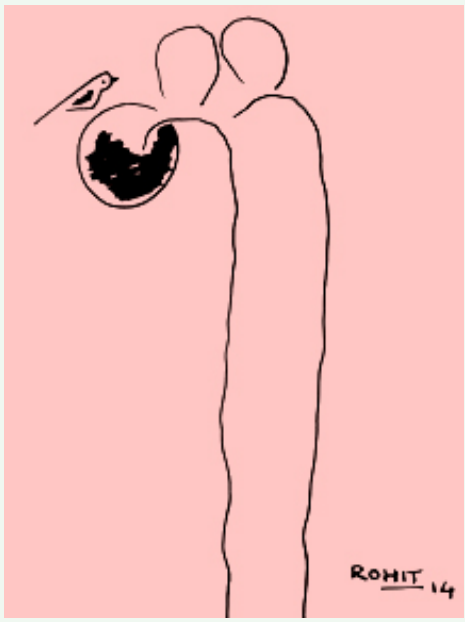

तैरने या लहरों से खेलने से ज़्यादा शाम का इंतज़ार रहता, जब वह विक्टर के गिटार की धुन पर मन्त्रबद्ध सी बैठी रह जाती। वह मेक्सिको सिर्फ एक सप्ताह के लिए आई थी, पर अब उसे वापस लौटने की जल्दी नहीं रह गई थी। यह सच था, उसे शुरू से संगीत से प्यार था, पर ऐसी दीवानगी पहली बार हुई थी।

क्रिस्टीना सोच में पड़ गई, कहीं उसे संगीत से ज़्यादा विक्टर से तो लगाव नहीं हो गया है। विक्टर के चहरे पर एक अजीब कशिश थी; जो किसी को भी आकर्षित कर ले।

अमरीका में इक्कीस वर्ष की आयु तक पहुँचने के बहुत पहले ज़्यादातर लड़कियों के कई बाय-फ्रेंड होना आम बात होती है, पर अपनी समस्याओं से जूझती क्रिस्टीना के पास अपने लिए समय ही नहीं था। ऐसा नहीं कि लड़कों ने उसकी ओर दोस्ती का हाथ नहीं बढाया, पर क्रिस्टीना ने उन्हें अनदेखा कर दिया। बचपन की यादों में एक बूढ़ी दादी ही उसके साथ थी। माँ-बाप एक एक्सीडेंट में उसे दादी के सहारे छोड़ इस दुनिया से जा चुके थे।

दादी ने उसे प्यार से ज़रूर पाला, पर उसके साधन बहुत सीमित थे। क्रिस्टीना समझ गई थी, उसकी स्थिति दूसरी संपन्न लड़कियों से अलग थी। हाई स्कूल में पढ़ती क्रिस्टीना ने छोटे-मोटे काम कर के दादी की सहायता करनी शुरू की थी। अचानक जब वही दादी लकवे का शिकार हो कर बिस्तर पर पड़ गई, तो क्रिस्टीना ने सब कुछ भुला कर दादी की सेवा के साथ घर की भी ज़िम्मेदारी उठा ली थी। दादी की सेवा के लिए उसने फिज़िकल थेरेपी की ट्रेनिंग लेनी शुरू की थी। उसके घर के पास मैडम जूलिएट का म्यूज़िक क्लास चलता था। वहाँ से आते संगीत की लहरें कुछ समय को क्रिस्टीना को उसके दुःख भुला, किसी और दुनिया में ले जाती थीं। अनजाने ही वह संगीत जैसे उसकी नीरस ज़िंदगी में खुशी के रंग भर जाता था।

एक महीने पहले दादी ने इस दुनिया से विदा ले कर क्रिस्टीना को अकेला कर दिया था। दादी की मृत्यु के कुछ दिनों बाद क्रिस्टीना को बताया गया कि दादी की मृत्योपरांत उसके जीवन-बीमा की भारी धन राशि की क्रिस्टीना अकेली अधिकारिणी है। उसे पता भी नहीं था, दादी उसके भविष्य के लिए भी इंतज़ाम कर गई थी। थकान से बोझिल मन को शान्ति देने के ख़्याल से क्रिस्टीना मेक्सिको आई थी। यहाँ विक्टर के गिटार की धुनों ने उसे जैसे नई ख़ुशी दे डाली थीं।

पिछले कुछ दिनों से विक्टर उसे कहीं न कहीं मिल जाता था, पर आज दो दिनों से उसका कहीं पता नहीं था। क्रिस्टीना बेचैन हो उठी। उसका पता जानने के लिए कुछ लोगों से पूछने पर बताया गया, वह एक स्कूल में बच्चों को गिटार सिखाता है। स्कूल से विक्टर का पता मिल जाने पर क्रिस्टीना उसके एक कमरे वाले घर जा पहुँची थी। अस्त-व्यस्त कमरे में एक कोने में मेज़ पर एक हीटर और कुछ बर्तन रखे थे। खिड़की के पास बेड पर आँखें मूंदे क्लांत सा विक्टर लेटा था। पाँव की आहट पर आँखें खोली थीं। क्रिस्टीना को देख कर चौंक गया। अस्फुट स्वर में कहा था-

'तुम यहाँ, कैसे, क्यों?'

'दो दिन से देखा नहीं तो मिलने आ गई। तुम्हारे गिटार की आदत हो गई है, पर ये नहीं पता था कि तुम बीमार हो।'

'मैने कहा था, किसी भी चीज़ से इस हद तक लगाव होने का अंजाम ठीक नहीं होता। सच कहो, क्या ये दीवानगी सिर्फ इस गिटार के लिए है या कोई और बात है।' सवालिया निगाह क्रिस्टीना पर गड़ गई थी।

'मुझे ख़ुद नहीं पता, दो दिनों से मैं इस कदर बेचैन क्यों थी, तुम्हीं बताओ विक्टर ऐसा क्यों हुआ। इसके पहले मुझे ऐसी बेचैनी कभी नहीं हुई।' मासूमियत से क्रिस्टीना ने कहा।

'मेरी जो समझ में आ रहा है वो बेहद ख़तरनाक बात हो सकती है।' गंभीरता से विक्टर ने कहा।

'क्या हो सकता है, मुझे डर लग रहा है, विक्टर।'

'कहीं तुम मेरे गिटार की धुन की जगह मुझमें तो इंट्रेस्ट नहीं लेने लगी हो? वैसे मुझमें ऐसा कुछ नहीं है,

जिसे कोई चाहे वरना वो मुझे छोड़ कर क्यों जाती।' अचानक उसके मुँह से निकल गया।

'किसकी बात कर रहे हो विक्टर, कौन तुम्हें छोड़ गई।' विस्मित क्रिस्टीना ने जानना चाहा।

'कोई नहीं, बीती बात भुला देने में ही समझदारी है। मेरे पास तुम्हारी ख़ातिरदारी के लिए कुछ नहीं है टीना। दो दिनों से फ़ीवर की वजह से बाहर नहीं जा पाया।' कुछ उदासी से विक्टर ने कहा।

विक्टर की बात पर टीना की नज़र मेज़ पर रखे कप-प्लेटों पर पड़ी थी। मेज़ के साथ एक छोटा सा फ्रिज भी था। क्रिस्टीना अपनी जगह से उठ कर मेज़ के पास गई। कमरे से लगा एक सिंक और वाश बेसिन था। कप और प्लेट में पहले की बनी चाय के निशान थे। क्रिस्टीना को कप और प्लेटों को सिंक के टैप से धोते देख विक्टर संकुचित हो उठा।

'ये क्या कर रही हो, टीना? तुम मेरी मेहमान हो। मैं कर लूँगा।' विक्टर ने उठने का प्रयास किया।

'तुम अभी बीमार हो, जब ठीक हो जाओगे तब तुम्हारे हाथ की बनी चाय ज़रूर पियूँगी। आज मेरी बनाई चाय टेस्ट कर के देखो। दादी कहती थीं, मैं बहुत अच्छी चाय बनाती हूँ, उनकी बीमारी में मैं उनके लिए कई बार चाय और कॉफी बनाती थी।' क्रिस्टीना के सुन्दर चहरे पर उदासी की छाया थी।

'तुम्हारी फ़ैमिली में और कौन-कौन हैं, टीना?'

'आठ साल की उम्र में मम्मी-पापा को खो दिया और अब इक्कीस साल की उम्र में दादी भी मुझे अकेला छोड़ कर चली गईं।' क्रिस्टीना का गला भर आया।

'तुमने शादी के बारे में कभी नहीं सोचा, टीना?' विक्टर ने गहरी दृष्टि से देखा।

'अपनी परिस्थितियों और समस्याओं के बीच उस बारे में कभी नहीं सोचा। दादी ही मेरी दुनिया थी, हाँ घर के पास मैडम जूलिएट का म्यूज़िक स्कूल मुझे अपनी तकलीफें भुलाने में ज़रूर हेल्प करता था।'

'क्या तुमने कोई इंस्ट्रूमेंट सीखा है या वोकल म्यूज़िक में इंट्रेस्टेड थीं?'

'मेरी जो परिस्थितियाँ थीं, उनमें ऐसे शौक़ पालना गुनाह होता, विक्टर। वैसे जब भी संभव होता घर के बाहर खड़ी हो कर जूलिएट मैम के स्कूल से गीत और इंस्ट्रुमेंट्स की हवा में बहती आती धुनों पर गुनगुनाती ज़रूर थी।' हलकी मुस्कान टीना के उदास चेहरे पर चमक गई।

'अगर ऐसा था तो इतना ख़र्च कर के मेक्सिको आने की क्या ज़रूरत थी? इसकी जगह कुछ काम की चीज़ पर पैसे ख़र्च करतीं।' विक्टर के चहरे पर अविश्वास स्पष्ट था।

'मुझे पता नहीं था, मेरी दादी ने कैसे पाई-पाई जोड़ कर अपना लाइफ इंश्योरेंस मेरे भविष्य के लिए सुरक्षित रख था। दादी हमेशा चाहती थीं, मुझे भी ख़ुशी और आराम मिल सके, बस इसी लिए.....।'

'उन पैसों से तुम अपना म्यूज़िक का शौक़ भी तो पूरा कर सकती थीं।' विक्टर ने बात काटी।

'ठीक कहते हो, पर मुझे अपने शहर और उस माहौल से कहीं दूर भाग जाने की ज़रूरत थी, विक्टर। दादी को भुला पाना आसान नहीं था।' उदास स्वर में टीना ने जवाब दिया।

'शायद तुम ठीक कहती हो। जिसे प्यार किया जाए, उसे आसानी से नहीं भुलाया जा सकता।' टीना के हाथ से चाय का कप लेने के प्रयास में विक्टर कराह उठा।

'क्या हुआ, तुम ठीक तो हो, विक्टर?' टीना चिंतित हो उठी।

'कुछ नहीं, कल बाथ-रूम में कोहनी के बल गिर गया था, इसीलिए हाथ में थोड़ा दर्द है।'

'मुझे देखने दो, मैंने फिज़िकल थेरेपी की ट्रेनिंग ली है। अब अमरीका में जल्दी ही मुझे कोई जॉब मिल जाएगा। एक जगह बात भी कर रखी है।' टीना खुश दिखी।

'ये तो अच्छी ख़बर है, उसके बाद तुम पूरी तरह से सेटल हो जाओगी।'

'थैंक्स, विक्टर। पहले मुझे तुम्हारे हाथ की चोट चेक करनी है।' कप टेबल पर रख टीना ने कहा।

'पहले चाय तो पीने दो, टीना। बड़ी देर से चाय पीना चाहता था, पर उठ नहीं सका।'

'ठीक है, कप लेफ्ट हाथ में ले कर चाय पी लो।' टीना ने अभिभाविका की तरह से कहा।

'अरे तुम्हारे हाथ में तो कोई मसल खिंच गई है, पर ये मेरी मसाज से ठीक हो जाएगी। हाँ तुम कुछ दिनों तक गिटार नहीं बजा पाओगे। उसके बिना रह पाओगे?'

'ज़िन्दगी में जो चाहा जाए, हमेशा नहीं मिलता, इस सच्चाई को अच्छी तरह से जाना है।'

'ठीक होने पर मुझे गिटार सिखाओगे।' मुस्कुराती टीना ने कहा।

'उसके लिए मेरे पास वक़्त कहाँ है, टीना। तुम्हें भी तो लौटना है।'

'आज ही अपने ट्रैवेल एजेंट से बात करूँगी, लौटने का टाइम बढ़वाना है।'

'मेरी बात मानों, और वापस अमरीका लौट जाओ। किसी भी चीज़ के लिए मोह बढ़ाना बेवकूफ़ी है.....।' रुखाई से विक्टर ने कहा।

'तुम इतने उखड़े-उखड़े क्यों रहते हो? स्कूल में पता लगा तुमने एम्.बी ए के बाद एक अच्छा जॉब लिया था, साथ में ख़ाली वक़्त में गिटार बजा कर दूसरों को एंटरटेन किया करते थे। तुम्हारी लाइफ़ में ऐसा क्या हुआ, तुम इतना बदल क्यों गए?'

'मैंने अपनी लाइफ़ में किसी को इन्टरफियर करने का हक़ नहीं दिया है, तुम अब जाओ।'

'ज़रूर जाऊँगी, पर पहले तुम्हारे हाथ पर मसाज करने के बाद।'

विक्टर की रुखाई से अविचलित टीना ने टेबिल पर रखी तेल की शीशी उठा कर विक्टर के हाथ पर हलके हाथ से मालिश शुरू कर दी।

'मुझे तुम्हारी हमदर्दी नहीं चाहिए। तुम जैसी लड़कियों को अच्छी तरह से जानता हूँ। छोड़ो मेरा हाथ।' विक्टर ने हाथ छुड़ाना चाहा, पर टीना उसी तन्मयता से मालिश करती रही।

'मुझ जैसी कितनी लड़कियों को जानते हो? तुम्हारी जानकारी के लिए बता दूँ, अपनी तरह की मैं अकेली ही लड़की हूँ। उम्मीद करती हूँ कल तक कुछ आराम आ जाएगा और मेरी मसाज से पाँच-सात दिनों में गिटार बजा सकोगे। मसाज का एक सेशन रोज़ चलेगा।'

'तुम्हारे बारे में इतना तो जान गया हूँ कि तुम बेहद ज़िद्दी लड़की हो। तुम्हारे पति को तुम्हारी ज़िद झेलना मुश्किल होगा।'

'थैंक्स, वैसे अभी तो मेरा शादी करने का कोई इरादा ही नहीं है। हाँ जब भी कोई मिलेगा तो तुमने जो मेरी क्वॉलिटी डिस्कवर की है, ज़रूर बता दूँगी। कल फिर आऊँगी, बाय।' विस्मित विक्टर देखता रह गया।

दूसरे दिन बिना किसी औपचारिकता के निःशब्द टीना ने विक्टर के हाथ पर मसाज शुरू कर दी।

'अजीब लड़की हो, यह भी नहीं पूछा तुम्हारे मसाज से कुछ आराम मिला है या नहीं?'

'मुझे अपने पर विश्वास है, दादी कहती थीं, मेरे हाथों में जादू है, हाथ लगाते ही दर्द भाग जाता है।'

'अगर मैं कहूँ मेरा दर्द बढ़ गया है।' विक्टर ने टीना को देख कर कहा।

'तुम झूठ नहीं बोल सकते, तुम्हारे चेहरे पर साफ़

दिख रहा है, तुम्हें आराम मिला है।'

'इसका मतलब तुम चेहरा भी पढ़ लेती हो। मेरे चेहरे पर और क्या लिखा है?'

'यही कि किसी लड़की ने तुम्हारा दिल तोड़ा है, इसीलिए तुम सब लड़कियों को धोखेबाज़ समझते हो।'

'अगर मैं कहूँ, ये बात सच नहीं है तो?'

'सच तो यह है कि तुम किसी बेवफ़ा की यादों को सीने से लगाए, उसका बोझ ढो रहे हो। अक़्लमंद इंसान अपनी बात किसी के साथ शेयर कर के इस अनचाहे बोझ को उतार फेंकते हैं और ज़िन्दगी में आगे बढ़ते हैं।' मसाज करती टीना ने गंभीरता से कहा।

'तुम्हारे ख़्याल में मैं अक़्लमंद नहीं हूँ। तुम्हें नहीं पता, हर एग्ज़ाम में टॉप करता रहा हूँ।' विक्टर ने नाराज़गी से कहा।

'अगर इतने ही अक़्लमंद हो तो अच्छा भला जॉब छोड़ कर भटकते नहीं फिरते।'

'मैं क्या करता हूँ, क्यों करता हूँ, इस बात से तुम्हारा कोई लेना देना नहीं है, समझीं।'

'वाह, लेना तो ज़रूर है, तुम्हारा हाथ ठीक कर रही हूँ, अपनी फ़ीस तो लेनी होगी।' टीना मुस्कुराई।

'मैंने कब कहा था, मेरी हेल्प करो और तुम्हें पहले ही बता दिया था, मेरे पास पैसे नहीं हैं।'

'मानती हूँ, पर किसी को तकलीफ़ में देख कर उसकी मदद करना मेरा स्वभाव है। अगर चाहो तो अपने टूटे दिल की कहानी सुना दो, मेरी फ़ीस वसूल हो जाएगी।' टीना हँस रही थी।

'तुम्हें अपनी कहानी सुना कर और कोई ख़िताब नहीं लेना है, अभी तुम मुझे बेवकूफ़ तो कह चुकी हो।'

'ग़लत समझ रहे हो, मैं तो बस तुम्हारा दुःख हल्का करना चाह रही थी। आज का सेशन ख़त्म हुआ।' अचानक टीना उठ कर चली गई। मौन विक्टर उसे जाता देखता रह गया।

अपने कॉटेज में पहुँची टीना सोच में पड़ गई, ये उसे क्या हो रहा है, एक अजनबी इंसान का साथ उसे क्यों बार-बार उसके पास खींच ले जाता है। विक्टर की बातों में तो कभी उसके लिए कोई मीठा शब्द तक नहीं रहता, फिर भी वह उससे दूर क्यों नहीं रह पाती। क्या उसे विक्टर से प्यार हो रहा है? अपने सोच को झटक, टीना सागर तट पर जा बैठी। आज तक उसने कभी किसी के प्रति ऐसा खिंचाव महसूस नहीं किया था। विक्टर ठीक कह रहा है, उसे वापस लौट जाना

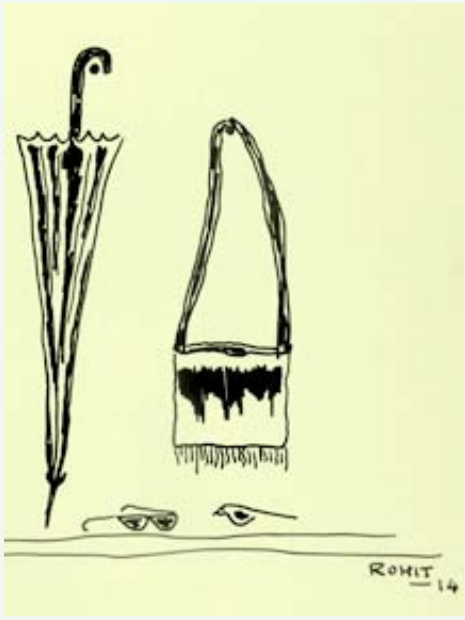

चाहिए। कल विक्टर से विदा ले कर वह अपने देश लौट जाएगी, पर दादी कहती थी, जिस इंसान से पहली बार मिलते ही वह अपना सा लगने लगे, उसका साथ अच्छा लगे, उसी के साथ सच्चा प्यार हो सकता है। आज तक टीना को कभी किसी के साथ इतना अच्छा क्यों नहीं लगा, क्या उसकी वजह विक्टर का गिटार है या उसका व्यक्तित्व?

'आज इतनी देर में क्यों आईं, कब से तुम्हारा इंतज़ार कर रहा था? मुझे डर लगा कहीं तुम वापस न चली गई हो।' उसे देखते ही विक्टर ने कहा।

'मेरा इंतज़ार कर रहे थे, और तुम्हें डर था कहीं मैं वापस ना चली गई हूँ, क्यों विक्टर? तुमने ही तो कहा था, मुझे वापस लौट जाना चाहिए, तुम जान कर ख़ुश होगे कि तुम्हारी सलाह मान कर वापस लौटने का फैसला ले रही हूँ। अब तो तुम्हारा हाथ भी ठीक हो रहा है, अब यहाँ मेरी ज़रूरत नहीं है।' कुछ संजीदगी से टीना ने कहा।

'मेरा हाथ तो ठीक कर दिया, पर उसकी फ़ीस नहीं वसूलोगी?' हलकी मुस्कान के साथ विक्टर ने कहा।

'फ़ीस की शर्त तो तुमने मानी नहीं थी, विक्टर, तुम अपने टूटे दिल की कहानी अपने तक ही रखना चाहते हो। मेरी फ़ीस के लिए परेशान मत हो, ये काम मैंने अपनी मर्ज़ी से किया है।'

'शर्त तो माननी ही होगी वरना तुम्हारा क़र्ज़ कैसे उतार पाऊँगा। एक कप कॉफी के साथ अपने दिल का बोझ उतारना चाहूँगा, तुम्हारी दादी ठीक कहती थीं, तुम कॉफी अच्छी बनाती हो।' विक्टर मुस्कुराया।

कॉफी के मग के साथ टीना विक्टर के सामने वाली कुर्सी पर बैठ गई।

'ये तब की बात है, जब मैंने एम् बी ए कॉलेज में लेक्चरार की तरह जॉब लिया था। जवानी का उत्साह और अपने को प्रूव करने की कोशिश थी। स्टूडेंट्स के बीच मेरे गिटार ने मेरी पॉपुलैरिटी में चार चाँद लगा दिए थे। अपनी उस ज़िन्दगी से बहुत खुश था, टीना।'

'आई एम् श्योर तब तुम काफी हैंडसम दिखते होगे और लड़कियाँ तुम पर मरती होंगी। ठीक कह रही हूँ न?' टीना ने शरारत से कहा।

'ठीक कह रही हो, पर रूबिया सबसे अलग थी। सुन्दर चेहरे पर बड़ी-बड़ी आँखें मानों बातें करती थीं। मेरे गिटार पर ही नहीं वह मेरी हर बात की दीवानी थी। हम दोनों को एक-दूसरे का साथ बहुत अच्छा लगता। गिटार सीखने के लिए वह मेरे पास आती और हम दोनों सब कुछ भूल कर एक-दूसरे में खो जाते.. हम दोनों कभी अलग होंगे सोच भी नहीं सकते थे। मैंने जब उसे प्रोपोज किया, उसने मुस्कुरा कर एक्सेप्ट कर लिया।' अचानक विक्टर चुप हो गया।

'फिर क्या हुआ, विक्टर, तुम दोनों ने शादी की थी?'

'काश, ऐसा हो पाता, उन्हीं दिनों ब्राजील से एक स्टील फ़ैक्टरी का अमीर स्वामी मेक्सिको में छुट्टियाँ बिताने आया था। मैं और रूबिया छुट्टी के दिन सी-बीच पर सागर की लहरों के साथ गिटार की धुन बजाया करते थे। उस अमीर ब्राजीलियन को रूबिया भा गई। उसने रूबिया पर न जाने क्या जादू किया कि बस मेरे नाम की दो लाइनें लिख कर रूबिया मुझसे रिश्ता तोड़ कर उस अमीर इन्सान के साथ हमेशा-हमेशा के लिए चली गई। मेरे सारे सपने टूट गए, जॉब छोड़ कर भटकता रहा फिर यहाँ आ गया। उसकी याद में गिटार बजाता हूँ। शायद वह कभी वापस आए और उसे पुराने दिन याद आएँ। काश! मेरे पास ख़ूब धन होता तो वह मुझे छोड़ कर क्यों जाती!' विक्टर के चेहरे पर गहरी उदासी थी।

'कमाल है, तुम एक ऐसी सेल्फ़िश लड़की की याद में अपनी ज़िन्दगी बर्बाद कर रहे हो, जो तुमसे नहीं पैसों और ऐशो-आराम की ज़िन्दगी से प्यार करती थी। अब तो मानना पड़ेगा कि तुम अक़्लमंद नहीं हो।'

'मेरा तो अब यही मानना है कि प्यार भी पैसा चाहता है।' विक्टर ने उदासीनता से कहा।

'अगर तुम पैसा ही कमाना चाहते हो तो मेरे साथ अमरीका चलो, तुम क्वॉलिफाइड हो, वहाँ अपने को प्रूव करने के लिए बहुत ऑपरचुनिटी मिलेंगी। ख़ाली

वक़्त में स्टूडेंट्स को गिटार सिखा कर अपनी हॉबी भी बनाए रख सकोगे।' टीना ने गंभीरता से कहा।

'हमेशा के लिए अमरीका जाने के लिए परमानेंट वीज़ा कैसे मिलेगा टीना?'

'मैं अमरीकी सिटीज़न हूँ, मुझसे शादी कर लो, तुम्हें आसानी से वीज़ा और कुछ दिनों बाद अमरीकी सिटीज़नशिप भी मिल जाएगी। मै प्रैक्टिकल अमरीकी लड़की हूँ, स्पष्ट बात करती हूँ।'

'क्या, तुमसे शादी? आर यू आउट ऑफ़ माइंड? हम तो एक-दूसरे को ठीक से जानते भी नहीं टीना?' विक्टर चौंक गया।

'अमरीकी सिटीज़नशिप पाने के लिए कितने ही लोग ये तरीका अपनाते हैं। यहाँ तक कि अपने से काफी बड़ी उम्र की अमरीकी औरत तक से शादी करते हैं, कम से कम हम दोनों एक-दूसरे को कुछ तो जान पाए हैं। अगर शादी नहीं चली तो तलाक़ लेना उतना ही आसान है, जितना हम दोनों का शादी करना।'

'तुम क्या कह रही हो समझ पाना मुश्किल है। शादी के पहले ही तलाक़ की बात अजीब नहीं है? शादी कोई खेल तो नहीं होती।' विक्टर सोच में पड़ गया।

'मैं तो बस तुम्हें ज़िन्दगी में आगे बढ़ने के लिए एक नई राह दिखा रही हूँ, वैसे मैं भी शादी को खेल नहीं मानती, पर अगर तुम्हें मेरे साथ शादी करने से डर लग रहा है तो फैसला तुम्हें ही करना है।'

'क्या ये रास्ता अपनाना ठीक हो सकता है, मुझे किसी पर भी यक़ीन करना कठिन लगता है?'

'मैं तुम्हें पहले ही बता चुकी हूँ, मैं सबसे अलग और तुम्हारे ख़्याल में एक ज़िद्दी लड़की हूँ। सोच लो, क्या मेरी ज़िद पूरी उम्र झेल पाओगे?' टीना शरारत से हँसी।

'बिना प्यार के शादी करना क्या एक सौदा नहीं होगा, टीना?' विक्टर ने सीधा सवाल किया।

'एक बार प्यार करने का नतीजा देख चुके हो, अब अगर पहले से ही मेरे प्रोपोज़ल को सौदा समझ कर कदम उठाओगे तो उसके धोखे से क्या डरना?'

'अगर यह सौदा भी घाटे का सिद्ध हुआ तो शायद मेरा ज़िन्दगी से यक़ीन उठ जाएगा, टीना। वैसे क्या तुम मुझ पर दया की वजह से ये प्रस्ताव रख रही हो? मुझे किसी की दया नहीं, प्यार चाहिए।'

'अगर मैं कहूँ, मुझे तुम अच्छे लगते हो, तुम्हारा साथ और तुम्हारे गिटार से मुझे प्यार हो गया है। इसके पहले कभी किसी के लिए ऐसी कशिश महसूस नहीं की थी।' टीना ने सच्चाई से कहा।

'तुम सचमुच अनोखी लड़की हो। रूबिया के जाने के बाद तुम ही वो पहली लड़की हो, जिसके आने से मेरे मन का ख़ाली कोना पूर्ण होता लगता था। शायद ये चाहत की आहट ही थी, टीना। तुमसे अमरीका वापस जाने को कह कर भी मुझे तुम्हारा इंतज़ार रहता था। विश करता तुम कभी वापस ना जाओ।' विक्टर के चहरे पर खुशी झलक आई थी।

'अब तुम मुझे प्रोपोज़ तो करो, विक्टर। हमें चर्च में शादी की डेट फिक्स करनी है।'

'ओके, मिज़ टीना, उर्फ़ क्रिस्टीना, आप क्या मुझसे शादी करेंगी? सॉरी, कोई फूल पेश करने को नहीं है।' मुस्कुरा कर विक्टर ने कहा।

'मंजूर है, पर शादी के बाद मुझे फूल ज़रूर चाहिए।' टीना ने हँस कर कहा।

'शादी के बाद तुम्हें फूलों की तरह प्यार से रखूँगा, यह मेरा वादा है, टीना।'

हँसते हुए टीना के माथे पर चुम्बन अंकित कर विक्टर ने टीना के प्यार पर मोहर लगा दी।

❐

बस, अब बहुत हुआ !

मंजुश्री

घर से निकलते-निकलते बेवजह देर हो गई थी। दरअसल रात काफ़ी देर तक जागती रही थी। पिछले कुछ दिनों की भागदौड़ ने नींद न जाने कहाँ उड़ा दी थी। बमुश्किल अल्लसुबह ज़रा सी नींद लगी, तो मस्जिद के लॉउडस्पीकर से आती अज़ान की तेज़ आवाज़ से नींद खुल गई। उठने का मन नहीं कर रहा था पर उठना ही था। किसी तरह जल्दी-जल्दी सुबह के सारे काम निपटाकर आफ़शा, एस.पी. साहब के ऑफिस जाने के लिए रिक्शा तलाश रही थी। आज पता नहीं क्या माजरा था, कोई रिक्शा या ऑटो उस तरफ जाने के लिए तैयार ही नहीं था। वैसे तो रोज़ इस रिक्शा स्टैंड पर दो चार रिक्शेवाले बीड़ी फूँकते हुए दिखाई दे जाते हैं, पर आज जब ज़रूरत है तो, न जाने सब कहाँ नदारद हैं! काफ़ी इंतज़ार के बाद एक रिक्शा मिला, आफ़शा की जान में जान आई। हालाँकि अभी पूरी तरह धूप नहीं निकली थी फिर भी आफ़शा के माथे पर पसीना चुहचुहा आया था। पसीना पोंछती-पोंछती वह रिक्शे पर बैठ गई। उसी रिक्शेवाले ने बताया कि उस तरफ कोई रैली निकल रही है; जिसकी वजह से कोई रिक्शे वाला या गाड़ी वाला उस तरफ जाना नहीं चाहता। सुनते ही उसका तो दिल धक्क से रह गया। मन हुआ ज़ोर से एक भारी भरकम भद्दी सी गाली देकर अपनी खीज को शांत करे। उसके साथ उसकी छोटी बहन सना भी थी। बड़ी मुश्किल से उसने सना को अपने साथ आने के लिए राज़ी किया था। वैसे तो वह अकेले ही घर-बाहर के सारे काम निपटाती है पर पुलिस कार्यालय में वह अकेले नहीं जाना चाहती थी। यह भी क्या विडंबना है कि हिफ़ाज़त करने वालों से ही हिफ़ाज़त की ज़रूरत महसूस हो। बड़े क़िस्से सुन रखे हैं उसने इन पुलिसवालों के, पर जाना भी ज़रूरी था। कोई और चारा भी तो नहीं! बड़ी मुश्किल से आज 15 मिनट का समय दिया था उनके पी.ए. ने। लगता है आज की मशक्कत भी जाया जाएगी। पिछले दस दिनों से लगातार चक्कर काट रही है एस.पी. ऑफिस के। सुबह के समय 10 बजे से दोपहर 12 बजे तक सदर के दफ़्तर में तो शाम को 6 बजे से रात के 9 बजे तक सहारागंज स्थित पीली कोठी में उनके निवास स्थान पर साहब से मिला जा सकता है।

उनका निवास स्थान भी ख़ासा अच्छा है। दो बार वह वहाँ भी हो आई है। कोठी के निचले हिस्से में उनका दफ़्तर है, काफी बड़ी जगह है। जिसमें मुलाकातियों के लिए सोफ़े और कुछ कुर्सियाँ भी पड़ी रहती हैं। पहले यह कोठी पीले रंग की थी, बहुत पुरानी अंग्रेज़ों के ज़माने की। अब तो सफ़ेद रंग से पुती है, फिर भी पीली कोठी ही कहलाती है। ऊपर के हिस्से में एस.पी. साहब का निवास स्थान है, चारों तरफ सुंदर बाग़ीचा भी है; जिसमें हमेशा चार-पाँच माली लगे रहते हैं। नरम मखमली घास के किनारे-किनारे बनी क्यारियों में खिले चटक पीले गेंदे के फूल

संपर्कः ए-10, बसेरा, ऑफ दिन-क्वारी रोड, देवनार, मुंबई-400 088
मोबाइलः 9819162949
मुंबई की सेवानिवृत शिक्षिका और कथाबिम्ब पत्रिका की सम्पादिका मंजुश्री की कहानियाँ, कविताएँ, लेख, साक्षात्कार एवं लघुकथाएँ भारत के विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती हैं। कई कहानियाँ मराठी में अनूदित।
ईमेलः kathabimb@yahoo.com
संपर्कः ए-10, बसेरा, ऑफ दिन-क्वारी रोड,देवनार, मुंबई-400088
मोबाइलः 9819162949

ज़रूर कोठी के नाम को सार्थक करते हैं। उनके दफ़्तर के बाहर चाक-चौबंद पहरेदारी रहती है। परसों जब आफ़शा शाम के सात बजे उनके दफ़्तर पहुँची तो अच्छी-ख़ासी भीड़ थी। उसने ग़ौर किया कि उसकी तरह ही कितने चेहरों पर तल्ख़ी-सी छायी हुई थी। उम्मीद-नाउम्मीद के बीच झूलते चेहरे ..! उनका पी.ए. एक चुस्त-दुरुस्त पैंतीस-चालीस साल का दारोगा था। वर्दी पर लगे बैज पर उसका नाम शमशेर बहादुर लिखा था, जो उस पर सही लग रहा था। थोड़ी देर इंतज़ार करने के बाद पूछने पर उसने बताया कि आज तो साहब से मिलना न हो पाएगा। चौक में कहीं दो गुटों के बीच झगड़ा हो गया है और दंगे की संभावना है, अचानक उन्हें वहाँ जाना पड़ गया है। कह नहीं सकता कब तक लौटेंगे। सुनते ही आफ़शा झल्ला उठी। पीली कोठी का यह उसका तीसरा चक्कर था और सदर ऑफिस में भी दो बार हो आई है। अभी तक मिलना नहीं हो पाया है। पिछली बार जब सदर गई थी तो मालूम पड़ा आज जनता दरबार में ही साहब को चार बज जाएँगे, हो सकता है यहाँ आएँ ही नहीं, वहीं से निकल जाएँगे। पिछले कई दिनों से यही सिलसिला जारी है। कभी जनता दरबार, कभी बड़े अफ़सरों के साथ मीटिंग, कभी किसी नेता का दौरा, तो कभी तहसील दिवस, दंगे-फसाद, रैली, धरना और मोर्चे अलग... पता नहीं काम कब होता है!

उसने मालूम किया कि महीने के पहले सोमवार को जनता दरबार पुलिस मुख्यालय में लगता है। मुख्यालय की बड़ी-सी इमारत है। कंगूरेदार दीवारों वाली। जहाँ बड़े से लंबे बरामदे में अफ़सरों के लिए मेज़ कुर्सियाँ पड़ जाती हैं और सामने के लॉन में जनता के बैठने का बंदोबस्त हो जाता है। दरियों के अलावा प्लास्टिक की काफ़ी सारी कुर्सियाँ भी लगा दी जाती हैं। एक बार वह जनता दरबार भी हो आई थी, सोचा शायद वहीं काम बन जाए, पर वहाँ का तो जलवा ही अलग था। लोगों की भीड़ देखकर आफ़शा समझ गई, आज भी मुलाक़ात नहीं हो पाएगी, पर सोचा अब आई हूँ तो जनता दरबार भी देख लूँ। मजमा जुटा हुआ था। दरियों और कुर्सियों पर बैठे लोगों के अलावा काफ़ी लोग खड़े थे, क्यारियों की मेड़ों पर भी लोग बैठे थे। चारों तरफ़ लोगों का हुजूम!! मानों पूरा शहर उमड़ आया हो। ऐसा हर महीने के पहले सोमवार को होता है। वह भी एक तरफ़ क्यारी की मेड़ पर बैठकर सारी गहमागहमी का मुआइना करने लगी। लोगों के चेहरे पर बिछी बेचारगी के भाव पढ़ने की कोशिश कर रही थी। अपने

आप में यह भी एक अनोखा अनुभव था। अपनी परेशानी तब तक ही इतनी गंभीर लगती है; जब तक किसी दूसरे की परेशानी का सामना न हो। बीमार, बूढ़े, ज़िन्दगी से बेजार, थके-हारे नाउम्मीद लोगों की भीड़....

हालाँकि दरबार का समय सुबह 10 बजे से शाम के 4 बजे तक का है, पर काफ़ी देर पहले से ही लोग आना शुरू हो जाते हैं। 11 बजे के करीब साहब की सफ़ेद सूमो गाड़ी आई। चार-पाँच हथियारबंद सिपाहियों से घिरे हुए साहब तेज़ क़दमों से आते हुए दिखाई दिए। सारे अफ़सर चौकन्ने हो गए। कनपटी के सफ़ेद बालों और खिचड़ी मूछों वाले 50 वर्षीय जंगबहादुर राना वर्दी में काफ़ी रौबीले दिख रहे थे। गलियारे में खड़े सिपाही सलाम ठोंक रहे थे। इतनी भीड़ देखकर एकबारगी तो साहब झल्ला उठे, 'साला पूरा शहर उमड़ आया है.....पता नहीं लोगों को कोई और काम धंधा है भी या नहीं....बस चले आते हैं मुँह उठाये शिकायतों का पुलिंदा दबाये।' वे मन ही मन बुदबुदाए।

आते ही पहले सीधे अंदर कमरे में गए। थोड़ी देर पंखे की हवा खायी और पानी पीकर बाहर आकर कुर्सी पर बैठ गए। उनके बैठते ही बाकी अफ़सर भी सजग हो गए। सबमें फुर्ती आ गई। भीड़ में भी हलचल हुई। सिपाहियों ने लोगों की शिकायतों की अर्ज़ियाँ पहले से ही ले रखी थीं। काफ़ी मोटा पुलिंदा था। एस.पी. साहब ने सामने नज़र दौड़ाई। गुस्सा तो बहुत आ रहा था, सुबह-सुबह नेता जी के फ़ोन ने मूड ऑफ कर दिया था। पर लोगों का सैलाब देखकर एकबारगी छाती भी फूल गई। अपना रौब और दबदबा दिखाने की यही तो माकूल जगह है वर्ना अपने से ऊपर वालों के सामने तो हमेशा गर्दन झुकी ही रहती है। अँगूठा छाप नेताओं की जी-हजूरी भी करनी पड़ती है, पता नहीं कब किसकी निगाह तिरछी हो जाये? पुलिस वालों को तो साले अपने घर का नौकर समझते हैं। चाहे कोई कितने बड़े ओहदे पर क्यों न हो, गाहे-बगाहे गालियाँ सुननी ही पड़ती हैं और साले जूनियर के सामने भी पानी उतारने से नहीं चूकते। मन करता है सर्विस रिवाल्वर उनकी कनपटी पर धरकर सारी हेकड़ी निकाल दें, पर क्या करें नौकरी करनी है तो सब सहना पड़ेगा। बिना खाल मोटी किये गुज़ारा नहीं है। पहले-पहले तो ज़रा-ज़रा सी बात पर ख़ून उबलने लगता था, पर अब धीरे-धीरे सब ठंडा पड़ गया। बस तिलमिला कर रह जाते हैं अपनी नपुंसक बेचारगी पर।

यहाँ लोग उनका घंटों इंतज़ार करते हैं। उनके सामने हाथ-पाँव जोड़े बैठे रहते हैं। रोते, घिघियाते हैं, अपनी शिकायतें करते हैं, तब उन्हें अपनी ताकत का अहसास होता है और अपने घायल पुंसत्व को सहलाने का मौका मिलता है। लोग सोचते हैं कि उनके पास कोई जादू की छड़ी है, जिसे घुमाकर उनकी सारी समस्याओं को निपटा देंगे। उन्हें क्या मालूम कि वे ख़ुद किन-किन परेशानियों से घिरे हुए हैं। उनके ऊपर सरकार ने कितनी इन्क्वारियाँ बिठा रखी हैं और सरकार के सारे महकमे उनके इशारों पर नहीं चलते पर वे भी लोगों की ख़ुशफ़हमियों में अपनी ताक़त ढूँढ़ते हैं।

आफ़शा ने देखा कि एक अधिकारी ने अर्ज़ी के पुलिंदे से नाम पुकारना शुरू कर दिया है। लोग साहब के सामने आते, सलाम करते और अपनी फरियाद सुनाते। दूसरा अधिकारी कुछ नोट करता जाता। कोई-कोई फरियादी तो साहब का पैर ही पकड़ कर बैठ जाता। यह सिलसिला कुछ देर तक तो ठीक-ठाक चलता रहा, पर अर्ज़ियों का अम्बार तो कम ही न होता था। फिर अर्जियाँ क्रम से न निकाल कर बीच-बीच में से निकाली जाने लगीं। लोग बेचैन होने लगे। अफरा-तफरी मच गई। एस. पी. साहब भी ऊबने लगे थे। बार-बार घड़ी देख रहे थे। दो बज गए थे।

एस.पी. साहब भी सुबह 8 बजे से निकले हुए थे। सुबह कमिश्नर साहब के साथ एक मीटिंग भी थी। दो दिनों बाद गृहमंत्री राज्य के दौरे पर आने वाले हैं, उसकी तैयारी करनी है। कहाँ तक लोगों की शिकायतें सुनें। साला सिस्टम ही ऐसा है, इतने बड़े जिले की ज़िम्मेदारी अकेले उनके ही कंधे पर है। पिछले तीन सालों से तीन पोस्ट खाली हैं, भर्ती होती ही नहीं है। और एक कोई आया भी तो इस तरफ़ उसकी पोस्टिंग नहीं हुई। दिन-

ब-दिन उन पर काम का बोझ बढ़ता ही जाता है। उनके ट्रांसफर की अर्ज़ी भी सालभर से लटकी हुई है। हर समय फ़ोन घनघनाता रहता है। जब कभी दौरे पर निकलते हैं, तो दो-दो, तीन-तीन दिन घर नहीं आ पाते, न खाने का समय, न सोने का। रात बिरात कॉल, फिर भी जनता की आलोचना सुननी पड़ती है कि पुलिस वाले काम नहीं करते। उन्हें तो यह भी याद नहीं है कि उनका बेटा किस क्लास में पढ़ रहा है। पत्नी ही सारे काम निपटाती रहती है। पब्लिक भी ऐसी है कि बात-बात पर मरने-मारने पर उतारू हो जाती है। एक पैर पर खड़े रहना पड़ता है।

सवा दो बजे के करीब साहब उठ गये, और लोग भी वहीं आस-पास चाय और पान-बीड़ी की दुकानों को घेरकर खड़े हो गये। सुबह 8 बजे से ही जमावड़ा शुरू हो गया था। काफी लोग तो आस-पास के इलाक़ों से आये थे। न जाने कितने ऐसे भी थे जो महीनों से जनता दरबार में आ रहे थे; लेकिन उनकी अब तक बारी ही नहीं आ पाई थी। तीन बजे फिर दरबार लगा। इस सत्र में तो एक साथ तीन-तीन चार-चार लोगों की शिकायतें साहब सुन रहे थे और अफ़सर कुछ लिखते जाने की खाना पूरी कर रहे थे। भीड़ भी काफ़ी छँट गई थी। पर अब एस.पी. साहब वाकई ऊबने लगे थे। थकान भी लग रही थी। कई दिनों से ब्लडप्रेशर और डायबिटीज़ बढ़ी हुई थी। चैकअप कराने का भी समय नहीं मिल रहा था। सोच रहे थे घर जाकर थोड़ा आराम करेंगे कि तभी मोबाइल बज उठा। एक तरह से राहत की साँस ली और उठकर अंदर चले गए, फिर बाहर आए ही नहीं। आधे घंटे तक जनता इंतज़ार करती रही, फिर मालूम पड़ा कि साहब निकल गए हैं, अगले महीने आइए।

साढ़े चार बज रहे थे। उसकी मुलाक़ात तो क्या होनी थी, जनता दरबार का नमूना ज़रूर देखने का मौका मिला। लोग गुस्साए हुए थे। कुछ लोग ज़ोर-ज़ोर से सिस्टम को गालियाँ दे रहे थे। दोबारा फिर अर्ज़ियाँ देनी पड़ेंगी। उनकी सब अर्ज़ियाँ उल्टी-सीधी हो गई थीं। साहब के जाते ही बाकी सब अफ़सर और सिपाही भी उठ खड़े हुए। भीड़ से बदसलूकी पर उतर आए थे। बेकाबू भीड़ को धकिया रहे थे। जनता झुँझलायी हुई थी। दोनों ओर से गाली-गलौज, धक्का-मुक्की जारी थी। भीड़ किसी भी महीने कम न होती थी। जिनकी अर्ज़ियों को सुन कर नोट लिख भी लिये जाते थे, उन पर भी कोई कार्यवाही नहीं हो पाती थी, बिना नोट पर नोट लगाए। मुश्किल से एक आध शिकायत ही निपटती होगी!! अफ़सर से जनता तक सभी इस सरकारी तंत्र से त्रस्त नज़र आ रहे थे। किसी तरह बचती-बचाती वह वहाँ से बाहर निकली और कान पकड़े कि फिर कभी दोबारा जनता दरबार जैसी जगहों पर नहीं जाएगी।

नई सरकार ने यह एक नया शगूफा छोड़ा था जनता को बेवकूफ़ बनाने का। जब इस प्रकार के दरबार लगते तो दफ़्तरों में कई दिन पहले से ही काम ठप्प हो जाता। लोग दरबारों का बहाना बना कर कुर्सी से ग़ायब रहते। मुख्यमंत्री महोदय ख़ुद भी महीने में एक बार अपने निवास पर जनता दरबार लगाते हैं। मीलों लंबी लाइन लग जाती उस दिन। मुख्यमंत्री महोदय आएँगे या नहीं, यह जानने के लिए भी मुट्ठी गरम करनी पड़ती है। पर वहाँ भी वे तो कभी-कभार ही दर्शन देते हैं। उनका पी.ए. या कोई अन्य कर्मचारी निपटाता इस बेगार को। उन्हें भी मालूम था कि यह सब दिखावा है। होना जाना कुछ नहीं है, पर नाम तो था कि मुख्यमंत्री ख़ुद जनता से व्यक्तिगत रूप से मिलते हैं। सरकारें आती-जाती रहती हैं, पर काम के तरीके नहीं बदलते। ज़ंग खाए पहियों पर मंद गति से चलती सरकारी तंत्र की गाड़ी का बेजोड़ नमूना था यह जनता दरबार!! जहाँ जनता को बेवकूफ़ बनाने की कवायद भी बड़े सलीके से की जाती थी। आफ़शा ने नजर दौड़ाई, चारों तरफ़ उल्टी-पुल्टी कुर्सियाँ और रौंदी हुई क्यारियाँ भीड़ की हताशा की कहानी कह रही थीं। उम्मीदों के कुचले जाने की आहट भी नहीं सुनाई दे रही थी धूल के गुबार में।

घर पहुँची तो बेहद थकी हुई थी। शरीर से ज़्यादा मन की थकान थी। बेकार में पूरा दिन ख़राब हो गया।

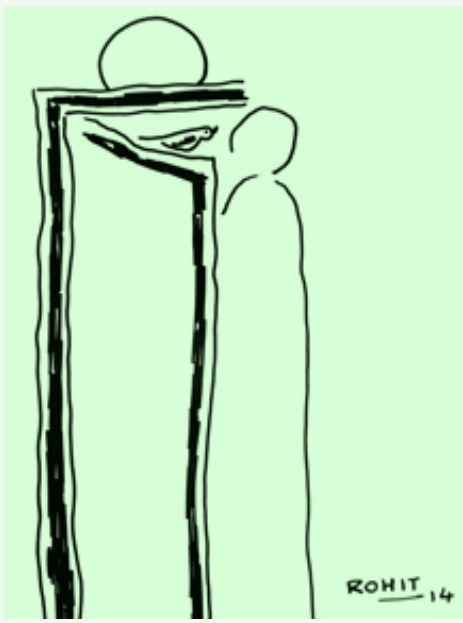

उसने कान पकड़े कि वह फिर कभी इतनी भीड़-भीड़ वाली जैसी जगह पर नहीं जाएगी, और तय किया कि अब वह सदर के दफ़्तर में ही एस. पी. साहब से मुलाक़ात करेगी चाहे कितने ही चक्कर क्यों न काटने पड़े!! उसने चार महीने पहले जो शिकायत थाने में लिखवाई थी, उसकी न तो अभी तक एफ.आई.आर. लिखी गई थी, न ही कोई कार्यवाही हुई थी। थानेवाले चक्कर कटवा रहे थे। बड़ी मुश्किल से वह एस.पी. के दफ़्तर पहुँच पाई। रिक्शेवाला भी बूढ़ा था और ट्रैफिक बहुत था। 11 बजने में अभी पाँच मिनट बाकी थे, हाँफती-दौड़ती वे दोनों बहनें विज़िटिंग रूम में पहुँचीं तो मालूम पड़ा कि साहब अभी तक आए नहीं हैं। उन्होंने राहत की साँस ली। बड़े से कमरे में सामने की तरफ़ एक मेज़ कुर्सी पड़ी थी और उसके सामने 20-25 प्लास्टिक की कुर्सियाँ और दीवार के सहारे दो-तीन लकड़ी की बेंचें पड़ी थीं। 10-12 लोग बैठे थे, एक सज्जन के साथ उनका वकील भी था। कुछ लोग बाहर भी टहल रहे थे। वे दोनों भी बैठ गईं एक बेंच पर पहले से ही दो औरतें पैर ऊपर करके हथेली पर सिर टिकाये बैठी थीं। एक छोटे कद की गोल-मटोल, गोरे रंग की थी। उसका चेहरा लाल और आँखें भरी हुई थीं। शायद अभी-अभी रो चुकी थी। दूसरी दुबली-पतली साँवले रंग की थी।

आफ़शा ने उस गोरी सी औरत से केवल इतना भर पूछा कि वह कहाँ से आई है, बस वह तो भरभरा कर रो पड़ी। माथा पीट-पीट कर हाथ ऊपर उठा-उठाकर भगवान को दुहाई देने लगी।

'का बताई बिटिया... हमरी को सुनी...ऽऽ जब हमरे बेटवा का मार दइहैं, तब हम का करिब...हम त कहित हैं हमका डार देव जेहल मा मुदा हमार बेटवा का छोड़ देव....' सुबकने लगी ज़ोर-ज़ोर से।

'बिटिया.....उ हमरी बहुरिया जौउन है न...मुसलमानिन है, पट्टी पढ़ाई के हमरे बेटवा संग सादी कइ लिहिस..औउर अब कहूँ दूसर जगा नैन मटक्का शुरु है। समझावे पे उल्टा हमरे बेटवा पर मारपीट क इल्जाम लगाइ दिहिस....हमहूँ क दहेज खातिर फँसाये है। जब देखा तब हमरे बेटवा क पुलिस पकड़ लइ जात है....'

'ऐ माई बचावा ...ऽऽ हमरे बेटवा क...जे वा न रही तो हम कइसे जियब...हड्डी पसली तोड़ के धर दयी है जालिमन ने ...ई देखा हमरेऊ नील पड़ गवा है...' और अपनी बाँह दिखाने लगी।

'हम थाना जाइके चिरौरी करके छुड़ा लाइत हैं,

दूसर दिन पुलिस फिर पकड के लइ जात है....कित्तौ हाथ-पाँव जोड़ो कहूँ कोऊ सुनवाई नाहीं है...' उसका नाम लीला प्रजापति था।

इस बीच वह साँवली सी औरत भी आँखें पोंछती हुई बोलने लगी, 'का बताइ बिटिया..हमहुँ परेसान घूम रहीं हैं...कहहुँ इंसाफ नाहीं....ई देखा हमका.. हमार बहुरिया हमरा हाथ मरोर दिहिस..औउर घर से बाहिर धकियाय दिहिस..'और अपना

सूजा हुआ हाथ दिखाने लगी। उसकी टेढ़ी मेढ़ी उँगलियाँ वाकई उसकी दुखभरी दास्तान का बखान कर रही थीं। 'दुइ महिना से हम भटक रहीं हैं बिटिया....'

'हमरे हियाँ औरतें परदा करती हैं, बाहर काम पर नहीं जातीं, पर ऊ कछु सुनत नाहीं काम क तो बहाना है बाहर जाइके यारीगिरी कराइ के है। शौहर की भी नाहीं सुनत...ससुर ऊ भी काम धंधा छोड़ के घर बैइठ गवा है। सराब पी के रात-दिन गाली-गलौज सर फुटव्वल होत है। तमासा देखे खातिर सब जमा हुइ जात हैं पर कोऊ बीच-बचाव खातिर नाहीं आवत....बहुरिया कहत है, जौऊ न पुलिस मा शिकायत करिहौ तो जान से मार देब....का करी.. कहाँ जाई....' बड़ी परेशान थी। उसका नाम फ़रीदा शेख़ था। लीला और फ़रीदा हसनगंज की सँकरी गलियों में एक दूसरे से कुछ ही फ़ासले पर रहती थीं।

'बिटिया हम तो भगवान से माँगत हैं, हमका उठाव लेव..' लीला हिलक-हिलक कर रो रही थी....'ऊ छिनाल का कोऊ कछु नहीं कहत, कीरा पड़डहै ऊके....'

फ़रीदा की आँखें भी गीली थीं। दुप्पटे से आँखें पोंछे जा रही थी। दुख दोनों का साझा था। फ़रीदा ने लीला का हाथ पकड़ रखा था और एक दूसरे को दिलासा दे रही थीं। दुख कहाँ भेद करता है!! तभी दरोगा साहब आकर धम्म से कुर्सी पर बैठ गए। उन्होंने मुँह में पान दबा रखा था। थोड़ी-सी तोंद थी, पर मूछें बड़ी ज़ोरदार थीं। वर्दी में लगे बैज से मालूम पड़ा कि उनका नाम दिवाकर अग्निहोत्री है। अग्निहोत्री साहब के बैठते ही लोग उठकर मेज़ के इर्द-गिर्द जमा हो गए; उन्होंने सब को एक नज़र देखा फिर अपनी-अपनी जगह बैठ जाने का आदेश देकर मोबाइल पर व्यस्त हो गए। सवा ग्यारह बज चुके थे। एस.पी.साहब का कहीं अता-पता नहीं था।

लीला बोली, 'साहब हमरऊ सुनो...हम 8 बजे से बैठी हैं....' उसे लगा यही बड़े साहब हैं।

दारोगा साहब तड़ाक से बोले, 'तो हम क्या करें...किसने कहा था तुमसे कि तुम 8 बजे से आ जाओ...दफ़्तर तो 10 बजे खुलता है....हमारा घर-बार नहीं है क्या?'

बेचारी चुप हो गई। लोग अपनी-अपनी अर्ज़ियाँ दिखाने लगे। न जाने आफ़शा को क्या सूझी, लीला और फ़रीदा की तरफ़दारी करने लगी।

'सर...इनकी बात...ऽऽऽ' दरोगा ने उसकी तरफ़ गौर से देखा और बोला...'जानता हूँ इनके केस को... पहली बार नहीं आई हैं....और मैडम ऽऽऽ...मैं बताऊँ आपको..ऽऽऽ...सारे क़ानून तो आप औरतों के हक़ में ही बने हैं...अब क़ानून तो अपना काम करेगा न। दहेज के लिए परेशान करना जुर्म है, मालूम है न आपको ऽऽ...सात साल की सज़ा है...' और क़ानून का पाठ पढ़ाने लगे।

'पर इसका तो कहना है कि बहू ने झूठा इल्ज़ाम लगा कर मुकदमा दायर किया है....इसको देखिए... लगता है क्या कि यह मार-पीट कर सकती है?'

'अच्छा...ऽऽ यह आप कैसे कह सकती हैं....क्या सच, क्या झूठ। आप जानती हैं इन्हें...आप थीं क्या वहाँ!! आप करेंगी निपटारा...ऽऽऽ?? चलिए बताइए क्या हल है इसका..!!' पान चुभलाते हुए अग्निहोत्री जी मुस्कराए।

'अरे नहीं... कम से कम इनकी बात भी तो सुनिए....' वाक्य बीच में ही अटक गया। उसी समय दरोगा जी का मोबाइल बज उठा। दरोगा साहब बोले... 'एक मिनट...!' और बाहर निकल गए। दूसरे लोगों को लिखित अर्ज़ियाँ देते देखकर लीला और फ़रीदा, आफ़शा से अपनी-अपनी अर्ज़ियाँ लिख देने की मिन्नत करने लगीं। आफ़शा क्या करती..दोनों की अर्ज़ियाँ लिखने बैठ गई। इस बीच दरोगा साहब वापस आकर दूसरे लोगों से बातचीत करने लगे। दोनों की अर्ज़ियाँ लिखने में आधा घंटा लग गया। एस.पी. साहब अभी तक नहीं आए थे। 11.40 हो गये थे। कुछ लोग अर्ज़ियाँ देकर सरक लिए थे। एस.पी. साहब के आने की उम्मीद भी कम रह गई थी। उसने सोचा 12 बजे तक तो इंतज़ार कर ही लेना चाहिए। थोड़ी देर में सूचना मिली कि साहब आज नहीं आएँगे, रैली बेक़ाबू हो गई है और वे वहीं अटक गये हैं।

आफ़शा को इतनी झुँझलाहट हो रही थी कि समझ नहीं पा रही थी क्या करे! मन ही मन उन रैली निकालने वालों को कोस रही थी। शहर में रोज़ कहीं न कहीं कुछ न कुछ होता ही रहता है। आए दिन रैली, मोर्चे, बंद, धरने पूरे शहर को बंधक बना कर रख देते हैं। सरकार का जितना पैसा, ताक़त और ऊर्जा इन सब में बरबाद होती है, इतना सब अगर शहर की तरक्की के लिए किया जाता तो सारी शिकायतें न दूर हो जातीं..पर..क्यों करें शिकायतें दूर....फिर जनता दरबार कैसे लगेगा ..!! कैसे लुभावने सपने दिखाये जाएँगे..... कैसे होगी सरकार की ताक़त की नुमाइश..!!

घर पहुँची तो 2 बज गए थे। बुरी तरह थक गई थी, दिमाग़ भन्ना गया था। इतने क़रीब से सरकारी काम-काज को देखने का यह पहला मौका था। वैसे अख़बारों और न्यूज चैनल्स में यही सब देखती और सुनती रहती थी। पर यही लगता था कि पत्रकार हर बात को इतना बढ़ा-चढ़ा कर बताते हैं, कि झूठ भी सच लगने लगता है। पर जब साबका पड़ा तो महसूस हुआ कि उसका हर क़दम इस लचर सिस्टम के गंदे गहरे दलदल में और भीतर तक धँसता जा रहा है। यह एक ऐसा तिलिस्म है जिसमें जो एक बार घुसा वह वहीं भटकता रह जाता है; क्योंकि इसके दरवाज़ों की चाभी किसी के पास नहीं है।

दूसरे दिन वह 10 बजे ही पहुँच गई। आज तय किया था कि 12 बजे तक तो बैठेगी ही, वहाँ से हिलेगी नहीं चाहे कुछ भी हो जाए। आज भी अच्छी ख़ासी भीड़ थी। बाहर गेट के पास पेड़ के नीचे बने चबूतरे पर भी लोग बैठे इंतज़ार कर रहे थे। उसका नंबर सातवाँ था। दरअसल एक-एक शिकायतकर्ता के साथ दो-एक और भी लोग आए होते हैं; इसलिए और भी ज़्यादा भीड़ लग रही थी। आज क़िस्मत अच्छी थी। साढ़े दस बजे एस.पी. साहब आते दिखाई दिए। उसने चैन की साँस ली। उनके आते ही बाहर खड़े संतरी से लेकर अफ़सर, सिपाही और मुलाक़ाती सब हरकत में आ गए।

पाँच मिनट बाद मुलाक़ातियों को एस.पी. साहब के कमरे में बिठाया जाने लगा। अच्छे-ख़ासे बड़े से कमरे में भारी-भरकम बड़ी-सी मेज़ और ऊँची सी कुर्सी रखी थी; जिसके सामने की ओर बीसेक गद्देदार कुर्सियाँ लगी थीं। कुर्सियों पर जितने लोग आ सके बैठ गए। बाकी कमरे में ही लाइन लगा कर खड़े हो गए। कमरे के बाहर भी बहुत से लोग खड़े हुए थे। थोड़ी देर बाद साहब भी आ गए। आते ही काम शुरू हो गया। दारोगा अग्निहोत्री, एस.पी. साहब की मेज़ के बगल में खड़े होकर एक-एक करके अर्ज़ियाँ निकाल कर लोगों को बुला रहे थे। यही दरोगा साहब बाहर विज़िटिंग रूम में कल बड़ा रौब गाँठ रहे थे। आज एस.पी. साहब की मेज़ की बगल में खड़े चुपचाप

अर्ज़ियाँ निकाल रहे थे और जी-जी करते नहीं थक रहे थे।

तीसरे नंबर पर जिसकी बारी आई, वह आदमी बेचारा बहुत थका-हारा दिख रहा था। आते ही हाथ-पाँव जोड़कर गिड़गिड़ाने लगा। उसकी आँखें गीली हो आई थीं।

'साहब बहुत दिनों से भटक रहा हूँ, मेरी लड़की एक महीने से ग़ायब है... स्कूल गई थी... घर वापस नहीं आई...थाने में रपट लिखायी है पर अभी तक कुछ पता नहीं चला.... साहब कुछ करें...।'

एस.पी. साहब ने काग़ज पर से नज़र उठाकर उसे देखा और छूटते ही बोले... 'क्यों...ऽऽ चक्कर-वक्कर चल रहा था क्या किसी के साथ....भाग गई होगी अपने यार के साथ...'

'नहीं...नहीं... साहब वो ऐसी नहीं है....' हाथ जोड़ते हुए घिघिआया वह।

'अच्छा.. ऽऽऽ तो कैसी है ...' साहब ने पूछा। अग्निहोत्री साहब भी आँखें तिरछी और मुँह टेढ़ा करके खिखियाये। पर साहब से आँख मिलते ही अर्ज़ियाँ उलटने-पुलटने लगे।

आफ़शा को बड़ा गुस्सा आ रहा था। यह क्या हिमाकत है। लड़की है तो ..भाग गई होगी....भला यह भी कोई बात हुई? एक मिनट नहीं लगा उस लड़की की इज़्ज़त उछालने में....पता लगाना तो दूर, उसके ऊपर बिना जाने बूझे इतना घटिया इल्ज़ाम लगा रहे हैं...कितनी गैर ज़िम्मेदाराना हरकत है, इतने ज़िम्मेदार आदमी की...यह भी तो हो सकता है कि कोई और वारदात हो गई हो। मन बड़ा कड़वा हो गया। एक सिपाही को उसकी अर्ज़ी थमाते हुए एस.पी.साहब बोले, 'भई देखना तो ज़रा इनकी शिकायत....'और इशारा करते हुए बोले... 'आप इनके साथ चले जाइए...' और वह आदमी उस सिपाही के पीछे हो लिया।

छठे नंबर पर 25-30 साल की एक औरत की अर्ज़ी थी। आते ही वह दुपट्टा आँख पर रखकर रोने लगी। एस. पी. साहब एकदम भड़क गए।

'पहले यह रोना-गाना बंद करो...यहाँ रोने-धोने और टसुए बहाने से काम नहीं चलेगा....क्या शिकायत है अग्निहोत्री इनकी बताओ ज़रा...'

'सर..दो साल हुए हैं इनकी शादी को...हसबैंड बहुत मारता-पीटता है...गाली-गलौज करता है, मारपीट करके घर से बाहर निकाल देता है। रोज़ बवाल करता है....उल्टे-सीधे इल्ज़ाम भी लगाता है।'

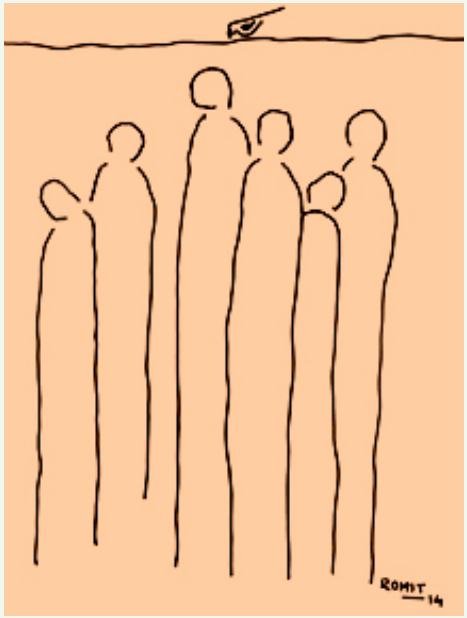

'लव मैरिज है या अरेंज्ड?'

'लव मैरिज...' वह औरत धीरे से बोली।

'मुझसे पूछकर की थी क्या?' दहाड़े एस. पी. साहब....'जो अब रोती हुई आ गई हो...!' सकपका गई वह औरत और तुरंत उसका रोना बंद हो गया।

'अर्ज़ी दे दीजिए...जाँच की जाएगी... अब ऐसा तो है नहीं कि बाकी सब केस छोड़कर आपके हसबैंड के पीछे सारी पुलिस फोर्स लगा जी जाए ...! कब शिकायत दर्ज करायी है ?'

'अभी दो दिन पहले...'

'क्या, दो दिन पहले...?' चौंके वे। 'और आप कह रही हैं कि कार्यवाही नहीं हुई...मेडिकल कराया?'

'नहीं सर...'

'जाइए, पहले ये सब फॉर्मेलटीज़ पूरी कीजिए फिर आइए..'कहते हुए अर्ज़ी उन्होंने अग्निहोत्री के हाथ में पकड़ा दी।

आफ़शा का दिल धड़क रहा था, कि उसे न जाने क्या-क्या सुनना पड़ेगा।

थोड़ी देर बाद आफ़शा का नंबर आ गया, वह अपना केस बता ही रही थी कि साहब का मोबाइल अचानक बज उठा। फ़ोन उठाते ही एस. पी.साहब इतने तपाक से उठ खड़े हुए मानो करंट लग गया हो।

उधर से कोई बड़ी भारी आवाज़ में उनसे बात कर रहा था और एस.पी. साहब बस 'सर...ऽऽ... जी...ऽऽ... जी हाँ यस सर.....ऽऽ सर, यस सर.....' कहे जा रहे थे।

साहब खड़े तो ऐसे हो गए जैसे उस तरफ़ का व्यक्ति फ़ोन पर ही उन्हें देख रहा हो, कि उन्होंने उसे सलाम बजाया कि नहीं।

आफ़शा सोच रही थी कि ज़रूर कोई बड़ा अफ़सर या नेता होगा जो एस.पी. साहब की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई। वे मोबाइल पर बात करते-करते तुरंत उठकर पास के कमरे में घुस गए। पाँच मिनट बाद बाहर आए और कुर्सी पर बैठकर दो मिनट तक सामान्य होने की कोशिश करते रहे। वे एस.पी. साहब जो अभी कुछ देर पहले लोगों पर ग़ुस्सा हो रहे थे, उनकी शिकायती अर्ज़ियों में मीनमेख निकाल रहे थे और लोगों की मजबूरियों और परेशानियों में अपना रुतबा ढूँढ़ रहे थे। अब थोड़ा नरम पड़ गए थे और अर्ज़ियाँ जल्दी-जल्दी पढ़ी जाने लगीं।

आफशा सोच रही थी कि यही दुनिया का दस्तूर है। नीचे वाले की गर्दन हर दम दबी ही रहती है। सब एक के ऊपर एक इस तरह से सवार रहते हैं कि सबसे नीचे वाले की आवाज़ तो घुटकर ही रह जाती है। पता नहीं कब तक यह सिलसिला जारी रहेगा? कब सबसे नीचे वाला अपनी पूरी ताकत लगाकर उठ खड़ा होगा और गर्दन सीधी करके अपने हक के लिए चिल्लायेगा... 'बस, अब बहुत हुआ!!!'

❐

RBC Dominion Securities

Tel : (905) 764-3582
Fax : (905) 764-7324
1800-268-6959

Professional Wealth Management Since

Hira Joshi, CFP
Vice President & Investment Advisor

RBC Dominion Securities Inc.
260 East Beaver Creek Road
Suite 500
Richmond Hill,Ontario L4B 3M3
Hira.Joshi@rbc.com

चायना बैंक

रामगोपाल भावुक

सालवई, जिला, ग्वालियर में रहने वाले रामगोपाल भावुक के मंथन, बाग़ी आत्मा, रत्नावली भवभूति, गूंगा गाँव, दयमन्ती-एकलव्य, उपन्यास तथा दुलदुल घोड़ी (कहानी संग्रह) हैं। परम्परा परिवेश, आभा, विजय स्मृति अंक, आस्था के चरण, कन्हर पद्माल, काव्य कुञ्ज आदि का संपादन किया है। मानस सम्मान 1998 म. प्र. तुलसी अकादमी, भोपाल, 'शक्तिसाधना सम्मान' 2000, गुजरात हिन्दी विद्यापीठ, अहमदाबाद,'भवभूति' उपन्यास के लिए जीवाजी वि.वि. के कुलपति द्वारा अभिनन्दन,'गूँगा गाँव' उपन्यास के लिए ग्यारह हज़ार रुपये का अखिल भारतीय समर स्मृति साहित्य अलंकरण-2005, से सम्मानित रामगोपाल भावुक अध्यापक हैं।

सम्पर्कः कमलेश्वर कालोनी (डबरा) भवभूति नगर, जिला -ग्वालियर

मोबाइलः07524-225027

मुझे उस दिन की याद भूली नहीं है। जब नगर भर में शोक व्याप्त था। उस दिन अरुणाचल की धरती पर नक्सली हमले में शहीद नरेश शर्मा की अर्थी आने वाली थी। नगर के लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी थी। उसके स्वागत में सड़क के दोनों ओर लोग पंक्ति बनाकर खड़े हो गए थे। सभी सोच रहे थे-कैसे स्वागत करें अपने इस सपूत का! आज कौन से वस्त्र उसे पहनाए जाएँगे? कौन सी समिधा उसे अर्पित की जाएँगी? कौन से पुष्प उसका स्वागत करने में समर्थ होंगे? कौन से शब्द उसके स्वागत में बोलना उचित होगा? सारे के सारे बौने प्रतीत हो रहे थे।

उसी समय तिरंगे में लिपटा उसका शव लोगों के सामने से गुज़रा। शहीद नरेश शर्मा ज़िन्दाबाद के नारों से आकाश गूँज उठा। धरती माँ का लाडला शहीद नरेश शर्मा ज़िन्दाबाद। हम सबका का प्यारा शहीद नरेश शर्मा ज़िन्दाबाद के नारों से नगर के गली-गलियारे रो उठे थे।

कोई कह रहा था-'इनकी बटालियन नक्सलियों की सर्च में निकली थी कि एक जगह उनसे सामना हो गया। उन्होंने फायरिंग शुरू कर दी, इनकी बटालियन संकट में पड़ गई। नरेश ने आगे बढ़कर उनका रास्ता रोका। अपने सभी साथियों को ख़तरे से बाहर निकाला और ख़ुद शहीद हो गया।'

दूसरा बोला-'सुना है, वहाँ हथियारों का जख़ीरा भी मिला है। उनके चीन में निर्मित होने के प्रमाण मिले हैं।'

तीसरे ने अपनी बात रखी-'हमारे देश में ये नक्सलवाद चीन की ही साज़िश है।'

मैं अर्थी के पीछे-पीछे मन ही मन उसके गुणों की प्रशंसा करते हुए मरघट पहुँच गया। वहाँ जाकर एक पटिया पर बैठ गया और सोचने लगा-

दो माह पूर्व मेरी बाईं आँख में मोतिया बिन्द आ चुका था। समय पर ऑपरेशन कराना अनिवार्य था। यह बात मैंने अपने पुत्र राजेन्द्र से कही। उसने देर नहीं की और नगर के श्रेष्ठ नेत्र चिकित्सक के पास ले गया। चिकित्सक बड़ी देर तक आँख का परीक्षण करता रहा। उसके बाद बोला-'आप लोग चाहें तो आज ही ऑपरेशन करा सकते हैं।'

राजेन्द्र बोला-'आप आज ही कर दीजिये।' यों उनकी बातें होती रहीं। मैं उनके चेम्बर के बाहर चला आया।

डॉक्टर ने दो बजे से ऑपरेशन करके, तीन बजे तक तो हमारी छुट्टी कर दी।

मैंने घर आकर राजेन्द्र से पूछा-'कितने रुपये लिये डॉक्टर ने?'

उसने कहा-'पच्चीस हज़ार। मैं क्या आप से माँग रहा हूँ ? अमरीकन लेन्स के पच्चीस हज़ार रुपये ही रेट थी।'

मैंने कहा-'यह तुमने क्या निर्णय लिया? मुझे तो देसी लेन्स डलवाना था।'

वह बोला-'आप लेखक हैं। आपकी एक आँख बचपन से ही कमज़ोर थी। मैंने यही सोचकर यह निर्णय लिया है। आपसे पूछता तो आप मानते नहीं। अब तो ऑपरेशन हो ही चुका है। अब आपको पढ़ने-लिखने में कोई परेशानी नहीं होगी।'

उसकी बात सुनकर मैं सन्तुष्ट सा हो गया। सोचा-चलो जो हुआ अच्छा ही हुआ। अब पढ़ने-लिखने में आसानी रहेगी। दूसरे दिन पट्टी खुल गई। पट्टी खोलने के बाद डॉक्टर ने कहा-'आप, आज से ही टीवी देख सकते हैं।' मैंने सोचा-चलो जो हुआ,अच्छा ही हुआ। आदमी की आँख है तो जहान है।

किन्तु इसके एक माह बाद ही मेरा इससे मोह भंग हो गया। मुझे पढ़ने के लिए चश्मा लगाना पड़ा तो मेरा पश्चाताप और बढ़ गया-अमरीकन लेन्स लगवाने का निर्णय ठीक नहीं रहा। इसके लगवाने से क्या लाभ हुआ? इससे तो अच्छा देसी लेन्स रहता। इतने पैसे भी नहीं लगते। विदेशी वस्तुओं पर टैक्स अधिक लगता है। इसीलिये वे महँगी मिलती हैं। हमारी देसी वस्तुएँ किसी से कम नहीं हैं। किन्तु विदेशी वस्तुओं के बारे में हमारा यह मोह ठीक नहीं है कि वे हमारी देसी वस्तुओं से सुपर होंगी ही। इससे एक तो मेरी स्वदेशी भावना की हत्या हुई, दूसरी ओर आर्थिक घाटा भी सहना पड़ा और कोई ऐसा बड़ा भारी लाभ भी नहीं हुआ; जिससे सन्तोष किया जा सके।

मेरे घर के वास एन्ड वियर का पाइप खराब हो गया था। अमरीकन लेन्स के सोच में डूबा में बाज़ार चला गया। दुकानदार से पाइप के लिए कहा। उसने मुझे एक सुन्दर सा चीनी पाइप लाकर पकड़ा दिया। मैंने उसके सील सिक्के देखकर कहा-'यह तो चीन में बना पाइप है।'

वह बोला-'सर, यह सस्ता और टिकाऊ है। कुल

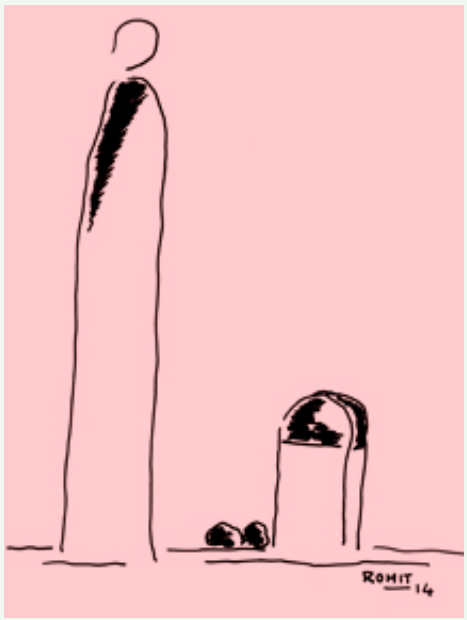

बीस रुपये का ही तो है।'

मैं समझ गया-यह कुल बीस रुपये का ही है। जिसे यहाँ तक लाने में कुछ व्यय हुआ ही होगा। फिर इस पर कुछ टैक्स भी लगा होगा। कितने में बनकर तैयार हुआ होगा यह? मैंने दुकानदार से कहा-'आप तो कोई देसी पाइप दें, मुझे यह नहीं चाहिए।'

उसने एक देसी कम्पनी का बना पाइप लाकर दिया, बोला-'यह पैंतीस रुपये का है।' मैंने देखा वह बहुत ही मज़बूत और टिकाऊ है। उसके पैंतीस रुपये देने में मुझे कोई कष्ट नहीं हुआ।

सामने चन्दन की लकड़ियों से चिता सजाई जा रही थी। चंदन की महक महसूस करके एक बोला-'शुद्ध चंदन है, तभी इतना महक रहा है।' मैं सोच रहा था-आने वाले समय में तो चायनीज़ मार्कवाला चंदन ही शुद्धता का प्रमाण होगा। उसी से शहीदों का अन्तिम संस्कार होगा।

इस समय याद आने लगी अपनी नेपाल यात्रा। वहाँ गली-गली में माओवादी पैदा हो गये हैं। वे चाहे जब ट्राफिक जाम कर देते हैं। इसी की बदौलत हमारी दस घन्टे की यात्रा अठारह घन्टे में पूरी हो सकी। दूसरे दिन देखा, वहाँ गली-गली में चीनी माल की भरमार है। हमें नेपाल का कोई उत्पादन नहीं दिखा। जो दिखा, वह चीन में निर्मित वस्तुएँ ही दिखीं। सबकी सब फेंन्सी वस्तुएँ। दिखने में बहुत सुन्दर। उन्हें ख़रीदने को जी ललचा उठे। इस तरह चीन ने वहाँ के बाज़ार को अपने कब्ज़े में ले लिया है। वह चाहता है, भारत में भी उसे इसी तरह का बाज़ार मिल जाए। फिर बाज़ार जिसका होगा राज्य भी उसी का ही होगा। उन दिनों इसी उधेड़बुन में मैंने नेपाल यात्रा की थी।

आज वही सोच घनीभूत हो रहा है।

चैत का महीना आ गया। इस वर्ष बेमौसम की बरसात के कारण फ़सल चौपट हो गई थी। फिर भी जो फ़सल बची थी कटने लगी। अच्छे भाव के चक्कर में मैंने उसका ऑन लाइन रजिस्ट्रेशन करवा लिया। शासन की यह नीति बहुत ही अच्छी लगी है। जिससे किसानों को सही मूल्य मिल सकेगा। मैंने अपनी सारी फ़सल शासन को बेच दी और निश्चिन्त हो गया। सात-आठ दिन में उसका चैक मिल गया।

मैं अपना चैक लेकर बैंक पहुँचा तो वे बोले-'यह तो चायना बैंक का चैक है। इसके लिए तो आपको उसी बैंक में खाता खुलवाना पड़ेगा।'

उसमें खाता खोलने की समस्या नहीं थी। किन्तु मुझे आश्चर्य हुआ ! ये क्या हो रहा है? फसल हमारी अपनी सोसायटी ने क्रय की है किन्तु चैक विदेशी बैंक का दिया है। सम्भव है सरकार हमारी फसल विदेशी धन से क्रय कर रही हो। विश्व के बड़े-बड़े देश बाज़ार खोजने के लिए ऐसी ही शर्तें लगाकर हमें क़र्ज़ दे रहे हैं।

मैंने दूसरे चैक के लिये चक्कर लगाए, वे बोले-'इसमें दस-पन्द्रह दिन लग जाएँगे, पहले चैक कैन्सिल करना पड़ेगा, फिर दूसरा बनने में समय लगेगा। पाँच सौ रुपये की बात है, नया खाता खोलने में घाटा नहीं रहेगा।'

मन मार कर नया खाता खोल लिया। उसमें चैक जमा हो गया।

दो दिन बाद ही एक फ़ोन आया। फ़ोन पर एक लड़की की सुरीली आवाज़ कानों में सुनाई पड़ी-'हलो, सर, मैं सुनयना बोल रही हूँ। हम आपसे से मिलना चाहते हैं।'

एक लड़की मुझ से क्यों मिलना चाहती है ? अनेक प्रश्न आकर खड़े हो गये, सब का एक ही उत्तर सुनाई दिया-मिलने में क्या हर्ज़ है, यह सोचकर कह दिया-'कहाँ मिलना है? आदेश करें।'

'आप हमारी चायना बैंक में आकर मिल सकते हैं?'

'क्यों?'

वही सुरीली आवाज़ कानों में फिर से गूँजी-'सर, आप यदि अपनी रकम हमारे यहाँ फिक्स करते हैं तो हमारी बैंक अन्य दूसरी बैंकों से अधिक ब्याज देती है। आपका धन विश्व स्तर पर सुरक्षित रहेगा। आप चाहे जब कहीं भी ले सकते हैं।'

मैं इस लुभावने प्रलोभन का अर्थ समझ गया। ये

येन केन प्रकारेण हमारे देश का धन अपने पास एकत्रित करना चाहते हैं। मैंने उत्तर दिया-'क्षमा करें, मेरे पास जितना धन है वह पहले से ही बुक है। एक पैसा भी नहीं बच पा रहा है।'

लड़की बोली-'कोई बात नहीं, जब भी कभी सेव करें, हमें सेवा का अवसर अवश्य दें।'

मैंने बात टालने के लिए कह दिया-'जी, पैसा बचा तो ध्यान रखूँगा।'

वह बोली-'हमें उम्मीद रहेगी, आशा है, आप अपना वचन याद रखेंगे। धन्यवाद।' और फ़ोन कट गया। मुझे व्यावहारिक झूठ बोलना खला, किस तरह उसने मुझे अपनी बातों में ले लिया था। किन्तु मैंने उसके याद दिलाने पर भी अपने वादे की कभी चिन्ता नहीं की।

मैं यही सोचते हुए जूते पहनने के लिये एक जूते वाले की दुकान पर पहुँच गया।

उसने जाने कितनी वैराइटियों के चीन में बने जूते मेरे सामने पटक दिये और बोला-'आप तो पसन्द कर लें, बहुत ही टिकाऊ हैं। हमारे पास अभी और भी वैराइटियाँ है।' उसी समय मेरा एक मित्र भी वहाँ जूते पहनने आ गया। वह अपने पुराने जूते दिखलाते हुये बोला-'मैंने इन्हें साल भर पहले पहना था। बहुत ही हल्के हैं। वजन तो इनमें बिल्कुल नहीं हैं। पैर बड़े आराम में रहता है। मुझे ऐसे ही जूते और चाहिए।' उसकी बातें सुन कर मैं चुप रह गया था। सोचने लगा-विश्व बाज़ार किस तरह हमारे देश में भी पैर पसार रहा है।

मैं अपने कमरे में था। एक बिसाँती हमारे आँगन में अपनी दुकान फैलाए बैठा था। मोहल्ले भर की औरतें उसे घेरे हुए बैठीं थीं। वह चीन में बनी फेन्सी वस्तुएँ लिए था। तरह-तरह की नई-नई लुभावनी चूड़ियाँ, नेल पॉलिश, लिपस्टिक एवं तरह-तरह के फेन्सी बिछिये, तोड़ियाँ तथा गले के लिए चेन सभी औरतों के मन को लुभा रही थीं। वह दुकानदार उनके सस्ती और टिकाऊ होने का दावा कर रहा था। उसने उन औरतों को अपनी बात से प्रभावित कर लिया। सभी लूट का माल समझकर उससे ढेर सारी चीज़ें ख़रीद रही थीं। वे सोच रही थीं, आज मिल रही हैं कल ऐसी सुन्दर चीज़ें ना भी मिलें।

मैं उन्हें रोकने के लिये कुछ नहीं कर पा रहा था। बे-बस होकर हाथ पर हाथ धरे चुपचाप कमरे में बैठा-बैठा उन्हें ताकता रहा। कैसे बाज़ार पसर कर हमारे घर आँगन तक आ पहुँचा है! इससे कैसे बचें? मैं समझ गया अब इन्हें रोक पाना हमारे वश की बात नहीं है। यह सोचते हुए मैंने कायरों की तरह अपना मुँह ढँक लिया था।

ठीक सामने उस शहीद के पाँच वर्षीय पुत्र के, नाई छुरे से बाल घोंट चुका था। शहीद पिता का अन्तिम संस्कार करने उसे सफेद वस्त्र पहना दिए गए। बी एस एफ की बटालियन ने शहीद नरेश शर्मा को शस्त्र झुकाकर सलाम दी। मैं सोच रहा था, यह सलाम विरलों को ही नसीब होता है। उसकी नवादा पत्नी और उसके बालक को देखकर उपस्थित जन समूह की आँखें डबडबा आईं

अग्नि संस्कार के बाद सभी ने चन्दन की लकड़ी उसकी चिता को अर्पित की और परिक्रमा दी।

मैं सोच रहा था-ये बड़े-बड़े शक्तिशाली देश पूरे विश्व में सभी तरह के हथकन्डे अपनाकर अपना वर्चस्व कायम करने में लगे हैं। सम्भव है किसी दिन विदेश के लेबल लगे कन्डों से हमें अपने स्वजनों का अन्तिम संस्कार करना पड़े। यों मन ही मन सिर घुनते हुये मैं मरघट से लौट आया था।

❐

बड़ी हो गई हैं ममता जी....

वंदना अवस्थी दुबे

कत्थक नृत्य और गायन में स्नातक। पाँच वर्षों तक आकाशवाणी छतरपुर में अस्थायी उद्घोषिका के रूप में कार्य करने के बाद दैनिक देशबंधु- सतना में उप सम्पादक/फ़ीचर सम्पादक के रूप में बारह वर्षीय दीर्घ कार्यानुभव, वर्तमान में निजी विद्यालय का संचालन, स्वतंत्र पत्रकारिता और लेखन कार्य। पहली कहानी दस वर्ष की उम्र में प्रकाशित हुई, दैनिक जागरण झाँसी के बालजगत में उसके बाद तमाम पत्र /पत्रिकाओं में नियमित प्रकाशन। वर्ष 1986 में म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा आयोजित कहानी रचना शिविर में प्रदेश स्तर पर कहानी 'हवा उद्दंड है' प्रथम घोषित। आकाशवाणी की नियमित कथाकार। वर्ष 1990 में विंध्य क्षेत्र की पहली महिला पत्रकार का सम्मान।
संपर्क : केयर पब्लिक स्कूल, ओवर ब्रिज के पास, मुख़्त्यार गंज, सतना, म.प्र. 485001
मोबाइल : 9993912823
ईमेल : vandana.adubey@gmail.com

'दुलहिन ओ दुलहिन.....
देखना ज़रा, मटके वाली निकली है क्या?'

अम्मा जी का ध्यान पूजा से हट कर मटके वाली की आवाज़ पर चला गया था, और आदतन उनकी ज़ुबान 'दुलहिन-दुलहिन' पुकारने लगी थी।

बस यही आदत ममता जी को बिल्कुल पसंद नहीं। अब पूजा करने बैठी हैं तो पूरे मन से भगवान को याद कर लें। भगवान का भजन कर रही हैं; माला फेर रही हैं, लेकिन कान और ध्यान गली में है। अस्सी पार कर चुकी हैं, लेकिन घर-गृहस्थी से मोह-भंग अभी तक नहीं हुआ। पूरे दिन.....दुलहिन ये कर लो, दुलहिन वो कर लो....उफ़!! तंग हो जाती हैं ममता जी। आख़िर उनकी उम्र भी तो अब लड़कपन वाली नहीं रही। तीन-तीन युवा बेटे-बेटियों की माँ हैं, लेकिन अम्मा जी अभी तक नई नवेली दुल्हन की तरह नचाये रहती हैं। उनकी ज़ुबान पर बस दो ही नाम रहते हैं, एक तो भगवान का दूसरा ममता जी का।

वैसे अम्मा जी भी क्या करें, ले दे कर इकलौती बहू हैं ममता जी। अपनी सारी इच्छाएँ, सारे शौक़ अपनी इस इकलौती बहू में ही तो साकार करती आई हैं वे। और ममता जी भी बस! अम्मा जी की आवाज़ों पर चाहे कितना भी क्यों न झल्लाएँ, लेकिन उनका हर काम अम्मा जी से पूछ कर ही होता है। सब्ज़ी क्या बनेगी? मठरी में मोयन कितना देना है? किस अचार का मसाला कितना और कौन सा मिलाया जाएगा, मूँग की बड़ी बनाने के लिये क्या-क्या चाहिए, सब अम्मा जी ही बताती हैं। जबकि तीस वर्ष पुरानी दुल्हन पचास वर्षीया ममता जी के हाथ अब अम्मा जी की विधियों के अनुसार ही अभ्यस्त हो चुके हैं। लेकिन तब भी ममता जी की पूछने की और अम्मा जी की बताने की, आदत सी हो गई है।

रोज़मर्रा की साधारण सी सब्ज़ी भी बनानी होगी, तो अम्मा जी विधि बताना शुरू कर देंगी। और झल्लाती हुई ममता जी का बड़बड़ाना शुरू हो जाएगा-

'अरे आता है मुझे, सब्ज़ी बनाना। बुढ़ापा आ गया है मेरा, फिर भी रोज़-रोज़ सब्ज़ी की वही विधि बताने का सिलसिला ख़त्म नहीं कर पा रहीं अम्मा जी। रट गईं हैं सारी विधियाँ.....'

लेकिन इस बड़बड़ाहट का स्वर बस उतना ही ऊँचा होता; जितना उन्हें स्वयं सुनाई दे। इसीलिये तो पिछले तीस सालों से अम्मा जी का विधि बताना और ममता जी का बड़बड़ाना एक साथ जारी है। अम्मा जी के सामने ममता जी ने उनका कभी विरोध नहीं किया। कोई भी पकवान भले ही ममता जी अपनी विधि से बनाएँ; लेकिन उसकी भी विधि अम्मा जी से पूछना और फिर उस विधि को पूरा सुनना शायद ममता जी द्वारा अम्मा जी के प्रति

सम्मान प्रकट करने का ही एक तरीका है।

पचास वर्षीया ममता जी पूरे दिन अम्मा जी की आवाज़ पर यहाँ-वहाँ होती रहती हैं। खीजती भी रहती हैं, लेकिन अम्मा का 'दुलहिन' शब्द जैसे उनमें नव-वधु के जैसी ऊर्जा का संचार करता रहता है। अपनी बढ़ती उम्र का अहसास ही नहीं हो पाता उन्हें। माँ को इस कदर काम में जुटे देख कर कभी-कभी बच्चे भी दादी को छेड़ देते हैं-'दादी, अब तो पूजा-पाठ में ध्यान लगाओ। कुछ दिनों में ही माँ की भी बहू आ जाएगी, तब भी तुम ऐसे ही 'दुलहिन-दुलहिन' करती रहोगी? अरे तुम्हारी बहू अब सास बनने वाली है, अब उनमें भी तो कुछ सास वाले गुण आने दो।'

लेकिन अम्मा जी पर कोई असर नहीं होता। उल्टे झिड़क देतीं-

'अरे हटो रे....अपनी बहू को उसे जैसे रखना हो रखे, मुझे तो बहुएँ बहुओं की तरह ही अच्छी लगती हैं। फिर तुम्हारी माँ बूढ़ी हो गई है क्या? अभी उसकी उमर ही क्या है? अभी तो मैं बैठी हूँ, उसकी बड़ी-बूढ़ी। अभी खेलने-खाने दो उसे। बड़े आए सास बनाने वाले.....।'

और अपनी माँ के 'खेलने-खाने' की कल्पना मात्र से बच्चे हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाते। फिर शुरू हो जाता अम्मा जी का बड़बड़ाना जो देर तक चलता।

कितना मना करती हैं ममता जी, लेकिन इन बच्चों को उन्हें छेड़ने में ही मज़ा आता है। अभी पिछले रविवार को ही बच्चों ने मन्दिर जाने का प्लान बनाया। मन्दिर जा रहे थे, सो अम्मा जी को तो जाना ही था। बच्चों ने ज़िद पकड़ ली- 'अम्मा अपनी नई चप्पलें ही पहनना। नहीं तो जब भी मन्दिर जाती हो अपनी वही स्पेशल टूटी चप्पल निकालती हो।' अम्मा जी ने बहुत मना किया लेकिन बच्चों की, 'कोई मिल गया तो?' जैसी दलीलों के आगे परास्त हो गईं अपनी नई चप्पलें पहन के चल दीं।

मन्दिर के अन्दर पहुँचते ही भगवान् के ध्यान के स्थान पर चप्पलों की चिंता ने अपनी जगह बना ली। हर दो मिनट के अन्तराल पर- 'कोई चप्पल न चुरा ले कहीं' का भजन अम्मा करती रहीं। मन्दिर से निकलने पर वही हुआ; जिसका अम्मा को डर था। चप्पलें अपनी जगह पर नहीं थीं। किसी ने पार कर दी थीं।

अब क्या था! अम्मा लगीं ज़ोर-ज़ोर से चोर और उसके खानदान को कोसने! जैसे-तैसे उन्हें चुप कराया गया। नंगे पाँव चलने में उन्हें दिक्कत हो रही थी, लेकिन किसी की भी चप्पल पहनने से उन्होंने इंकार

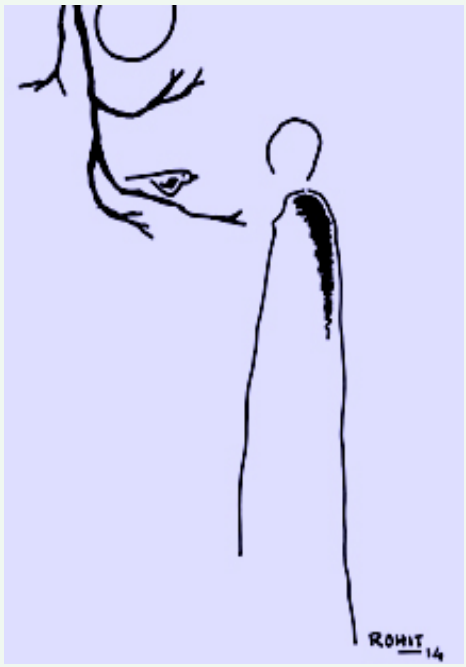

कर दिया। मारे गुस्से के रिक्शे पर भी नहीं बैठीं। बच्चों ने बहुत समझाया, लेकिन बच्चों से ही तो नाराज़ थीं वे। जैसे-तैसे घर आया और गेट खोलने से पहले ही बच्चों की लानत-मलामत शुरू हो गई। जैसे चप्पलें नहीं कोई अनमोल खज़ाना चोरी हो गया हो।

लेकिन ये क्या? घर के बरामदे में पाँव रखा ही था, की अम्मा जी की चप्पलें उनका इंतज़ार करती मिलीं। अब तो पूरा मामला अम्मा जी और ममता जी दोनों को ही समझ में आ गया। और अब तक संजीदगी का अभिनय करते बच्चे लोट-पोट हो रहे थे, उधर अम्मा जी कभी इसका तो कभी उसका कान पकड़ रही थीं।

'दुलहिन....' सोच-विचार में डूबी ममता जी की तंद्रा अम्मा जी की आवाज़ से भंग हुई।

'दुलहिन कल करवाचौथ है, थोड़ा सा चावल तो भिगो दो लड्डू के लिए।'

'ठीक है।' कह ममता जी चल दीं।

'थोड़ा दही भी जमा लो। कल आलू कढ़ी बन जाएगी तुम्हारे लिए।'

'अच्छा ठीक है।' चावल निकाल ही रही थीं कि फिर आवाज़ आई-

'दुलहिन....करवा वाली निकली है... ख़रीद तो लो।'

उफ़.....उफ़.....उफ़.....

कुछ काम अम्मा जी ख़ुद क्यों नहीं कर लेतीं? करवा वाली जा रही है, तो उसे रोक लें, ख़रीद लें। लेकिन नहीं। बाहर आराम कुर्सी पर बैठ कर 'दुलहिन-दुलहिन' करना उन्हें ज़्यादा पसंद है। पता नहीं कब बड़ी हो पाएँगी ममता जी! लेकिन प्रत्यक्ष में हाथ का काम छोड़ कर बाहर पहुँच चुकी थीं, ममता जी।

सुबह से अम्मा जी की ताक़ीदें शुरू हो गई थीं। अरे दुलहिन, ज़रा जल्दी से नहा-धो लेना। और देखो, प्यासी न रहना। नहा के दूध कॉफी जो पीना हो, पी लेना। न भूखा रहना है, न प्यासा। ममता जी को याद है, तीस साल पहले जब ममता जी ब्याह के आई थीं और उनकी पहली करवाचौथ पड़ी थी, तो अम्मा जी ने अपने स्वभाव के विपरीत न केवल उन्हें पानी पीने को कहा बल्कि फलाहार भी जबरन ही करवाया।

पिछले तीस सालों से ये सिलसिला जारी है। कोई भी व्रत हो, अम्मा जी की ताक़ीदें शुरू हो जाती हैं। और ममता जी सर झुकाए नई-नवेली दुल्हन की तरह आज्ञा का पालन करती जातीं।

'दुलहिन भारी साड़ी पहनो, पायल पहनो.....पूजा की तैयारी ऐसे करो...वो काम वैसे करो...।'

फिर आदेश, फिर झल्लाना, और फिर पालन। लगता था जैसे ये सिलसिला आजन्म चलता रहेगा। प्रकृति के साथ-साथ।

लेकिन ऐसा कभी हुआ है?

ममता जी स्तब्ध हैं!! समझ ही नहीं पा रहीं की ये क्या हुआ!! अब वे क्या करें? हर पल आदेश देने वाली अम्मा जी चली गईं? लेकिन ऐसे कैसे जा सकतीं हैं? रात में तो अच्छी-भली थीं। खाना भी खाया था। लेकिन ऐसी कैसी सोईं कि अब उठने को भी तैयार नहीं? किससे पूछें? क्या करें?

कमरे में अम्मा जी का पार्थिव शरीर रखा है। लोग आ रहे हैं, जा रहे हैं। अम्मा जी को ले जाने की तैयारियाँ हो रही हैं। ममता जी अब भी बेख़याली में हैं। कोई क्या कह रहा है, उन्हें कुछ भी सुनाई ही नहीं दे रहा। उन के कानों में तो बस 'दुलहिन-दुलहिन' की आवाज़ें आ रही हैं।

अम्मा जी को ले गए हैं लोग। ख़ाली घर, ख़ाली दिल, ख़ाली दिमाग़ और कान?? नहीं.....कान ख़ाली नहीं हैं।

ममता जी ने ख़ूब ज़ोर से अपने कान बंद कर लिए हैं, कहीं 'दुलहिन' शब्द बाहर न निकल जाए।

अम्मा के जाते ही अचानक बहुत बड़ी हो गई हैं ममता जी। उम्र के पचासों वर्ष जैसे घेर कर खड़े हो गए हैं उन्हें।

बड़प्पन का यह अहसास चाहा था उन्होंने? यक़ीनन नहीं।

❐

कारावास

उषा वर्मा

यूके की उषा वर्मा, हिन्दी, अंग्रेज़ी, उर्दू, बँगला भाषाओं की ज्ञाता हैं। कहानी, कविता, आलोचना और अनुवाद आदि विधाओं में रुचि रखती हैं। क्षितिज अधूरे, कोई तो सुनेगा (कविता संग्रह), कारावास (कहानी संग्रह), साँझी कथायात्रा, प्रवास में पहली कहानी (सम्पादित), हाऊ डू आई पुट इट ऑन (अनुवाद) पुस्तकें हैं। पद्मानंद साहित्य सम्मान, निराला साहित्य सम्मान, शाने अदब, अभिव्यक्ति साहित्य सम्मान, अक्षरम साहित्य सम्मान से सम्मानित सम्प्रति-केम्ब्रिज वि. वि. में हिंदी साहित्य एवं हिंदू धर्म परीक्षक हैं। अवकाश प्राप्त(सीनियर लेक्चरर,लीड मेट्रोपॉलिटन वि.वि.) उषा जी स्वतंत्र लेखक हैं।
संपर्कः 33 ईस्ट फील्ड क्रेज़ेन्ट, यॉर्क, यॉर्क-Yo10 5HZ U.K
ईमेल-ushaverma9@hotmail.com

आज डॉ. अनिला को अपना घर छोड़ कर नर्सिंग होम जाना है। सुबह से ही उनके मन पर एक तरह की घबराहट तारी है। रात भर वह ठीक तरह से सो भी नहीं सकीं। डॉक्टर ने ही सब इन्तज़ाम कर दिया था। बार-बार भूल जाना ही उनकी परेशानी है। कभी गैस खुली छोड़ दी, कभी पानी नल से बहता रहा। अभी पिछले हफ़्ते ही की बात है, बाहर के दरवाज़े में चाबी लगी छोड़ दी; आधी रात घंटी की आवाज़ सुनते ही घबड़ा कर उठीं। दरवाज़े पर पुलिस खड़ी थी। उसने अनिला की घबड़ाहट देख कर उसे धीरज बँधाया और कहा, 'परेशान होने की कोई बात नहीं है। बस आप अपनी चाबी लेकर दरवाज़ा अंदर से लॉक कर लें और आराम से सो जाएँ।' तब कहीं जाकर उसकी कँपकँपी बन्द हुई। उन्होंने डॉक्टर से बार-बार पूछा था वह वापस कब आएँगी, पर उसे कोई सीधा जवाब नहीं मिलता। यों तो वह एकदम ठीक हैं बस कभी-कभी भूल जाती है। किन्तु ख़ुद डॉक्टर हैं, सब कुछ समझती हैं। यहीं न्यूकासल के अस्पताल में सारे जीवन काम किया था। फिर यहीं से रिटायरमेंट लेकर सोचा था, अभी तक जो कुछ नहीं कर पाईं हैं, अब करेंगी। पैसा ख़ूब था ही, अकेली जान। बड़े शौक़ से रहती थीं। अपने को जितना भी हो सकता था, बदल दिया था। भारत छूटा तो उस संस्कृति को भी त्याग दिया। रंग को छोड़ कर बाकी सब कुछ झाड़-पोछ कर साफ़ कर दिया था। भारत जातीं तो छोटे भाई बहनों के लिए अच्छे-अच्छे उपहार ले जातीं, कभी बाहर खाना खिलाने, कभी घुमाने। अतः भाई बहन उन्हें घेरे रहते, चाहते वह उन्हीं के पास रहें। पर वह कहतीं मुझे अपने लिए थोड़ा सा वक़्त चाहिए। घर पर नहीं ठहरती थीं, किसी बड़े होटल में रुकतीं।

छोटा भाई बुलू कहता,'दीदी मेरे पास यहीं घर पर रहो न।'

'ना, ना बुलू मेरी तो इन्डिपेन्डेंट रहने की आदत पड़ गई है। तेरे पास तो आती रहूँगी।' बुलू से बहुत लगाव था। सारे जीवन मेंटल अस्पताल में काम किया था। पर अब वह ख़ुद ही.... फिर भी सोचतीं भूलने के लिये कोई अपना घर थोड़े ही न छोड़ देता है। सोचा इंडिया से छोटी बहन को बुला लें। अब टिकट ख़रीदने की तमाम झंझटें, कैसे क्या करें। इसी समय सैली आ गई। सैली से उनकी जान-पहचान अस्पताल में हुई थी। सैली नर्स थी। लम्बी दुबली आनंदी स्वभाव की। अपने काम में होशियार। अनिला दो महीने की छुट्टी लेकर यूरोप भ्रमण के लिए गईं तो सैली को साथ ले गईं दो महीने लगातार साथ रहने से अनिला को सैली के उदार हृदय को समझने का मौका मिला। सैली अपना काम बड़ी ईमानदारी तथा लगन से करती थीं। उमर में छोटी होने पर भी उन्होंने अनिला को

सदा सहारा दिया। सैली को लेकर एक ट्रैवेल एजेंट के पास गईं, सब पता लगा कर वापस आ गईं बहन को फ़ोन किया, उसने बताया कि टिकट तो यहाँ के मुकाबले भारत से रुपयों में ख़रीदने में सस्ता पड़ेगा। सैली ने भी कहा कि फिर तो तुम रुपये भेज दो, वही आसान रहेगा। घर आकर एक हफ़्ते बाद बैंक से पैसे भेज दिए।

बहन को लगा अपना घर-बार छोड़ कर कहाँ चली जाए, फिर सोचा चलो इसी बहाने घूम भी आएगी। अब पैसे तो आ ही गए हैं। हफ़्ते बाद बहन आ गई। अनिला बेहद खुश हुईं बहन के साथ बाज़ार जाती, शॉपिंग करतीं। फिर अपने दोस्तों से मिलातीं। समय भाग रहा था। फिर बहन ने कहा, 'अन्नू मैं जब आई हूँ तो यूरोप भी घूम आती हूँ। इसीलिए मैं वीज़ा भारत से ही बनवा कर लाई हूँ।' अनिला ने कहा, 'ठीक है, तुम घूम आओ, मेरी तबीयत ठीक रहती तो मैं भी साथ चलती।' एक महीने का यूरोप का टिकट भी आ गया। बहन यूरोप घूमने में इतनी व्यस्त हो गई कि यह भूल गई कि वह क्यों यहाँ आई है। वापस आने पर भी ख़ूब घूमना, बहन के साथ दावत खाना बस इसी सब में समय निकल गया। उनका वीज़ा ख़तम हो रहा था। अनिला चाहती थीं कि वह और रहे पर बहन का मन भर गया था। वह तमाम उपहार लेकर वापस चली गई।

अनिला अकेली ज़िन्दगी से जूझने का प्रयास करती रहीं। उन्हें इस बात का एहसास होने लगा कि समय के साथ-साथ, रिश्ते भी बदल गए हैं, कोई चीज़ पहले की तरह नहीं रह गई। लेकिन डॉक्टर का कहना है कि घर में अकेले रहना उनके लिए सेफ़ नहीं है। नर्सिंग होम जाना ही होगा। अनिला ने अपनी दोस्त को बुलाया, कुछ सलाह लेगी क्या सामान ले जाए या क्या करे। उठीं, बाथरूम से जो ज़रूरी लगा टूथ-ब्रश, साबुन, छोटा तौलिया वग़ैरह एक बैग में भर कर रख लिए। बेड रूम में एक छोटा सा सिपाही रक्खा था उसे उठाया, फिर रख दिया सोचा दो-तीन महीने में वापस आ जाएँगी। लेकिन मन नहीं माना उसे अपने बैग में रख लिया। छोटा भाई बुलू जब पहली बार लखनऊ गया था तो लाया था, बड़े ही उत्साह से भाई दूज पर दिया था, बोला था-'मैं तुम्हें इस बार रुपये नहीं दूँगा। दीदी यह सिपाही तुम्हारे पास रहेगा।' यह सोच कर उसे अपने पर्स में डाल लिया। क्या पता कब आना हो साथ रखना ही ठीक होगा। फिर और सामान रखने लगीं थोड़ा सामान रख कर थक गईं थी अतः बैठ गईं। टुकड़ों-टुकड़ों में अतीत सामने आता, लुभाता और

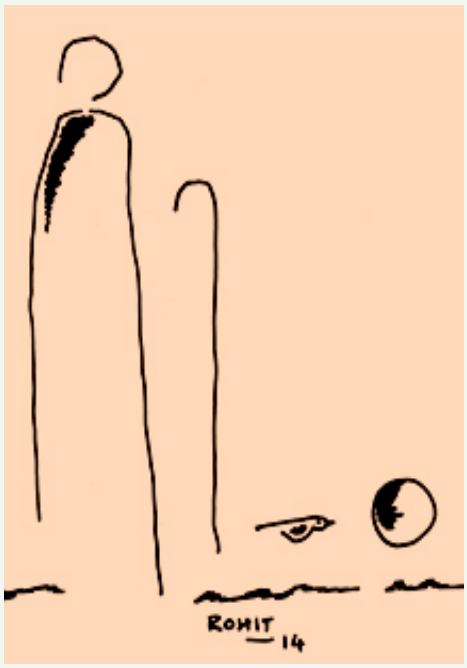

अदृश्य हो जाता। इसी समय सैली आ गईं इधर उधर की बातें करती रहीं। फिर अपनी अटैची में अपनी पसंद के कपड़े रखे, अटैची की जेब में कुछ चिठ्ठियाँ रखी थी उन्हें निकाला। एक पत्र खोला लेकिन आँखें बन्द कर लीं मानों भीतर की आँखों से पढ़ रही हैं। धीरे से बोलीं, 'ग्रैहम आज मुझे सबसे ज़्यादा तुम्हारी ज़रूरत थी लेकिन....'। और घबराहट को छिपाने की कोशिश में जल्दी-जल्दी सैली से कुछ न कुछ बातें करने लगीं।

'सैली, तुम तो आओगी न। मेरा वहाँ कैसे मन लगेगा।' फिर ख़ुद ही बोली 'अख़बार तो रहेगा ही और शायद कुछ मैगज़ीन भी मिल जाए।' सैली ने बड़ी ही कोमल आवाज़ में कहा, 'घबराओ नहीं, जब तुम्हारा मन हो फ़ोन करना, मैं कोशिश करुँगी आने के लिए।' फिर धीरे से हँसी, 'अनिला क्या पता तुम्हें वहाँ कोई ऐसा दोस्त मिल जाए कि तुम्हें मेरी याद ही न आये।' अनिला की आँखों में उदासी की एक झीनी परत उतर आई। आँखें बन्द कर लीं, सर दीवार से टिका लिया। मुस्करा कर धीरे से बोलीं, 'हाँ याद ही न आए वही अच्छा है।' उसी समय घंटी की आवाज़ सुन कर वह हड़बड़ा कर उठी।, ऐम्ब्यूलेंस देख कर सैली गई और दरवाज़ा खोल दिया। अनिला-'टाइम टु गो।' हाथों को मलते हुए सारे घर को देखने लगीं, मन को सहारा देने के लिए धीरे से बोलीं, 'सब कुछ ठीक है, मैं जल्दी ही वापस आऊँगी।' उनके काँपते हाथों को पकड़ कर सैली ने कहा, 'मैं कल ही तुमसे मिलने आऊँगी। अपना ख़याल रखना।'

ऐम्ब्यूलेंस चली जा रही थी। जितनी दूर तक निगाह जा सकती थी वह घर को देखती रहीं फिर आँखों में भर आए आँसुओं को रुमाल से दबा कर सोख लिया। यही जीवन है। उनकी मंज़िल आख़िर आ गई। ऐम्ब्यूलेंस का दरवाज़ा खुला। सहारे के लिये बढ़े दो हाथों को पकड़ कर उतर पड़ीं और धीरे-धीरे बिल्डिंग के अंदर चली गईं। नर्स आगे बढ़ कर उनको रूम नम्बर 8 में ले गई। थोड़ी देर बेड पर बैठी रहीं फिर खिड़की के पास जाकर खड़ी हो गईं। ख़ूब पानी बरस रहा था। खिड़की पर से फिसलता हुआ सारा पानी नीचे बहता जा रहा था। ठीक इसी तरह उनके दिमाग़ पर से भी सब कुछ फिसल जाता है। लेकिन कहीं कुछ है, जो बाँधता है, बिजली सा चमक कर चारों तरफ़ उजाला ही उजाला कर देता है। बचपन के उन दिनों में जब चाची अपने मायके जाती थीं और अपने सभी बच्चों को माँ के पास छोड़ जाती थीं। क्या नाम दें उन अनाम रिश्तों को, सभी भाई बहन इधर-उधर बराबर के थे। आपस में लड़ाई झगड़ा आम की गुठली किसे मिली। तब किसे इतनी चालाकी आती थी कि गुठली में तो कुछ भी नहीं रहता बस लड़ाई होती तो बड़ी बहनें दोनों तरफ़ बच जाती। सारी डाँट उनको और शरत को ही पड़ती। सज़ा भी मिलती। सज़ा का तो कोई दुःख न था, किन्तु जब बड़ी बहने हँसती तो आग लग जाती। पर कर कुछ भी न पाते। शरत को बड़ा अच्छा लगता कि इतनी लड़कियों के बीच में वह अकेला लड़का है। उन दिनों घर की छत पर खपड़े छाए जाते थे। अक्सर ही गेंद अटक जाती थी। कोई न कोई नौकर रहता जो उतार देता। पर उस दिन घर पर कोई न था, एक गेंद जा कर कहीं अटक गई। अब छत पर कौन जाए। एक सीढ़ी लगाई गई जब शरत ऊपर चढ़ गया। गेंद नीचे फेंक दिया तो बड़ी दीदी ने सीढ़ी खींच ली, बस फिर क्या था अनिला गला फाड़ कर पूरी ताक़त से चिल्लाई। 'सीढ़ी लगाओ, सीढ़ी लगाओ' शरत बड़ी शान में चिल्लाया 'अरे मैं तो यहाँ से कूद सकता हूँ।' अनिला यादों में डूबी सब भूल गई, कहाँ बैठी है। बड़े ज़ोर से चिल्लाई, 'नहीं, नहीं' नर्स दौड़ कर आई। क्या हुआ, क्या हुआ कहती हुई अनिला से बार-बार पूछने लगी।'कुछ नहीं मैं एकदम ठीक हूँ। कोई बात नहीं।' अनिला फिर अपनी दुनिया में लौट गई।

अब अनिला क्या नाम दे उस रिश्ते को, फिर आज शरत क्यों बार-बार उनकी यादों पर दस्तक दे रहा है। छह साल की उम्र का वह रिश्ता कैसा था। उस संसार में सिवाय एक दूसरे के साथ खेलने के उछल-कूद करने

के और था ही क्या। उन्हीं दिनों अस्पताल में एक नए डॉक्टर आए थे। उनके तीन बच्चे थे। फिर सब कभी-कभी अस्पताल चले जाते, वहाँ कोई रोक-टोक करने वाला न था। अस्पताल के हाते में लम्बे बड़े-बड़े आम के पेड़ थे, शरत के पापा वहाँ जाते थे। डॉक्टर साहब और शरत के पापा की बड़ी दोस्ती थी। डॉक्टर साहब के यहाँ चाची की तरह कोई औरत न थी। बस एक आया थी, पूरी आज़ादी थी, डॉक्टर साहब अस्पताल में मरीज़ो के साथ और हम आम के पेड़ों पर, न जीत की ख़ुशी न हार का ग़म। पेड़ों पर उछलना कूदना। अनिला हँस पड़ी। वह सोचती रही। उन दिनों की वह ख़ुशी कहाँ गई। फिर जाने क्या सोच कर हथेली फैलाई, दूसरे हाथ से लक़ीरों को फैलाती सिकोड़ती देखने लगीं। इन लक़ीरों का क्या भरोसा। हाँ ठीक ही तो है, वह कब सब छोड़-छाड़ कर बड़ी होने लगी। वह संसार बिखर गया। कौन कहाँ गया किसने क्या किया बस इतना ही मालूम रहता चाची शहर चली गईं। माँ भी कभी-कभी याद करके उदास हो जातीं, लेकिन मिलना बहुत कम होता। फिर अनिला मेडिकल पढ़ने चली गई। एक अनोखी दुनिया, यहाँ क़दम से क़दम मिला कर चलना ही जीवन का मंत्र बन गया। छोटे-छोटे सुख जाने कहाँ खो गए। नये-नये दोस्त, लाइब्रेरी, रेस्टोरेंट, लैब और सबके ऊपर मोटी-मोटी मेडिकल की किताबें। फ़ुरसत किसे कुछ और सोचने की। मेडिकल कॉलेज के दिनों में लगा था इसी मुट्ठी में सारी दुनिया बाँध लेगी। फिर उन्हीं लक़ीरों को पढ़ने का प्रयास। दिमाग़ पर ज़ोर डाला एक पुरुष आकृति धुँधली सी छाया वह सब कुछ नकार कर यहाँ आ गई थी। क्या पाया उसने। मेडिकल कॉलेज के दिनों में इन आँखों में संसार बसा था। फिर वही आकृति झाँकने लगी, घोड़े की सवारी और फिर गिरना। फिर तो बस ऐम्ब्युलेंस, दवा, बेहोशी सर में चोट आई थी। हाथ अपने आप पीछे सर पर चला गया। चेहरे पर एक नटखट हँसी बिखर गई।

दो महीने बाद क्रिसमस को दो हफ़्ते बचे थे। रात भर सोचती रहीं घर जाने के लिए। दूसरे दिन जब डॉक्टर राउंड पर आए बेड से नीचे उतरने की कोशिश में गिर गईं, पर डॉक्टर से छिपाते हुए बोली, 'मेरा पैर फँस गया था, अब तो मैं अच्छी हो रही हूँ। मैं अपने घर कुछ दिनों के लिए जाना चाहती हूँ।' उम्र का लिहाज़ करते हुए डॉक्टर ने कहा 'ठीक है, मैं आपकी बात कंसल्टेंट से कह दूँगा।'

दूसरे दिन कंसल्टेंट आए तो अनिला ने दोनों हाथ जोड़ दिए, 'मुझे मेरे घर एक बार जाने दीजिये।'

कंसल्टेंट ने मन में सोचा हालत में कोई सुधार तो हो नहीं रहा है। शायद एक बार जाने देना ही ठीक रहेगा। किन्तु अनिला से बोले, 'ठीक है मैं दो तीन दिन में सारे काग़ज़ ठीक करवा देता हूँ, आप दो हफ़्ते के लिए घर जा सकेंगी। घर तो वैसे भी सेल पर लगा है।' फिर सोशल वर्कर को बुला कर कहा, 'सब इंतज़ाम कर दें'। और वह चला गया। अनिला ने पूछना चाहा कि घर सेल पर क्यों लगा है पर तब तक वह जा चुका था। उन्हें लगा सारी दुनिया ही घूम रही है। घर सेल पर लगा है, क्या अब वह घर उनका नहीं रहा। घर, वे सारे कमरे जहाँ ज़िन्दगी की सारी स्मृतियाँ बिछी पड़ी हैं। गार्डेन, जिसे उन्होंने अपने हाथों से सँवारा है। ग्रेहम आता था उसी ने उसे दीक्षा दी थी बागवानी की। शुरू-शुरू में वह पैसे ले लेता था, फिर एक बार अनिला ने उसे शाम को ड्रिंक पर बुलाया तब बातचीत में उन्हें मालूम हुआ कि ग्रेहम सब पैसे चैरिटी में दे देता है। बाद में उसने पैसे लेना छोड़ दिया। धीरे-धीरे ग्रेहम से उनकी दोस्ती हो गई।वह अकसर दिन में आता, गार्डन में काम करता, शाम को अनिला के साथ पब या कहीं रेस्टोरेंट में खाना खाने चला जाता। बहुत दिनों तक यह सिलसिला चलता रहा। अनिला एक बार फिर ज़िन्दगी के सपने देखने लगी थीं। सब कुछ ख़ुशनुमां लगने लगा था।

और तभी ग्रेहम एक दिन बिना कुछ बताए, बिना कुछ कहे उन्हें छोड़ कर चला गया। वह सोचती क्या बात हुई। क्यों ग्रेहम एक शून्य बना गया। उस दिन वह फिर रोईं ऐसा हृदयविदारक रोना। पर ठीक इसी तरह अब से चालीस साल पहले वह भी किसी को बिना कुछ कहे इंग्लैंड चली आईं थीं। कितना पूछा था, एक बार बस इतना बता दो क्यों यह निर्णय लिया है। लेकिन वह हर बात को चुपचाप पी गईं, उसी तरह आज ग्रेहम चला गया। क्या किसी बात पर ग्रेहम को भी अपनी बेइज़्ज़ती महसूस हुई। बहुत दिनों बाद ग्रेहम का एक लिफ़ाफ़ा मिला। पता नहीं था। बस एक लम्बा पत्र।

अनिला डियर,

मैं अब तुमसे बहुत दूर जा रहा हूँ। पत्नी के मरने के बाद मैंने बीस साल तक अपने को क़ैद कर लिया था। स्कॉटलैंड के जिस अस्पताल में मैं सर्जन था, जब वहीं अपनी पत्नी को किसी भी तरह नहीं बचा सका तो मैं नौकरी छोड़ कर चला आया। तुम्हें रोज़ देखता था और फूलों के तुम्हारे शौक़ को देख कर ऐसा लगा कि क्यों न मैं भी तुम्हारी इस ख़ुशी में शामिल हो जाऊँ। मेरी पेंशन तथा मकान बेच कर इतना पैसा था कि मैं तुम्हारे साथ बड़े आराम से रह सकता था, पर मुझे ऐसा लगा कि तुम मुझे एक माली की तरह घर बुलाती हो, पब भी जाती हो पर जो जगह मैं चाहता हूँ वह मुझे नहीं मिली। तुम्हें बता दूँ कि मैं सर्जन था, तब तुम मुझे स्वीकार करो यह मेरा मन नहीं हुआ। स्वतः जो प्यार तुमसे चाहता था उसके लायक तुमने मुझे नहीं समझा। जा रहा हूँ। क्या पता फिर मिलना होगा या नहीं।

अलविदा।

ग्रेहम

अनिला ने पत्र पढ़ कर मोड़ कर रख दिया, धीरे से कहा अलविदा।

सोचती रहीं मेरे साथ क्या यही होता रहेगा। आँखों से आँसू बहते रहे और वह बार बार अलविदा, अलविदा धीरे-धीरे निराश स्वर में कहती रहीं। वहाँ जब भी किसी तरफ़ देखती उन्हें लगता ग्रेहम की छाया मँडरा रही है। कभी-कभी बहुत ख़ुश होने पर ग्रेहम उन्हें चुपचाप देखता रहता। तब एक आसरा सा हो जाता, लगता ग्रेहम वहीं कहीं पास में खड़ा है। जीवन के चौहत्तर वर्ष ऐसे ही आज कल, आजकल करते-करते निकल गए। बगीचे में जातीं तो सोचतीं अब मिट्टी कितनी ख़राब होने लगी, कहीं भी खोदो तो जैसे सब पत्थर हो गया है। उन्हें इस बात का अहसास ही न होता कि उनकी कलाइयों में वह ताक़त ही नहीं रह गई। फिर एक दिन आया था जब उन्हें नर्सिंग होम ले जाया गया था। घर, बग़ीचा सब छूटा, केवल अँजुरी भर स्मृतियाँ ही साथ रह गईं।

आज वह दिन आ गया जब कंसल्टेंट ने उन्हें घर जाने की इजाज़त दे दी थी। वह घर जाने के लिए

एंब्युलेंस में बैठीं।अपने बैग में बुलू का दिया सिपाही रखना न भूलीं। यादों का रेला आगे पीछे ऊपर नीचे चारों तरफ़ से घेर कर उन्हें अतीत में ले जाता। ग्रेहम के जाने के बाद वह एक दम बेबस सी हो गईं थीं। जो काम तब वह मिनटों में कर लेती थीं वही अब पड़े रहते, जातीं जाकर इंस्ट्रक्शन की किताब उठा लातीं पढ़तीं, पर कुछ भी पल्ले न पड़ता था। माइक्रोवेव यों ही पड़ा रहता, कभी खाना गर्म कर लेतीं, कभी वह भी पड़े-पड़े उसी में सूख जाता। कितनी बार ऐसा हुआ कि दूध की बोतल खोल ही नहीं पाईं, बाहर पड़े-पड़े वह बेकार हो गया। और तब ज़िन्दगी बेकार लगने लगी। एम्ब्युलेंस घर के सामने रुकी। बड़ा सा फ़ॉर सेल का साइनबोर्ड देख कर हाथ पैर ढीले पड़ने लगे। साथ आई नर्स ने पानी दिया तो मन कुछ शांत हुआ। अंदर गईं, नर्स ने कमरा खोल दिया। एक घुटन किधर देखें क्या करें। नर्स ने सोचा इसे थोड़ा वक़्त चाहिए, मेरे सामने तो शायद रो भी न सकें। अतः वह यह कह कर कि मैं थोड़ी देर में आऊँगी, बाहर चली गई। ड्राइंगरूम में गईं, बृजक्राफ़्ट का सोफ़ा कितना घूम-घूम कर आठ दस दुकानों में देख कर ख़रीदा था,चादर से ढके रहने पर भी धूल से भरा पड़ा था। चादर हटा कर बैठने चलीं तो लगा ग्रेहम ने हाथ पकड़ कर अपने पास बैठा लिया है।

एकदम से खड़ी हो गईं। चाइना की अलमारी खोली, रोज़ेनथाल का चेहरा बना हुआ वाइन बॉटल स्टॉपर कभी ग्रेहम ने उनके जन्म दिन पर जर्मनी से लाकर दिया था। उसे लेकर हाथ में सहलाती रहीं, कहाँ ले जाएँगी इसे। कभी उन्हें नाज़ था अपनी पसंद पर। वेजवुड का डिनर सेट वह हर क्रिसमस पर निकालतीं। अँग्रेज़ कंसल्टेंट कहते, 'अनिला यू ऑर वन अहेड ऑफ़ अस।' अब यहाँ मेरा कुछ भी नहीं है। आगे बढ़ती गईं पैटियो का दरवाज़ा खोला। अनिला को लगा स्मृतियों की नदी हरहराती हुई उनको घेरती जा रही है। ग्रेहम ने छोटे बड़े कोनिफर से शतरंज के मोहरे बना कर गार्डन को एक नया रूप दे दिया था। तो दूसरी तरफ़ एक पैगोडा बना कर काँसे की बुद्ध की मूर्ति रखी थी। मूर्ति के सामने बैठ कर वह सिसक-सिसक कर रोने लगीं। काफ़ी दिनों से देख-भाल न होने से सारा गार्डेन तहस-नहस हो रहा था। अनिला को लगा ऐसा ही मेरा जीवन है। नर्सिंग होम में ही मेरा अंत होगा। मेरा कोई नहीं है। क्यों हर ख़ुशी मिलते-मिलते छूट गई। दो हफ़्ते यादों के जंगल में भटकती रहीं। फिर वापस नर्सिंग होम आ गईं, हालत बिगड़ती गई।

सैली ने फ़ोन किया, 'अनिला मैं आ रही हूँ, तुम्हारी चिट्ठी आई है।' मन ही मन बड़ी ख़ुश हुईं शायद बुलू को याद आई हो। याद कैसे नहीं करेगा, उसका सिपाही अभी भी मेरे पास है। सब कुछ भूल जाऊँ, पर तुम्हें कैसे भूल सकती हूँ बुलू। उठीं, बैग खोला और सिपाही को निकाला। और सैली का इंतज़ार करने लगीं। थोड़ी देर में सैली आ गई, उसे बैठने को कह कर इस उम्मीद में खड़ी रहीं कि सैली चिट्ठी देगी। सैली असमंजस में थी क्या करे कैसे अनिला को बताए कि बुलू नहीं रहा। चिट्ठी नहीं, तार आया था पर सैली ने सोचा तार कहने से अनिला घबरा जाएँगी, वहीं जाकर किसी नर्स को तार दे देगी। वह उचित समय देख कर दे देगी।

पर अब हिम्मत बाँध कर किसी तरह बोलीं 'अनिला बुलू'

'हाँ हाँ बुलू ने क्या लिखा है।'

'कुछ नहीं अनिला, बुलू बहुत बीमार था, दो दिन पहले नहीं रहा।'

'क्या कह रही हो? क्या...बुलू ...' कहते-कहते बिस्तर पर गिर गई। बुलू का सिपाही उनकी हथेलियों में भिचा पड़ा था। सैली भागी-भागी गई नर्स को बुला लाई। नर्स ने इंजेक्शन दे कर आराम से लिटा दिया। सैली थोड़ी देर बैठी रहीं फिर घर चली गई।

दूसरे दिन अनिला की आँख खुली तो सर चकरा रहा था। बहुत हिम्मत करके उठीं, मुँह हाथ धोकर बैठी थीं कि एकाएक याद आया कल सैली आई थी, क्या कह रही थी दिमाग़ पर ज़ोर डाला फिर समझ में आ गया बुलू .....एक ज़ोर की चीख़ निकल गई, हिलक-हिलक कर रोने लगीं, धीरे-धीरे कुछ बोलते-बोलते पड़ी रहीं। कौन उनका साथ दे। किससे मन की असह्य वेदना बाँटे। मन होता कोई उन्हें अपनी बाँहों में भर ले, सर पर अपना हाथ रख दे। माँ-बाप तो चले गए पर इतने भाई-बहनों के रहते हुए भी यह अकेलापन झेल नहीं पा रही थीं। धीरे-धीरे वह अपने मन के कारावास में बंद हो गईं खाना पीना छूट रहा था। इच्छा-शक्ति ख़तम हो रही थी।

इसी तरह तीन महीने और निकल गए। अनिला अब पहचान में भी नहीं आ रहीं थीं। सर के थोड़े से बचे बाल इधर-उधर उलझ कर फैले थे। नाख़ून बढ़कर अंदर को मुड़ गए थे। चेहरा काला सा झुलस गया था। पैरों के नाख़ून गंदे कटे फटे मोटे पड़ कर बेजान हो रहे थे। एड़ियों में दरार पड़ी थी, ख़ून झलकता था। कोई भी आता तो कभी पहचान लेती कभी आँखों में फैला डरावना सूनापन देख कर मन सहम जाता। पैरों में रुमाल लपेट लेतीं मजाल नहीं कि कोई नर्स छू भी ले। कपड़े भी जैसे-तैसे ढीले होकर इधर-उधर लटक रहे थे। उन्हें कोई होश न था। अब जीवन में कोई रस न रहा। नर्स खाना लाती रख कर चली जाती, थोड़ी देर बाद आती तो प्लेट में सब कुछ वैसा ही पड़ा रहता। भूख प्यास से विरक्ति, चुपचाप पड़ी रहती। कभी पलकों में नाचते सपनों में बुलू की छवि उतरती, कभी पुराना घर, कभी नया घर। मन के इस कारावास में जितनी जगह थी उसी में विचरती। आज सुबह से मन घुमड़ रहा था। ग्रेहम तुमने मुझे क्यों छोड़ा। अपने से पूछा तुमने क्यों बिना जवाब दिए भारत से भागने का मन बना लिया। और बुलू तुम क्यों चले गए। सवाल ही सवाल हैं किसी का जवाब नहीं। प्यास से गला सूख रहा था। पर हाथों में इतनी शक्ति नहीं बची थी कि गिलास उठा कर पानी पीतीं। घंटी पर हाथ गया, नर्स आई तो पर वह बड़े ही रूखे स्वर में बोली-अब क्या? कातर निगाह से नर्स की तरफ़ देखा, संकेत से पानी मांगा, नर्स ने यंत्रवत् पानी पिला दिया, और चली गई।

अनिला फिर लौट गईं ज़िन्दगी की उसी भूल-भुलैया में, भटकती रहीं। इसी समय नर्स ने आकर कहा-फ़ोन है। फ़ोन का नाम सुन कर कुछ चैतन्य हुईं पर, नर्स को एकाएक अहसास हुआ कि अनिला की तबीयत काफ़ी ख़राब है। उसने अनिला के हाथों को धीरे से थपथपाया नब्ज़ देखी, कानों के पास झुक कर कहा -तुम्हारी दोस्त सैली का। कोई जवाब न पाकर वह चली गई।

सैली आज सुबह से ही कुछ परेशान सी थी। बार-बार उसका मन होता अनिला के पास जाए, फिर सोचती अनिला तो मुझे भी नहीं पहचानती। अच्छा होता मैं अनिला से अब न मिलती, उसका उदास चेहरा मुझे न देखना पड़ता। इसी समय टेलीफ़ोन की घंटी बजी। सैली का मन एकदम विचलित हो गया कहीं अस्पताल से फ़ोन न हो। आगे बढ़ कर फ़ोन उठाया नर्स ने कहा अनिला की क्रिटिकल कंडीशन है। सैली उठी जाना होगा पर मैं अनिला को ऐसे हाल में नहीं देखना चाहती हूँ।

अभी सैली बाहर थी, नर्स ने चादर खींच कर अनिला का चेहरा ढक दिया। सैली ने सीने पर क्रॉस बनाया और बाहर खिले हुए फूलों की तरफ़ देखने लगीं और बोलीं अनिला यू आर वन ऑफ़ देम और आँखों पर रुमाल रख कर वापस मुड़ गईं।

❐

मौनीराम मुखौटावाले

गिरीश पंकज

मुखौटे लगा कर जीने का भी अपना सुख होता है। लेकिन ये भी तय है कि मुखौटा रूपी गुब्बारा कभी भी वक़्त की सुई लगने से फुस्स हो सकता है। लेकिन जब तक चलता है, लोग पाखंडजीवी बने रहते हैं। हालत ये हो गई है साब कि हँसी-मुस्कान जैसी सहज मानवीय प्रवृत्तियाँ भी अब छिपा ली जाती हैं, लोग ऐसे गंभीर बने रहेंगे गोया भगवान् ने इन्हे 'तानाशाही' करने के लिए ही पृथ्वी पर भेजा है। भाई लोग मुस्कराते ही नहीं। गोया टैक्स लग जाएगा। 'लाफ्टर टैक्स'। गंभीरता को लोग अपनी शान समझते है और जो हँसता है, उसे गँवार समझ कर कई फुट दूर रहते हैं।

मेरा एक दोस्त मौनीराम इसी नस्ल का जीव है। बड़ा संस्कारी है। बाकी मामले में हो तो बात समझ में आती है कि आप तहज़ीब से रहें, संस्कार दिखाते रहे, लेकिन हँसने और मुसकराने के मामले में भी मौनीराम का संस्कार आड़े आ जाता है। उसे आज तक किसी ने भी हँसते हुए नहीं देखा। उसे गुदगुदी भी करो, तो हँसी नहीं आती। वह दो टूक कहता है- 'हँसना-मुसकराना असभ्यजनों का काम है। गंभीर रहना, सभ्यजनों का कर्म है।' उसका नारा है, 'हँसो मत, गंभीर रहो।'

मेरा शरारती मित्र चुलबुल सिंह, मौनीराम के नारे का 'कॉमा' उठा कर एक शब्द पहले रख देता और कहता है-'हँसो, मत गंभीर रहो।' यही कारण है कि चुलबुल सिंह और मौनीराम में कभी भी नहीं पटती।

'एक हँसे तो दूसरा मौन
किसको समझाए कौन?'

मौनीराम एक दिन, रोज़ की तरह चेहरा लटकाए मिल गए।

मैंने प्रसन्न होकर मुस्कान का गुलदस्ता भेंट करते हुए पूछा-

'कैसे हैं मौनीराम जी ?' मैंने समझा शायद कोई भूल हो गई हो, इसलिए अब तक नाराज़ हैं, इसलिए मैंने कहा-'माफ कीजिएगा मौनीरामजी, मुझसे कोई ग़लती हो गई है क्या, जो इस तरह मुँह फुलाए हुए हैं। आज भी ठीक से जवाब तक नहीं दिया?'

'नहीं, नहीं, ऐसी बात नहीं है।' वह बोले, 'क्या करूँ, सूरत ही ऐसी हो गई है मेरी। आपसे भला क्यों नाराज़ होने लगा? और सुनाइए, क्या हाल हैं आपके ?'

'ठीक है, अपनी सुनाइए।' मैंने भी शिष्टाचार दिखाया।

'क्या ठीक रहेगा साहेब, जीना दूभर हो गया है, आजकल!' उन्होंने आह भरते हुए कहा।

'हाँ भई, कमबख्त महँगाई के कारण सबकी हालत ख़राब है।' मैंने कहा।

'अरे साहेब, महँगाई के कारण नहीं, अपने चार बच्चों के कारण परेशान हूँ। उल्लू के पट्ठे हर समय उधम मचाते रहते हैं। खिलखिला कर हँसते रहते हैं। मुझे ये असभ्यता तनिक भी नहीं भाती। मेरा कहना ही नहीं मानते। चुप रहो कहता हूँ तो हल्ला करते हैं। 'हँसो मत' कहने पर बत्तीसी दिखाते रहते हैं। मैं तो तंग आ गया हूँ भई।'

मेरी खोपड़िया घूम गई। ये कैसा उजबक जीव है, अपने बच्चों की शरारतों से ही परेशान। उनके खेलने और हँसने से परेशान। इतने ही मनहूस थे भइया, तो पैदा ही क्यों कर लिए चार ठो 'उल्लू के पट्ठे ?' अब पैदा कर लिये हो, तो झेलो भी। जब उत्पादन की कार्रवाई जारी थी, तब तो कुछ नहीं सोच सके। अब 'परिणाम' आया है, तो सिर पीट रहे हैं? सरकार रोज़ टीवी पर गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रही है। पहले भी चिल्लाती थी, कि 'बच्चों में अंतर निरोध से आए, सबका जीवन खिलखिला जाए। मिलने में आसान...। फिर भी कोई असर नहीं पड़ा, तो दोष किसका है ? मौनीराम का और किसका?'

संपादक,
सद्भावना दर्पण
28 प्रथम तल, एकात्म परिसर,
रजबंधा मैदान रायपुर. छत्तीसगढ़. 492001
मोबाइल : 09425212720

'ये सब तो आपको पहले सोचना था।' मैंने कहा, 'अब पछताय होत क्या, जब चिड़िया चुग गई खेत।' अब तो इन बच्चों को ऊपर वाले की परसादी समझ कर संतोष करो। नाराज़ होने से क्या फायदा ?'

'अरे वाह, नाराज़ क्यों न होऊँ ?' मौनीराम बोले, 'मेरे बच्चे हैं, और मेरा ही संस्कार ग्रहण न कर सकें ? जानते हो, जब मैं पैदा हुआ था, तब रोया था। बड़ा हुआ तो खेल-खिलौनों के लिए रोया। स्कूल भेजा जाने लगा तभी रोया। बार-बार फेल होता रहा, तब रोया और उसके बाद तो रोने की आदत-सी हो गई है। अब गंभीर ही रहता हूँ। मेरे बापू भी गंभीर रहते थे। मुझे अपने बाप की से कुछ सीख लेना चाहिए कि नहीं।'

'कैसी सीख ? गंभीर रहने की ?' मैंने पूछा।

'जी हाँ, गंभीर रहने की नहीं, मनुष्य रहने की। हँसने-मुस्कराने की क्या जरूरत है?'

'अरे, जब बाप रोनी सूरत बना कर जिए, तो बच्चों का दायित्व है कि वे हँसें। सो हँस रहे हैं। यह तो अच्छी बात है। उन्हें हँसने दीजिए न। खिलखिलाने दीजिए।' मैंने उपदेशक की मुद्रा में सलाह की नीम पिलाई।

उन्होंने मुँह को कड़ुवा बना लिया। बोले, 'आप जैसे लोगों के कारण ही ये समाज रसातल में जा रहा है। जब देखो, बेशरमों की तरह हँसते रहते हैं। और तो और सब लोग एक साथ एकत्र होकर हँसते हैं। 'लॉफ्टर क्लब' में जाकर देखो, सबेरे-सबेरे। हद है। अरे, कोई अच्छा मनुष्य हँसता है भला ? मनुष्य को गंभीर रहना चाहिए। उसी में जीवन का सार है।'

मैंने कहा, 'आप तो उल्टी बात कर रहे हैं, मौनीराम जी। गंभीर रहने की बजाए हँसना मुस्कराना चाहिए। फिफ्टी परसेंट हँसो, तीस परसेंट मुसकराओ और बीस परसेंट गंभीर रहो। लेकिन आप सौ परसेंट गंभीर रहते हैं।'

मौनीराम को अपुन का गणित बिल्कुल ही नहीं भाया। वे बोले-'मेरी अपनी स्टाइल है, जीवन जीने की। मुझे गंभीरता पसंद है। मैं अपने बच्चों की मुस्कान छीन लूँगा।'

'आप धन्य हैं। मैंने कहा, आप जैसे पिताओं की इस समाज में संख्या बढ़ी, तो हो गया कल्याण।'

मेरे इस कथन को उन्होंने अपनी तारीफ़ समझी। मैंने ग़ौर से देखा, वह मुस्करा उठे थे, लेकिन अचानक फिर गंभीर होने लगे। मतलब, मुस्कराते तो हैं, पर मुस्कान-शिशु की 'भ्रूणहत्या' भी कर देते हैं, गंभीरता के चाकू से।

'आप मुस्कराते-मुस्कराते गंभीर कैसे हो गए ?' मैंने फौरन पूछ लिया।

'यह आपका भ्रम है।' वह बोले, 'मैं और मुस्कराऊँ ? इसके पहले मर न जाऊँ।'

मौनीराम को गुदगुदाइए, वे हँस पड़ते हैं। उनको गद् गद् करने वाली बात कर दीजिए, मुस्करा उठते हैं, लेकिन मुस्कान को रोकने में वे सिद्धहस्त हो चुके हैं। दरअसल उनके चेहरे पर अक्सर एक मुखौटा लगा होता है। गंभीरता का मुखौटा। और उस मुखौटे के भीतर होती है, एक अदद हँसी और मुस्कान, जो किसी को नहीं दीखती। लेकिन मौनीराम जानते हैं कि वे हँस रहे हैं। पता नहीं, अपने आप पर, या उन पर, जो लोग उन्हें गंभीर जान कर उनकी इस ख़ासियत के दीवाने हैं और उन्हें देख कर कन्नी काट लेते हैं।

मेरा मित्र चुलबुल सिंह, मौनीराम का खाँटी दुश्मन है। वह लोगों से 'हँसो, हँसो, मत गंभीर रहो' की अपील करता है और मौनीराम, बेचारे और अधिक गंभीर हो जाते हैं। अब लोग उनका नाम आते ही कहने लगते हैं, 'अच्छा, वही, मौनीराम मुखौटावाले'?

❐

SAI SEWA CANADA

(A Registered Canadian Charity)

Address: 2750,14th Avenue,Suite 201,Markham,ON ,LEROB6
Phone : (905)944-0370 Fax : (905) 944-0372
Charity Number : 81980 4857 RR0001

Helping To Uplift Economically and Socially Deprived Illiterate Masses Of India

Thank You For You Kind Donation to **Sai Sewa Canada**.Your Generous Contribution Will Help The Needy and the Oppressed to win The Battle Against. Lack of Education And Shelter, Disease Ignorance And Despair.

Your Official Receipt for Income Tax Purposes Is Enclosed
Thank You , Once Again, For Supporting This Noble Cause And For Your Anticipated Continuous Support.

Sincerely Yours,
Narinder Lal
416-391-4545

Service To Humanity

एक मनोविज्ञानी का प्रतिवेदन

अरविन्द कुमार खेड़े

इधर से जिला सरकार ने फ़ोन घनघनाया, 'तुम लोग इलाज नहीं करते हो?'

'नहीं सर, ऐसी कोई बात नहीं है।'

'एक वृद्धा को लाये हैं मेरे पास। कह रहे हैं कि, आपने इलाज करने से मना कर दिया। इनको भगा दिया आपने?'

'ऐसा तो नहीं हुआ होगा सर ? मैं अभी दिखवाता हूँ।'

'बहानेबाजी बंद कीजिए। अभी तुरंत ऐम्ब्यूलेंस भेजिए। इनका इलाज कीजिए। ज़रूरत पड़े तो मेडिकल बोर्ड से अच्छा चेकअप कराइए।' तुरंत ही ऐम्ब्यूलेंस पहुँच गई। दो पुत्रों के साथ वृद्धा को अस्पताल लाया गया। वृद्धा की उम्र लगभग 80 वर्ष के आसपास रही होगी। परीक्षण करते हुए चिकित्सकों ने उनके पुत्रों से पूछा, 'क्या हुआ है इन्हें ? क्या परेशानी है ?'

'न कुछ बोलती है, न कुछ सुनती है, न कुछ करती है, बस...चुपचाप देखा करती है। ताका करती है।'

'इस उम्र में आप लोग क्या काम कराना चाहते हो इनसे?'

'नहीं.....नहीं ...डाक्साब.....हमारा मतलब यह नहीं है, हमारा मतलब है कि.....।'

'अच्छा.....और कोई परेशानी?'

'वो तो अब आप बताओ डाक्साब ?'

शाम तक सारी जाँचें प्राप्त हो चुकी थी। सारी जाँचें देखने के बाद डाक्साब बोले, 'कुछ नहीं हुआ है इन्हें। घर ले जाइए। अच्छा खिलाइए, पिलाइए और खुश रखिए।'

उसी समय उन्होंने जिला सरकार को फ़ोन लगाया बताने लगे, 'सारी जाँचें सामान्य आईं है सर। हार्ट, किडनी, लिवर सब बराबर काम कर रहे हैं। बीपी, शुगर, कोलेस्ट्राल सब नार्मल है सर।'

'ऐसा कैसे हो सकता है ?' फिर उन्होंने पूछा 'अच्छा, मेडिकल बोर्ड क्या कहता है ?'

'उनके व्यवहार को देखते हुए बोर्ड ने किसी अच्छे मनोविज्ञानी को दिखाने की सलाह दी है।'

सरकार स्वास्थ्य के मामले में बेहद संवेदनशील है। जिला सरकार ने तुरंत संभागीय सरकार को फ़ोन लगाया। पूरा मामला बताया। संभागीय सरकार ने तुंरत मनोविज्ञानी का पता लगाया और फटाफट उन्हें दिखाने के निर्देश दिए। और खुद मनोविज्ञानी से बात की, उन्हें एकदम देखने और देखकर पूरी स्थिति से अवगत कराने को भी कहा।

वृद्धा को तुरंत एम्ब्युलेंस से मनोविज्ञानी के पास ले गए। मनोविज्ञानी ने बेहद संजीदा होकर वृद्धा का परीक्षण किया। फिर संभागीय सरकार को वस्तुस्थिति से अवगत कराते हुए स्थिति बताई, 'सर, मैंने भली-भाँति देख लिया है। लेकिन अभी मैं कुछ कह नहीं सकता हूँ। उनके मनोवेगों, और संवेगों को समझने के लिए मुझे उनके गाँव जाना होगा। आस-पास के पूरे वातावरण, परिस्थितियों और परिवेश को भी देखना और समझना होगा।'

'हाँ, तो ठीक है, तुरंत जाइए।'

संपर्कः 203,सरस्वती नगर, गार्डन के सामने,धार, जिला-धार, मध्य प्रदेश-454001(भारत)
मोबाईल :09926527654
ईमेलः arvind.khede@gmail.com

'सर, परमिशन लेटर दे दीजिए प्लीज़ .....पिछली बार भी आपके आदेशानुसार गया था सर। उनके क्लेम्ज़ अभी तक नहीं मिले हैं। बाबू ने आपत्ति लगाई है-रिटन में परमिशन लेटर की कॉपी लगाइए। ये वर्बली परमिशन क्या होती है ?'

'ठीक है, मैं फैक्स करवाता हूँ।'

फिर वृद्धा के साथ आए वृद्धा के पुत्रों से पूछा, 'गाँव का नाम....?'

'अंबापुरा।'

फिर विकासखंड का नाम पूछा गया, फिर तहसील का नाम पूछा गया, फिर जिले का नाम पूछा गया, पूरी लोकेशन की जानकारी ली, फिर वृद्धा को रवाना कर दिया।

नियत दिनांक को मनोविज्ञानी वृद्धा के पुत्रों को बताए गए स्थान पर मिले। मनोविज्ञानी ने देखा, आस-पास का पूरा क्षेत्र पहाड़ी था। पुत्रों ने दूर पहाड़ों के बीच नीचे तलहटी में बस्ती की ओर इशारा किया। कहा कि वहाँ तक जाना होगा। यानी कि ऊँचाई से नीचे की ओर जाना होगा। यहाँ से तकरीबन आठ-दस किलोमीटर दूर होगा। यहाँ से पैदल ही चलना होगा। रास्ता बेहद उबड़-खाबड़, घुमावदार और खाइयों के बीच से होकर जाता है। इन रास्तों से सिर्फ़ पैदल ही जाया जा सकता है या मोटरसाइकिलें ही जा सकती हैं। चार पहिया वाहनों के लुड़कने और खाइयों में गिरने की संभावनाओं से क़तई इंकार नहीं किया जा सकता था। दोनों पुत्र दो मोटरसाइकिलें लेकर आए थे।

रास्ता पार करते हुए मनोविज्ञानी बारीकी से क्षेत्र का मुआयना भी करते जा रहे थे। गाँव पहुँच कर क्षेत्र के जनजीवन को बेहद क़रीब से देखा और परखा था। फिर पैदल चलकर ही आस-पास के पूरे क्षेत्र का जायज़ा लिया था। ग्रामीणों से मिले, और जीवंत बातें की। दो दिन रहकर पहाड़ी जन-जीवन का अध्ययन कर पुत्रों ने मनोविज्ञानी को उसी स्थान पर लाकर छोड़ दिया। पुत्रों से विदाई ली, और यहाँ से वे अपनी गाड़ी से रवाना हो गए।

सप्ताह भर बाद मनोविज्ञानी ने संभागीय सरकार को अपनी मौका मुआयना रिर्पोट सौंप दी। संभागीय सरकार ने प्रदेश सरकार को अग्रेषित कर दी। प्रदेश सरकार ने सरकार को। सरकार ने रिपोर्ट पढ़कर रिपोर्ट के संबंध में, समक्ष में चर्चा के लिए मनोविज्ञानी को बुलाया था।

नियत दिनांक को मनोविज्ञानी अपनी 'प्रेज़ेन्टेशन' के साथ सरकार के समक्ष उपस्थित हुए।

'हाँ, तो क्या देखा आपने ? क्या महसूस किया ? आपका निष्कर्ष क्या कहता है ?' सरकार ने जानना चाहा।

'सर, अपनी रिर्पोट में उल्लेख कर चुका हूँ।' मनोविज्ञानी ने आदरपूर्वक कहा।

'देखिए, आपकी रिपोर्ट पढ़ ली है हमने। हम आपसे जानना चाहते हैं। आख़िर क्या वजह है कि.....?'

मनोविज्ञानी ने कहना प्रारंभ किया-

आज़ादी के बाद से ही आप वादे करते आ रहे हैं कि, आप गाँवों का विकास करेंगे। इस विकास ने ग्रामवासियों का संघर्ष छीन लिया है। विकास ने उनकी जिजीविषा को समाप्त कर दिया है। सड़क, बिजली, पानी, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि आपके विकास के नारे हैं। आज़ादी के इतने वर्षों के बाद भी आपका विकास गाँवों तक नहीं पहुँच पाया है। रास्ते खोद दिए गए हैं। पगडंडियाँ खत्म कर दी गई हैं। मगर सड़कें अभी तक नहीं बनी। खम्बे गाड़ दिए गए हैं; लेकिन गाँवों में आज तक बिजली नहीं पहुँची। घरों में पानी नहीं पहुँचा है। हर दो किलोमीटर पर स्कूल ज़रूर है। लेकिन शिक्षा के नाम पर केवल भोजन परोसा जा रहा है। अस्पताल खोल दिए हैं, लेकिन अमला नहीं है। ग्रामवासी दुविधा में जी रहे हैं। दुविधा यह कि विकास होगा या नहीं ? इस विकास के चक्कर में अपनी पुरानी ज़िन्दगी जीना छोड़ चुके हैं और विकास के अभाव में नई ज़िन्दगी नहीं जी पा रहे हैं। भारी दुविधाएँ हैं, इसलिए कि सुविधाएँ नहीं हैं।

अब इसे इस वृद्धा के संदर्भ में समझते हैं। पहले यह वृद्धा मीलों पैदल चली जाती थी। लेकिन आपने रास्ते खोद दिए, पगडंडियाँ खत्म कर दी। दुविधा में है कि, पगडंडी पर चल रहीं हूँ कि सड़क पर? इस दुविधा में चलना बंद कर दिया। शाम को चिमनी नहीं जलाती। दुविधा में है कि, कहीं चिमनी जला दी और बिजली आ गयी तो ? इसलिए अँधेरे में ही जी रही है। रात को किसी जंगली जानवर से डर बना रहता है। दुविधा में है कि, रात को किसी जँगली जानवर का शिकार बनेगी या किसी सर्प के काटने से मरेगी? हालाँकि तलैया पास में ही है। लेकिन अब न नहाने-धोने जाती है, न पानी लाती है। दुविधा है कि, कहीं गठरी और घड़ा लेकर तलैया पर चली गई और इस बीच नल में पानी आ गया तो सारी मेहनत बेकार चली जाएगी। इसलिए बाल्टी भर पानी में ही नहा धो और निचोड़ रही है। दुविधा में है कि, बच्चे स्कूल में पढ़ने जा रहे हैं कि, भोजन करने जा रहे हैं। मास्साब आए या ना आए। दुविधा में है कि, बच्चे फिर कैसे पास हो रहे हैं ? और यदि ऐसे ही पास होते रहे तो इन्हें नौकरी मिलेगी या नहीं ? दुविधा में है कि, यदि इन्हें नौकरी न मिली तो इन्हें मेहनत-मज़दूरी करने में शर्म महसूस होगी।

अस्पताल खोल दिए हैं। लेकिन अमला नहीं है। छोट-मोटे और छुट-पुट हैं भी तो गाँवों में नहीं रहते। शहरों से आना-जाना करते हैं। दुविधा है कि, फिर इन संसाधनों का क्या लाभ ? और इस भरोसे में कि आज कम्पाउन्डर आया होगा, मरीज़ को लाया जाए और न मिले तो ? यदि मिल भी जाए तो दुविधा है कि, कहीं कंपाउन्डर के हाथों न मर जाए ? बंगाली झोलाछापों की पौ-बारह। दुविधा है कि, सरकारी दवाखाने में जल्दी मर जाते हैं, बंगाली झोलाछाप देर से मारेगा। तब तक थोड़ा और जी ले।

'अच्छा....फिर आपने अपनी रिपोर्ट में क्या रेकमेंडेशन्ज़ की हैं ?'

'रिर्पोट में रेकमेंडेशन्ज़ की हैं सर। वो ये हैं कि- पहली-या तो वादे के मुताबिक उन्हें सभी सुविधाएँ तत्काल दी जावें ताकि उसके अनुसार जल्दी अभ्यस्त हो सके। दूसरी-या इन्हें साफ़-साफ़ बता दिया जाए कि ऐसा नहीं हो सकेगा। ताकि इन्हें छलावों से मुक्ति मिले और अपनी पुरानी ज़िन्दगी में लौट सके। ताकि इन्हें फिर कोई दिक्कत न हो। फिर से पुरानी ज़िन्दगी को आत्मसात कर सके।

अपनी बात समाप्त कर मनोविज्ञानी ने विदा ली। मनोविज्ञानी के जाने के बाद सरकार बड़ी देर तक प्रतिवेदन हाथ में लिए सोचती रही। कुछ तो करना होगा।

अगले दिन सरकार ने सभी विभाग प्रमुखों से तत्काल जानकारी माँगी कि, किन-किन विभागों में मनोविज्ञानी के पद सृजित है ? किस-किस संवर्ग में कितने-कितने मनोविज्ञानी कार्यरत हैं ? एवं उनके वेतन-भत्तों आदि पर कितना सालाना व्यय होता है ? उनकी उपलब्धियाँ क्या रही हैं ? आदि-आदि।

जानकारी तत्काल संकलित कर सरकार के सामने प्रस्तुत कर दी गई। जानकारी का गहराई से अवलोकन किया गया। मनोविज्ञानी के प्रतिवेदन का असर हुआ, और अगले ही सत्र में सरकार ने सर्वसम्मति से मनोविज्ञानियों के सेट-अप में कटौती कर दी। साथ ही इससे संबंधित और भी प्रस्ताव पास हुए, उनके बारे में न पूछना प्लीज़.....।

❐

Beacon Signs

1985 Inc.

7040 Torbram Rd.Unit # 4, Mississauga, ONT.L4T3Z4

Specializing In :

Illuminated Signs Awnings & Pylons
Channel & Neon Letters

Banners
Silk Screen

Arthitectural Signs
Vehicle Graphics
Engraving

Design Services

Precision CNC Cutout Letters
(Plastic, Wood, Metal & Logos)

Large Format Full Colour Imaging System
Sales - Service - Rentals

Manjit Dubey

दुबे परिवार की ओर से हिन्दी चेतना को बहुत बहुत शुभकामनायें

Tel:(905) 678-2859 Fax :(905) 678-1271

Email: beaconsigns@bellnet.ca

लघुकथा

हवा

अशोक गुजराती

पत्नी से उसका तलाक़ हो गया था। अदालत के आदेश के अनुसार, कि उसको अभी माँ के सामीप्य की ज़रूरत है, वह अपनी पाँच वर्षीय बेटी को भी खो चुका था। वह अकेला अपने ख़यालों में उलझा बैठा हुआ था। दरवाज़े के सामने उसे अपनी बेटी की समवयस्क और सहेली लता खेलती हुए दिखाई दी। उसने उसे आवाज़ दी। वह आई। उसने चॉकलेट निकाल कर उसे देते हुए अपने क़रीब खींच लिया।

लता ने चॉकलेट खाते हुए सवाल किया-'अंकल, प्रज्ञा कब आयेगी...'

उसने उदास-सा जवाब दिया-'बेटे, अब वह कभी नहीं आएगी...' अपने आँसुओं को रोकते हुए वह बोला, 'अब तू ही मेरी बेटी है... तू ही प्रज्ञा है...' और उसने उसका चुम्बन ले लिया।

उसी वक़्त लता की माँ ने, आँगन में आकर उसे पुकारा-'लता... ओ लता...'

'आई मम्मी...' कहते हुए लता दौड़ पड़ी। वह फिर अपने दुःख में डूब गया।

लता को लेकर उसकी माँ अन्दर गई। टीवी चालू था। उस पर पिछले दिनों बच्चियों के साथ हुए बलात्कारों पर चर्चा चल रही थी। माँ ने उससे पूछा, 'बेटी, वहाँ क्या कर रही थी ?'

लता ने बताया कि अंकल ने बुलाया और चॉकलेट भी दी। माँ सतर्क हो गई-'और क्या किया ?'

लता ने असमंजस में पड़ते हुए सरलता से कहा, 'कुछ नहीं मम्मी।'

माँ ने संतुष्ट होना चाहा-'तुझे अपने नज़दीक लेकर गोद में तो नहीं बैठाया...?'

नादान लता ने उत्तर दिया-'हाँ मेरी पप्पी भी ली।'

'अरे! ऐसा किया उस शैतान ने... चल... चल मेरे साथ, उसकी ख़बर लेती हूँ..' माँ ग़ुस्से में थी।

वह लता को लेकर उसके घर पहुँची। क्रोध से भरी वह चिल्लाई-'कमीने, तेरे को शर्म नहीं आई। अपनी बेटी जैसी लड़की को पास में लेकर चूमाचाटी कर रहा था... ठहर ज़रा... मैं अभी पुलिस को फ़ोन करती हूँ।'

❐

अशोक गुजराती, बी-40, एफ़-1, दिलशाद कालोनी, दिल्ली-95 मोबाइल: 9971744164.

बदलती सोच

बालकृष्ण गुप्ता 'गुरु'

बॉस की गोद से उतरते ही कर्मचारियों ने बच्चे को घेर लिया। पहले ने कहा, 'बड़ा प्यारा बच्चा है।' दूसरे ने जोड़ा, 'बड़ा स्मार्ट भी है।' एक ने उसके हाथ में चॉकलेट थमा दी। दूसरे ने अपना मोबाइल फ़ोन ही खेलने को दे दिया। तीसरे ने अपना कीमती पेन देते हुए कहा, 'इससे होमवर्क करना।'

तभी बॉस वापस आ गए। कहने लगे, 'पार्टी के लिए बाहर निकल रहा था कि देखा, पड़ोसी की गोद में खेल रहा था। मैंने कहा, लाओ, इसे पार्टी से घुमा लाता हूँ।'

यह सुनना था कि इस तरह की आवाज़ें आने लगीं-'बेटा, मोबाइल फ़ोन खेलने के लिए नहीं होता। लाओ, गिरकर टूट न जाए।'

'अभी छोटे हो, जब बड़े हो जाओगे, तब महँगे पेन से लिखना, अभी वापस दो।'

इस बीच बॉस चलने को हुए। बच्चा भी उनके पीछे-पीछे चल पड़ा। सभी बॉस को छोड़ने उनकी कार तक आए। बॉस ने कार का दरवाज़ा खोलते हुए कहा, 'चलो बेटे संकल्प, बैठो।'

सभी के मुँह से एक साथ निकला, 'आपका बेटा है!'

'जी हाँ !'

और सब उसकी ओर लपके। तब तक कार आगे बढ़ गई थी।

❐

बालकृष्ण गुप्ता 'गुरु',डॉ. बख्शी मार्ग, खैरागढ़-491881, ज़िला-राजनांदगाँव (छत्तीसगढ़)
मोबाइल: 09424111454
ईमेल:ggbalkrishna@gmail.com

एहसास

ओजेन्द्र तिवारी

ट्रेन अपने गन्तव्य की ओर जा रही थी। ट्रेन में बैठे पाँच-छह युवक गाड़ी में यात्रा करने वाली युवतियों से फिकरेबाज़ी कर रहे थे। उनका यह क्रम काफी देर से जारी था। उनकी उद्दण्डता देखकर कोई भी यात्री विरोध करने का साहस नहीं कर पा रहा था।

अगला स्टेशन आने पर उनमें से एक युवक प्लेटफार्म पर कुछ खाद्य सामग्री ख़रीदने गया। स्टेशन से कुछ महिला यात्रियों ने दूसरे दरवाज़े से डिब्बे में प्रवेश किया, जिन्हें देखकर उन युवकों का फिकरेबाज़ी का दौर पुनः शुरू हो गया।

इसी बीच बाहर गया युवक अंदर आया, जो उनका मुखिया नज़र आ रहा था। उसकी नज़र उन महिलाओं पर पड़ी जो रिश्ते में उसकी बहनें लगती थीं। अपने साथियों को उन पर फिकरेबाज़ी करते देख उसने ग़ुस्से में कहा कि वे उसकी बहनें हैं। सुनकर उसके साथी स्तब्ध रह गए।

ट्रेन में बैठे एक बुजुर्ग सज्जन जो काफी देर से उन युवकों की हरकतें देख रहे थे, बोले-'बेटा- इस स्टेशन के पहले तुम और तुम्हारे साथी जिन युवतियों को परेशान कर रहे थे, वो भी आख़िर किसी की बहनें होंगी।'

इतना सुनना था कि अगले स्टेशन तक वे युवक ख़ामोश रहे और जैसे ही ट्रेन स्टेशन पर रुकी वे दूसरे डिब्बे में चुपचाप खिसक गए।

❐

सम्पर्क:ओजेन्द्र तिवारी,नृसिंह मंदिर परिसर, फुटेरा वार्ड नं. 4, दमोह, (म.प्र.) पिन, 470661
मोबाइल:9993534521
ईमेल: ojendratiwari333@gmail.com

Dr.Rajeshvar K.Sharda MD FRCSC
Eye Physician and Surgeon
Assistant Clinical Professor (Adjunct)
Department of Surgery,McMaster University

1 Young St.,Suite 302, Hamilton On L8N 1T8
P: 905-527-5559 F:905-527-3883
Email: info@shardaeyesinstitute.com
www.shardaeyesinstitute.com

लोक साहित्य में ब्रज लोक गीतों का स्वरूप

अकरम हुसैन

लोक का अर्थ : संस्कृत के 'लोक दर्शने' धातु 'धत्र' प्रत्यय करने पर 'लोक' शब्द की उत्पत्ति होती है। इस धातु का अर्थ होता है-'देखना' जिसका लट् लकार में अन्य् पुरुष एक वचन का रूप 'लोकते' हैं। अतः 'लोक' शब्द का अर्थ हुआ 'देखने वाला'। इसके अनुसार वह समस्त जन समुदाय जो इस कार्य को करता है 'लोक' कहलाता है। 'लोक' शब्द' बहुत प्राचीन है, अर्थात हम कह सकते हैं। जब से समस्त संसार का उद्भव हुआ है तब से 'लोक' शब्द होगा, क्योंकि यदि हम सबसे प्राचीन वेद ऋग्वेद में देखें तो इस शब्द का प्रयोग मिलता है। ऋग्वेद में 'लोक' शब्द का प्रयोग 'साधारण जनता' के रूप में किया गया है तथा इस शब्द को 'जन' के लिए भी प्रयोग किया गया है। 'लोक' के सजातीय शब्द हैं-आलोक, लोचन, आलोचना, रोचन, अवलोकन, प्रत्यशवलोकन, लौकिक दृश्य, लोकोत्तर, लोकायत आदि शब्द मिलते हैं तथा भिन्न-भिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न सजातीय शब्द भी मिलते हैं।

ऋग्वेद के सुप्रसिद्ध पुरुष सूक्त में 'लोक' शब्द का प्रयोग जीवन तथा स्थान दोनों अर्थों में किया जाता है। जैसे- 'नाभ्याद आसीदंतरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत। पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तेथा लोकां अकल्पयन।।'

'लोक' शब्द का प्रयोग हमें अनेक उपनिषदों में भी मिलता है। जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में यथार्थ ही कहा गया है कि यह लोक अनेक प्रकार से विस्तृत है। प्रत्येक वस्तु में यह प्रयुक्त या व्याप्त है। प्रयत्न करने पर भी इसे कोई जान नहीं सकता है।

'बहु व्यहिवो वा अथं बहुशो लोकः। क एतद् अस्या पुनीहितो अयात।'

यदि हम प्रमुख व्याकरण कर्ता 'पाणिनी' की 'अष्टध्यायी' में देखें तो हमें 'लोक' तथा 'सर्वलोक' आदि शब्दों का उल्लेख मिलता है। पाणिनी ने वेद से पृथक लोक की सत्ता को स्वीकार किया है। भवभूति, भरतमुनि, व्यास, महर्षि आदि महापुरुषों ने भी 'लोक' शब्द का प्रयोग किया है। जिस प्रकार से भगवान श्रीकृष्ण ने 'भगवद्गीता' में 'लोक संग्रह' पर ज़ोर दिया है वह भगवद्गीता में अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं-

'कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः। लोक संग्रहमेवापि संपश्यदन कर्तुमर्हसि।।'

लोक को अंग्रेज़ी में 'फोक' (folk) कहते हैं। यह फोक एंग्लोआ सेक्शमन का विकसित रूप है। सामान्यतः इसका अर्थ है-'साधारण जन समाज'। एनसाइक्लोसपीडिया ब्रिटानिका में इस शब्द की व्याख्या इस रूप में दी गई है कि आधुनिक समाज में फोक लोर (folk lore), फोक म्युज़िक अपने संकुचित अर्थ में केवल उन्हीं का ज्ञान कराता है; जो नागरिक संस्कृति और विधिवत शिक्षा की धाराओं से परे है, जो निरक्षर भट्टाचार्य है अथवा जिन्हें मामूली सा अक्षर ज्ञान है, 'ग्रामीण और गँवार'।

लोकगीत : 'लोकगीत' मन की सहज और सुन्दर अभिव्यक्ति है। सच तो यह है कि 'लोकगीत' लोकमन की धड़कन और अनुगूँज है। लोक कवि लोक सौन्दर्य का व्याख्याता है। लोकगीतों में लोकांचल की छाप दिखाई देती है। लोक गीतों से ही इस आँचल विशेष का व्यक्ति हृदय से जुड़ा होता है तथा वह अपने हृदय के अनेकों भावों को गीतों के माध्ययम से प्रस्तुत करता है। आज हमारी इतनी विराट् विरासत है ; जो हमें अपनी संस्कृति से मिली है। वह वास्तव में हमें अपने आँचल से जोड़े रखती है। जहाँ पर आज भी अपनी विरासत को सँभाल कर रखा

संपर्कः मौलाना आज़ाद नेशनल उर्दू यूनिवर्सिटी,
हैदराबाद-500032
मोबाइलः 08791633435
ई-मेलः akramhussainqadri@gmail.com

है। लोक गीतों का निर्माण ही हमारी अपनी संस्कृति को बचाये रखने का है। जिस प्रकार से एक प्रांत से दूसरे प्रांत में जब हम विचरण करते हैं, तो उसका पानी बदलता रहता है। ठीक उसी प्राकर से लोक गीत भी बदलते रहते हैं। जैसे हम खड़ी बोली बाहुल्य क्षेत्र में जाएँगे, तो वहाँ के लोक गीत अलग होंगे और यदि हम पूर्वी उत्तर प्रदेश या बिहार से सटे हुए प्रांतों में देखते हैं, तो वहाँ के लोक गीत अलग होते हैं। और भाषा भी उनकी अलग होती है। जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश ब्रज और खड़ी बोली पूर्वी उत्तर प्रदेश भोजपुरी तथा मिथिलांचल में विद्यापति के आज भी लोक गीत गाए जाते हैं।

ब्रज गीत अनेक प्रकार के होते हैं तथा यह जीवन के विभिन्न क्रियाकलापों के अनुसार गाए जाते हैं। जैसा कि हम कह चुके हैं, यह गीत अपने संपूर्ण दुःख दर्द को व्यक्त करने का माध्यम है। ब्रज गीत विभिन्न प्रकार के हैं; जो विभिन्न अवसरों पर गाए जाते हैं। प्रमुख प्रकार के गीतों का वर्गीकरण

1 ब्रज के संस्कार गीत, 2 ब्रज के धार्मिक गीत, 3 ब्रज के ऋतु गीत, 4 ब्रज के भजन, 5 ब्रज के जाति गीत, 6 रसिया, 7 ब्रज के अन्य विविध गीत

प्रमुख ब्रज लोकगीतों का सामान्य परिचय एवं वर्गीकरण

(क) ब्रज के संस्कार गीत : यह वह गीत होते हैं जिसमें अनुष्ठान तथा मनोरंजक गीत आते हैं। यह कहना बहुत ही मुश्किल है कि मनुष्य ने लोकाचार, व्यवहार तथा अनुष्ठान में गीतों को इतना महत्व कब से और क्यों देना आरंभ किया, किन्तु इसमें संदेह नहीं है कि 'गीत' किसी भी संस्कार या आचार के आज प्रधान अंग बन चुके हैं। शास्त्रो में सोलह संस्कारों का वर्णन है। जैसे गर्भाधान, पुंसवन, जन्म, जनेऊ, विवाह और मृत्यु आदि संस्कार में से कौन वंचित है। प्रत्येक संस्कार हेतु जन-मानस में अलग-अलग अवसरों पर अलग-अलग गीत बड़े हर्षोल्लास के साथ गाये जाते हैं। ये लोक गीत इन संस्कारों के प्रमुख अंग हैं। बल्कि हम कह सकते हैं-शिशु जब जन्म लेता है तभी से उसके संस्कार शुरू हो जाते हैं और यह लोक गीत गाने के अवसर सदैव खोजता ही रहता है। इस तरह जन्म से लेकर मृत्यु तक वह संस्कारों से घिरा रहता है। धर्म भारतीय लोगों का प्राण है। धर्म का उनके जीवन में प्रमुख स्थान है। विभिन्न संस्कारों के अवसर पर स्त्रियाँ अपने कोकिल कंठ से गा-गा कर जन मन का मनोरंजन करती हैं। मृत्यु के अवसर पर अत्यंत हृदय-विदारक गीत गाया जाता है, परन्तु ऐसे गीतों की संख्या न्यूनतम है

(1) जन्म गीत : भगवान श्रीकृष्णत के जन्म लेने पर ब्रज में 'सोभर' गाया गया था और यह पुत्र प्राप्ति पर आज भी ब्रज में लोक गीत प्रचलित है।

'देवकी लला भैना जसुदा के गोद खेलें बाबा की उगली पकरें गोकुल की गलियाँ डोलैं / पैदा होते ही वे जेल के फाटक तोड़े देवकी लला भेना जसुदा के गोद खेले।'

(2) मुण्डन गीत : जन्म के बाद जब शिशु बड़ा हो जाता है तो अपनी मान्यताओं के अनुसार तीन, पाँच या सात वर्ष की अवस्था में मुण्डन का अनुष्ठान किया जाता है। यह अनुष्ठान किसी मंदिर या नदी के किनारे किया जाता है तथा यह लोक गीत गाया जाता है- 'मेरे बालक के सिर पै जरूली, कहो कैसे मुड़े/ देवी के मंदिर जच्चा पुकारै, जरूली मइया/ बुआ-भैना करें आरती, दे देऊ विनके नेग।'

(3) विवाह गीत : जन्म के बाद विवाह मनुष्य का महत्त्वपूर्ण संस्कार है। विवाह के शुभ अवसर पर हृदय की भावाभिव्यक्तियाँ नारियों के मुख से लोक गीतों के माध्यम से प्रकट होती है। ब्रज के विवाह की झाँकी नारियों द्वारा गाए लम्बे-लम्बे गीतों में उजागर होती है। ब्रज में विवाह के अवसर पर दोनों पक्ष के यहाँ विभिन्न-विभिन्न अवसरों पर अलग-अलग लोक गीत गाये जाते हैं-

3.1 लगुन गीत : विवाह संस्कार प्रथम कड़ी है। 'लगुन' इस अवसर पर ब्रज बालाएँ एक सुन्दर लोकगीत गाती हैं - 'बाबा मेरे लगुन लिखाई / तौ निरमल सायौ सोधिये / लगुन में लिखियों आँधी मेहु / तौ आगिनी बचाइये / लगुन मे धारियो हीरालाल/ तौ रूपिया पूरे डेढ़ सै / बाबुल ताऊ मेरे लगुन लिखाई / तौ निरमल सायौ सोधिये।'

3.2 हल्दी के गीत : विवाह के कुछ दिन पहले नित्य कन्या और वर को हल्दी लगायी जाती है, यह रिवाज दोनों पक्षों में मनाया जाता है तब यह गीत गाया जाता है- 'बरना पै हरदी चढ़ाओ री सब आओ परोसिनि/ हरदी केसर रोरी मँगाओ.'

3.3 कन्यादान के गीत : कन्या के पिता या भाई कन्यादान करते हैं। इस अवसर पर सभी की आँखें नम हो जाती है और स्त्रियाँ करूण कंठ से यह मंगल गीत गाती हैं- 'हाथ-पियरे करि बाबुल भई ऐ धरम की बारि / हाथ पियरे करि माइल भइऐ धरम की बारि।'

3.4 विदाई के गीत : विदाई के समय कन्या पक्ष की स्त्रियाँ करुण स्वर में गाती है और कन्या रोती है। उसके साथ माँ, बहन, भाई और पिता और सगी संबंधी भी रोते हैं। बेटी विदाई के अवसर पर यह गीत संपूर्ण परिवार की कारुणिक मनोदशा का जीवंत चित्र उपस्थित कराता है- और रे कौरे गुड़ियाँ ओ छोड़ी / रोमत छोड़ी सहेली / अपने बाबुल कौ देसु जो छोड़यौ

(ख) ब्रज के धार्मिक गीत : ब्रज क्षेत्र में धार्मिक गीत भी बहुत प्रचलित हैं; क्योंकि यह भगवान श्रीकृष्ण की जन्मस्थली भी है। यहाँ पर देश-विदेश से श्रद्धालु आज भी आते हैं और विभिन्न अवसरों पर अनेक गीत गाते हैं। धार्मिक पर्वों एवं व्रतों पर गाये जाने वाले लोक गीत-

1. श्रीकृष्ण जन्माष्टमी : ब्रज के लोकगीतों का आरम्भ भादों की श्रीकृष्णा जन्माष्टमी से होता है। कृष्ण मंदिरों को सजाया जाता है तथा सभी लोग सुबह से ही व्रत रखते हैं। रात्रि में जैसे ही बारह बजते हैं श्रीकृष्ण जन्मोत्सव आरंभ हो जाता है और इस समय ब्रज का उल्लास अपने चरम पर होता है- 'मेरी टेर सुनो सिरी जी बाँके बिहारी/ बाट के बटोही चलें पंछी चले चुगना।।'

2. करवा चौथ के गीत : कार्तिक कृष्ण पक्ष की चतुर्थी को ब्रज की नारियाँ अपने पति की दीर्घायु एवं स्वस्थ रहने की कामना से करवा-चौथ का व्रत रखकर पूजन करती है। रात्रि में चन्द्रोदय के समय चन्द्रमा को अर्घ्य देते समय वे गीत गाती हैं- 'सिया माँगे अजोध्या को राज गंगा नहाने को,राजा दशरथ सो ससुर माँगे, माँगे कौसिल्या जैसी सास गंगा नहाने को।'

3. दीपावली : दीपोत्सव का यह त्यौहार भारतवर्ष में बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। लक्ष्मी गणेश का पूजन होता है। ब्रज बालाएँ मिलकर मंगल गीत गाती हैं- 'हटरी बैठे श्री गिरिधरलाल/ सुंदर कुंज सदन अति नीकौ, सोभित परम रसाल/ चहुँ ओर पाँत बनी दीपन की, झलकत लाल सुमाल।

4. होली : यह त्यौहार भारत का बहुत प्राचीन और लोक प्रसिद्ध है। ब्रज का तो यह सबसे प्रमुख धार्मिक समारोह, लोकोत्सव और जनप्रिय त्यौहार है; जो यहाँ घर-घर में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। ब्रज की होली भारत में ही नहीं अपितु विश्व में प्रसिद्ध है। ब्रज की होली (लट्ठमार होली) का आनंद उठाने के लिए विदेशों से भी लोग आते हैं। इस अवसर पर हास्य विनोद, गायन वादन तथा नृत्य-नाट्य के विविध आयोजनों की सर्वत्र बड़ी धूम रहती है- 'चूँदरिया रंग में बोरि गयौ, वो कान्हास बंसी वारौ/ भरि पिचकारी सन्मुख मारी, मोपै केसर गागर ढोरि गयौ।'

(ग) ब्रज के ऋतु गीत : विभिन्न ऋतुओं में लोक मानस द्वारा गाये जाने वाले विभिन्न प्रकार के गीत गाये जाते हैं जो इनके हर्षोल्लास में अभिवृद्धि करते हैं। ऋतुओं के देश में गीत के मौसम दो ही हैं-वर्षा और बसंत। विश्व में कोई भी देश नहीं है जहाँ प्रकृति मनुष्य के हृदय में नवचेतना का संचार न करती हो। इसी कारण उनके मन में नवीन चेतना जाग्रत होती है ब्रज क्षेत्र तो रस का रसिया है ही। अतः यहाँ का जीवन गीतमय है। ख़ासकर वर्षा ऋतु में यहाँ बारहमासा, मल्हार झूला गीत आदि गाये जाते हैं।

1. बारहमासा : जैसा कि नाम से ही विदित है बारह महीने। इसमें पूरे बारह महीने की ऋतुओं की विविधता के साथ-साथ वियोगिनी के मन पर पड़ने वाले प्रतिक्रियात्मक प्रभावों का वर्णन एवं चित्रण रहता है। अतः आषाढ़ मास की मेघ-मालाओं का एक दृश्य द्रष्टव्य है- 'उमंग से बादर फिरत कामिनी गजि घोर सुनाइए/ ऐसे नंद के लाल कहिए आषाढ़ मास जो लागिए।।'

2. झूला गीत : सावन के माह में ब्रज मण्डल की शोभा मनोरम होती है, क्योंकि इस समय सारे वन-उपवन हरे-हरे प्रतीत होते हैं और कोयल और मोर की मीठी आवाजें आती है। वर्षा की फुहारों, मेघ गर्जन और चपला की चमक के बीच मल्हार गायन के साथ झूला झूलने का आनंद ही भिन्न है- 'झूलत अति आनंद भरे/ इत स्याआमा उत लाल लाड़िलौ बैयाँ कंठ घरे।।

(घ) ब्रज के भजन गीत : ईश्वर का स्मरण जनमानस कई रूपों में करता है। मूर्ति-पूजा से लेकर व्रत-उपवास तक न जाने कितने प्रकार से अपने आराध्य को खुश करने का प्रयत्न करते हैं। इन प्रकारों में एक है 'भजन'। स्मरण ही जब अभिव्यक्ति का माध्यम बनता है तो गीत का रूप धारण कर लेता है। ब्रज लोक मानस में भजनों के रूप में मिलता है-

1. जिकड़ी : जिकड़ी शब्द का अर्थ है-ज़िक्र, उल्लेख। यह जिकड़ी भजन नामक लोक गीत शुद्ध रूप से ब्रज प्रदेश का गीत है। जिकड़ी भजन के गायन में उसका साखी भाग तथा गाहे की प्रारंभिक पंक्तियाँ गायी जाती है। एक जिकड़ी भजन उदाहरण निम्नालिखित है- साखी-पिरथम तोइ मनामे दुरगे माइ (अरी) अरज सुनि लिजियो/ माता सिंह चढ़ी अवतार (अरी) आस पूरण कीजियो।

गहयौ-(हाँ हाँ) पूरन कीजो आस देव तेरो जस गाइमें / (और जी) जस के बलि रहे बेल, भगवती तोहे मनामे।।

2. संवादी भजन : संवादी से तात्पर्य समयक् वर्णन, इसमें ईश्वर का सम्यक वर्णन होता है। ब्रज में इन गीतों को लीला-गीत भी कहा जाता है। जब किसी पूरे चरित्र को जिस भजन में गाया जाता है, उसे संवादी भजन कहा जाता है- 'मैया मैं जब घर ते चलूँ/ बुलावे ग्वालिनि घर में मोंय/ औचक को झालो दे/ के मीठी बोलै देवर कहिकै/निधरक है जाय साँकर दैके।

(ङ) ब्रज के जाति-गीत : जाति-गीत से तात्पर्य उन लोगों से है जो किसी विशेष स्थान पर रहते हैं और उनके गीत भी भिन्न होते हैं। और उन गीतों पर उनका विशेषाधिकार भी होता है। ब्रज की पावन भूमि पर भी विभिन्न जातियाँ निवास करती हैं। उदाहरण के लिए 'जोगियो' को ले सकते हैं जिनका संबंध 'जहरपीर' के गीत गाने से है- 'झूठा भोजन छोड़ पुजारी, मजि मन सीताराम-सीताराम/ ये दुनिया एक दम का डेरा, छोड़ मुसाफिर रैन बसेरा/ जग-जगा अब हुआ सबेरा, जग में लाये मन का घेरा/ उठ भज गोविन्द नाम, भजि मन सीताराम-सीताराम।

(च) रसिया : ब्रज भाषा-भाषी क्षेत्रों में 'रसिया' की अपनी अलग ही पहचान है। रसिया ब्रज क्षेत्र का बहुचर्चित और अत्यंत लोकप्रिय लोकगीत है। रसिया ऐसे लोकगीत होते हैं जो वर्तमान में भी बहुत प्रासंगिक हैं, क्योंकि यह सर्द रातों में गाँव में होते हैं। लोग सर्द रातों में ठिठुरकर भी पूरी रात रसिया सुनते हैं। इन लोक गीतों से आज का युवा भी जुड़ा है। इसका प्रमाण उनके मोबाइल में यात्रा करते समय देखा जा सकता है। रसिया के संदर्भ में एक दोहा प्रस्तुत है- 'रसिया रस की खान है, रास कृष्ण कौ नाम/ रस रसना याकूं रसै, होंइ प्रकट कृष्ण और राम।।'

रसिया का रूप बहुत सुनिश्चित है। ये प्रधानतः दो प्रकार के होते हैं। एक में रसिया के आरंभ में टेकी होती है। इसमें 15-15 की यति से 30 मात्राएँ होती हैं। यह अतयंत चढ़ाव के साथ तीव्र गति से गाया जाता है। अंतिम पंक्तियों को 5,10 की यति से दुहराया, तिहराया जाता है- 'भजन करूँ और ध्यान करूँ / छैयाँ कदमन की मैं/ सदा करूँ सतसंग मण्डली/ संत जनम की मै।।

(छ) ब्रज के अन्य विविध गीत : उपर्युक्तक गीतों के अतिरिक्त अन्य विषयों के गीत भी ब्रज में उपलब्ध है। इन गीतों में जुर्म, देशभक्ति, भ्रष्टाचार विरोध, समसामयिक जन-जागरण जैसे गीत प्रमुख हैं। जैसे कृषि से संबंधित गीत इस प्रकार हैं- 'अबकै बनु लहराइये यार कौ/ इमिली वारी पटिया में/ सब ते पहिले बयो अगायो/ जेठ मास पानी लगवाओ/ अरे अब दीखतु नायं कहु बटिया में।'

स्वतंत्रता संग्राम के समय ईस्ट इण्डिया कम्पनी की भर्त्सना के साथ उनके अत्याचारों का वर्णन करने हेतु लोक कवि, स्वतंत्रता संग्राम सेनानी राजा महेन्द्र प्रताप को बड़ी श्रद्धा से स्मरण करते हुए कहते हैं- 'ब्रज भूमि कौ लाला दुलारौ महेन्द्र प्रताप हमारौ/ भरी जवानी मातृभूमि तजि गयौ देश से बाहर/ बर्फीले पहाड़ वन-वन में इकलौ घूमौ नाहर /जननी जन्मभूमि के खातिर अपनौ सर्वस तजकर / जहाँ गयो निज धाक जमाई भारत कौ झण्डा गाड़ो ब्रज भूमि को .....।

निष्कर्ष

जब तक लोक रहेगा तब तक लोक गीत रहेंगे ही और जब लोकगीत हैं, तब तक हमारी परम्परा और संस्कृति अमर अक्षुण्य रहेगी और इस पावन-भूमि पर राग-रंग और रस की जनरंजन और मन रंजन करती रहेगी। लोकगीत लोकमानस की आत्मा है। अतः इनके बिना भला लोक-मन को शांति और सुख की प्राप्ति कैसे हो सकती है? ये अभाव को भाव पूरित करने वाले तथा दुःखी-मन के त्राण है। लोक के सुख दुःख के सहचर, सदा-सदा के साथी और जीवन की थाती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

लोक-साहित्य अर्थ और व्याप्ति-डॉ. सुरेश गौतम, संजय प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2008 / लोकसाहित्य की भूमिका-डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय / लोक साहित्य और लोक संस्कृति-डॉ. रामविलास शर्मा, पंकज बुक्स, पटपड़गंज, दिल्ली, संस्करण 2009 / लोक साहित्य : सिद्धांत और प्रयोग-डॉ. श्रीराम शर्मा, विनोद पुस्तक मंदिर, हॉस्पिटल रोड, आगरा-3, प्रथम संस्करण 1973 / भारतीय संस्कृति और हिन्दी प्रदेश (भाग 2)-डॉ. रामविलास शर्मा, किताब घर प्रकाशन, अंसारी रोड, दरियागंज, दिल्ली, संस्करण 2006 / लोकवार्ता विज्ञान (भाग 1 और भाग 2)-डॉ. हरद्वारीलाल शर्मा, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, महात्मा गांधी मार्ग, लखनऊ / सूर साहित्य में लोक संस्कृति-आद्या प्रसाद त्रिपाठी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1967 / ब्रज साहित्य और संस्कृति-आनंद स्वरूप पाठक, मथुरा शिक्षा ग्रंथघर, संस्करण 1975 / भारतीय लोकगीत-सतीश परमहंस, सहयोग प्रकाशन / ब्रज लोकगीत-डॉ. हर्षनंदिनी भाटिया, वृंदावन श्री मदन मोहन ब्रजलोक समिति, संस्करण 1988।

❐

श्रीमती चन्द्रकिरण सोनरिक्सा
(बीसवीं शताब्दी के प्रारंभिक दौर की कथाकार)

गरिमा श्रीवास्तव

दिल्ली के पश्चिमी छोर पर सेक्टर सात, द्वारका में चन्द्रकिरण सोनरिक्सा से मिलना तय हुआ था। डॉ. गोपाल राय ने बातचीत में यों ही कहा था-चन्द्रकिरण जी बीमार हैं, मिल लो कभी। मुझे सुखद आश्चर्य हुआ क्योंकि साहित्य जगत् के बहुत कम लोग जानते हैं, कि बीसवीं सदी के तीसरे दशक से लेकर पाँचवें दशक तक लगभग तीन सौ से भी ऊपर कहानियाँ, चार उपन्यास और कविताएँ लिखने वाली चन्द्रकिरण दिल्ली के ही एक कोने में अज्ञातवासी थीं। हिन्दी बाल साहित्य के प्रारंभिक दौर की लेखिका ने अपनी कहानियों में एक समय निम्न मध्यवर्गीय स्त्री के जीवन की त्रासदी दुःख-सुख, प्रच्छन्न-प्रकट धूपछाँही यथार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति की, उनसे साक्षात् का उत्साह मेरे मन में था।

ढूँढ़ने पर आर्मी-नेवी अफ़सर अपार्टमेंट में उनका फ्लैट मिला। नामपट्ट पर लिखा था-विंग कमांडर कौंतेय सोनरेक्सा। उन्होंने ही दरवाज़ा खोला। वे वायुसेना से अवकाश लेकर रैनबैक्सी में कार्यरत थे। अंदर आने को कहा। बछड़े के आकार का काला कुत्ता भी स्वागत में सन्नद्ध मिला। ड्राइँग रूम में एक सोफे पर कांति चंद्र सोनरेक्सा विद्यमान थे। नवासी वर्ष की उम्र ने कमर दोहरी कर दी थी। एक समय के मशहूर फोटोग्राफ़र; जिनकी, निराला, रामविलास शर्मा, अश्क, यशपाल, विष्णु प्रभाकर सबके साथ आमद-रफ़्त रही थी। कुछ कहानियाँ भी लिखीं। वक़्त की मार से पहले उत्तर प्रदेश में डिप्टी कलेक्टरी भी की। अब बची थी-सिर्फ बात और खाँसी।

परिचय लेने-देने के दौरान ही चन्द्रकिरण जी छड़ी के सहारे आईं कांतियुक्त गौरवर्ण, सत्तासी वर्ष की चन्द्रकिरण। बातचीत धाराप्रवाह, कहीं स्मृति भंग नहीं। प्रश्नों का उत्तर उसी ताज़गी से दे रही थीं, जैसे कभी लखनऊ रेडियो पर वार्ताएँ प्रस्तुत करती थीं। संप्रेषण सधा हुआ। मन में यह इच्छा कि उनके समय की बहुत-सी बातें पूछूँ। वे हिन्दी की प्रारंभिक बाल साहित्यकारों में से एक हैं। ग्यारह वर्ष की उम्र में 1931 में उनकी पहली कहानी छपी। घर-गृहस्थी, बंधन और दायरों के बीच, नौकरी और छह बच्चों का लालन-पालन। बीच-बीच में साहित्य रचना। चूल्हे पर दाल चढ़ाकर किए कहानी लेखन ने कुछ पुरस्कार भी दिलाए।

संपर्कः प्रोफ़ेसर, हिन्दी विभाग, हैदराबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय, गच्चिबोवुली, हैदराबाद, तेलंगाना, पिन 500046
मोबाइलः 8985708041
ईमेलः garimahcu@gmail.com

उन्होंने रचनाकार की स्वायत्तता से लेकर समकालीन दौर में स्त्री स्वाधीनता की प्रकृति और स्त्री आंदोलनों को अपनी अभिव्यक्ति में समेटा। लेकिन बेबाकी की कमी मुझे लगातार खटक रही थी। कुछ ऐसा था जो उन्हें खुलकर बोलने से रोक रहा था और आलम ये था कि सामने बैठे कांतिचंद्र जी की कोशिश यही कि चन्द्रकिरण को छोड़ उन्हीं से बात की जाए। वे चन्द्रकिरण की कोई बात पूरी होने नहीं देते, जैसे ही मैं कोई सवाल चन्द्रकिरण जी से पूछूँ, उनके पति-परमेश्वर जवाब देने को तत्पर। बड़ी असुविधा थी, बुज़ुर्गियत के सम्मान का तक़ाज़ा था, अतः मैंने उनका मन रखने के लिए आधे घंटे का समय दिया। उन्हीं से पहले बात कर लूँ, तो शायद तसल्ली हो जाए। लगता था वर्षों से कोई श्रोता उन्हें नहीं मिला है। वे तथ्य भूल गए, बातचीत में कोई पूर्वापर सम्बन्ध नहीं, जैसे अतीत छोटे-छोटे टुकड़ों में, असम्बद्ध दृश्यों में सामने आ रहा हो। मेज़ पर चन्द्रकिरण की कहानियों की पाण्डुलिपि रखी थी, जिस पर हाथ रख कर वे अधिकार प्रदर्शन करते रहे, मुझे पाण्डुलिपि देखने ही नहीं दी। स्मृति में थोड़ी ज़ंग लगने के बावजूद पत्नी की रचनाशीलता के बाज़ार भाव के प्रति पूरी तरह चौकन्ने। खल्वाट खोपड़ी पर किनारे-किनारे बाल बेतरतीब, गला रूँधा हुआ-सा, खाँसी के दौरे उन्हें बोलने नहीं दे रहे। वे बार-बार नौकरानी को पुकारते। थूकने के लिए बगल में प्लास्टिक का मग रखा था। वृद्धावस्था ने, एक समय के ऊँचे पूरे युवा को गलगले, शातिर, हीनभावना से ग्रस्त रूप दे दिया था। समझने की कोशिश कर रही थी कैसे चन्द्रकिरण जी को ग़लतफ़हमी में रख कर, उन्होंने उनसे दूसरा विवाह किया होगा। वैसे आत्मकथा 'पिंजरे की मैना' में इस प्रसंग का ज़िक्र बड़े सलीक़े से किया गया है। कांति जी का दावा था कि वे भारत के सर्वश्रेष्ठ छाया चित्रकार हैं, लेकिन उन्हें उपेक्षित किया गया।

बीच में चन्द्रकिरण टोकती हैं। लेकिन कान्ति जी हावी हैं। इतनी मुलायमियत से पति को टोकना, झिड़कना नहीं, डाँटना नहीं, बस कुछ शब्द हौले से बुदबुदा देना, मंद मुस्कान के साथ। लेकिन कहाँ ? वृद्ध शरीर में युवाओं-सी स्फूर्ति का प्रवेश अनायास ही हो गया है। वे दिल्ली में नहीं रहते, अलग लखनऊ में रहते हैं। पता नहीं क्यों मन ने कहा है-अच्छा ही है-चन्द्रकिरण जी यहाँ पुत्र के पास सुकून से रह पाती होंगी। मुझे समझ में आने लगा है कि उनकी उपस्थिति में खुल कर बात न हो पाएगी। चन्द्रमा को राहु ने ग्रस लिया है। कुछ ऐसा कि बीस-पचीस वर्षों में उन्होंने कुछ लिखा ही नहीं। पुरुष अपने आधिपत्य में स्त्री की प्रतिभा की नोंक-पलक छील, काट, दुरुस्त कर कैसे अपने 'अहं' को तुष्ट कर सकता है। यह देखने की बात है। चन्द्रकिरण बहुत से मुद्दों पर बोलना चाहती हैं। कान्तिजी का कहना है कि मैंने इनकी कहानियाँ सँभाली, छपवाईं, ये अपने बारे में क्या कहेंगी ! जो कहना होगा मैं कहूँगा...तीन साढ़े तीन घंटे की मशक्कत के बाद भी कुंठित वृद्ध की आत्मश्लाघा ही पल्ले पड़ती है और टुकड़ों में एक स्त्री रचनाकार के जीवन संघर्ष की कथा के कुछ टुकड़े, वह भी जो चन्द्रकिरण नहीं कह पाती। मौन हो आँखें मूँद लेती हैं। समाधिस्थ-सी। जैसे अपने आप को कहीं दूर ले जा चुकी हों।

मैंने कहा है उनसे, आपने ऐसे पुरुष के साथ इतनी लम्बी ज़िन्दगी बिताई, आपके सब्र की दाद देनी पड़ेगी। वे धीमे से मुस्कुराती हैं। कहती हैं-ख़ुशनसीब हो तुम लोग कि इतनी स्वतंत्र हो, हमें तो अपने ज़माने में कहानी तक अपने नाम से छपाने की स्वतंत्रता नहीं थी, पारिश्रमिक मिलना कलह और अपमान का कारण था। समय बहुत बदला है। लेकिन अब हृदय और गुर्दे की हालत ठीक नहीं। चन्द्रकिरण की आत्मकथा 'पिंजरे की मैना' की पाण्डुलिपि कौन्तेय देते हैं। मेरे हाथ में है स्वच्छंद उड़ान की चाह लिए एक स्त्री का आत्मकथ्य। कौन्तेय का कहना है: प्रकाशक छापने के लिए पैसा माँगते हैं, फिर भी प्रयासरत हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राध्यापक पूछते हैं : चंद्रकिरण को प्रकाश में लाने की ज़रूरत क्या है? उनकी प्रासंगिकता क्या है? क्या बताऊँ उन्हें कि नींव की ईंटों की प्रासंगिकता क्या होती है या होना चाहिए, दिखती तो बुलंद इमारत है। उन नन्ही, दबी-कुचली ईंटों का क्या जो नींव में इस तरह समाई हैं, कि दिखाई नहीं देतीं। इमारत को खड़ा रखने में अपना रग-रेशा गला देती हैं। कोई जान भी नहीं पाता कि ईंट किस भट्ठे में बनी। कैसे तपी, कितना तपी, कितने सर्दी-गर्मी बरसात झेले इसने। प्रासंगिकता क्या सच में नहीं है !

कौन्तेय कहते हैं फ़ोन पर, कुछ दिन बाद आइए, पिताजी के लौट जाने पर माँ से बात हो पाएगी। हैदराबाद लौटना है मुझे। अगली बातचीत फिर कभी।..... और चन्द्रकिरण चली गई..अपनी कहानी, संघर्ष अपने साथ ही समेटे हुए अद्भुत मुलायमियत और शालीनता के साथ.....।

❐

अविस्मरणीय

क्या ग़ज़ब का देश है

सर्वेश्वरदयाल सक्सेना

(जन्म: 15 सितम्बर 1927; निधन: 24 सितम्बर 1983)

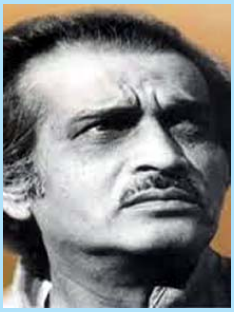

क्या ग़ज़ब का देश है यह क्या ग़ज़ब का देश है।
बिन अदालत औ मुवक्किल के मुक़दमा पेश है।
आँख में दरिया है सबके
दिल में है सबके पहाड़
आदमी भूगोल है जी चाहा नक़्शा पेश है।
क्या ग़ज़ब का देश है यह क्या ग़ज़ब का देश है।

हैं सभी माहिर उगाने
में हथेली पर फ़सल
औ हथेली डोलती दर-दर बनी दरवेश है।
क्या ग़ज़ब का देश है यह क्या ग़ज़ब का देश है।

पेड़ हो या आदमी
कोई फरक पड़ता नहीं
लाख काटे जाइए जंगल हमेशा शेष हैं।
क्या ग़ज़ब का देश है यह क्या ग़ज़ब का देश है।

प्रश्न जितने बढ़ रहे
घट रहे उतने जवाब
होश में भी एक पूरा देश यह बेहोश है।
क्या ग़ज़ब का देश है यह क्या ग़ज़ब का देश है।

खूँटियों पर ही टँगा
रह जाएगा क्या आदमी ?
सोचता, उसका नहीं यह खूँटियों का दोष है।
क्या ग़ज़ब का देश है यह क्या ग़ज़ब का देश है।

❐

पेर लागरकविस्त की कविताएँ

अनुवादः सरिता शर्मा

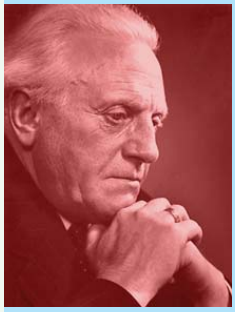

स्वीडन के प्रसिद्ध कवि उपन्यासकार और नाटककार पेर लागरकविस्त का जन्म 1891 में हुआ था। उनके उपन्यास 'दि डार्फ,' 'बराब्बस' और 'हैंगमैन' हैं। उनके नाटक 'लैट मैन लिव' और 'सीक्रेट ऑफ़ हैवन' हैं। कविता संग्रह 'ए साँग ऑफ़ दि हार्ट' और 'मैन्स वे' हैं। उन्हें 1951 में साहित्य के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। उनकी मृत्यु 1974 में हुई थी।

सरिता शर्मा
1975, सेक्टर-4
अर्बन एस्टेट
गुडगाँव-122001
मोबाइलः 9871948430

पृथ्वी सबसे सुंदर होती है ....

पृथ्वी सबसे सुंदर होती है
जब रौशनी बुझने लगती है।
आकाश में जितना भी प्रेम है,
धुँधली रौशनी में समाहित है।
खेतों और
नज़र आने वाले घरों के ऊपर।

सब शुद्ध स्नेह है, सब सुखदायक है।
दूर किनारे पर ख़ुद प्रभु समतल कर रहे हैं,
सब क़रीब है, फिर भी सब दूर है अज्ञात,
सब कुछ दिया जाता है
मानव जाति को उधार पर।

सब मेरा है, और मुझसे ले लिया जाएगा,
सब कुछ जल्दी ही मुझसे छीन लिया जाएगा।
पेड़ और बादल, खेत जिनमें मैं टहलता हूँ।
मैं यात्रा करूँगा-
अकेला, नामो-निशान के बिना।
***

मेरी छाया को तुममें खो जाने दो

मेरी छाया को तुममें खो जाने दो
मुझे ख़ुद को खोने दो
ऊँचे पेड़ों के तले,
जो गोधूलि में अपनी पूर्णता खो देते हैं,
आकाश और रात के सामने
आत्मसमर्पण कर लेते हैं।
***

मेरा दोस्त अजनबी है जिसे मैं नहीं जानता हूँ

मेरा दोस्त अजनबी है जिसे मैं नहीं जानता हूँ।
दूर बहुत दूर एक अजनबी,
उसके लिए मेरा दिल बेचैनी से भरा है
क्योंकि वह मेरे साथ नहीं है।
क्योंकि शायद, उसका अस्तित्त्व ही नहीं है।
तुम कौन हो
जो अपनी अनुपस्थिति से मेरा दिल भर देते हो?
जो पूरी दुनिया को
अपनी अनुपस्थिति से भर देते हो?
तुम जो मौजूद थे, पहाड़ों और बादलों से पूर्व,
समुद्र और हवाओं से पूर्व।
तुम जिसकी शुरुआत
सब चीज़ों की शुरुआत से पहले है,
और जिसकी ख़ुशी और ग़म
सितारों से ज़्यादा पुराने हैं।
तुम जो अनंत काल से सितारों की आकाशगंगा
और उनके बीच के घोर अँधेरे से
होते हुए घूमे हो।
तुम जो अकेलेपन से पहले अकेले थे,
और कोई मानव हृदय मुझे भुलाए,
उससे पहले से
जिसका दिल बेचैनी से भरा था।
पर तुम मुझे कैसे याद कर सकते हो?
भला समुद्र भी सीप को याद करता है?
एक बार उमड़ जाने के बाद।
***

(यह उनकी सबसे प्रसिद्ध कविताओं में से एक है और अक्सर स्वीडन में अंत्येष्टि पर गाई जाती है।)

गोधूलि की यह हवा सबसे खूबसूरत है

गोधूलि की
हवा में यह सबसे ख़ूबसूरत है।
स्वर्ग जो सारा प्यार लुटाते हैं
एक धुँधले प्रकाश में एकत्र हो जाता है।
पृथ्वी के ऊपर,
शहर के प्रकाश से ऊपर।

सब प्यार है, हाथों से सहलाया गया।
प्रभु ख़ुद दूर किनारों पर ग़ायब हो जाएगा।
सब कुछ पास है, सब बहुत दूर है।
सब कुछ दिया जाता है
आदमी को आज के लिए।

सब मेरा है,
और सब मुझसे ले लिया जाएगा,
क्षण भर में सब कुछ मुझसे छीन लिया जाएगा।
पेड़, बादल, पृथ्वी जिन्हें मैं देखता हूँ।
मैं भटकता फिरूँगा
अकेला, नामोनिशान के बिना।
❐

गरम स्पर्श

सिन्धी कहानी

मूलः अर्जुन चावला
अनुवादः देवी नागरानी

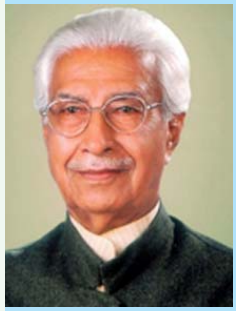

अर्जुन चावला का जन्म 10 फरवरी 1931, काशमोर, (सिन्ध) में हुआ। चार काव्य संग्रह, एक मज़्मून पर, 'चारण चोरियो चंग', 'उभरया अक्स हज़ार' पर पुरस्कृत। के. आर. गवर्मेंट गर्ल्स कॉलेज, ग्वालियर के प्राध्यापक रहे। कई संस्थाओं से सम्मानित। संपर्कः 6/198, स्ट्रीट न. 1, नई बस्ती, अलीगढ़-202001(यू. पी)
मोबाइलः 9759500081

देवी नागरानी
संपर्कः9-डी, कार्नर व्यू सोसाइटी, 15/33 रोड, बांद्रा, मुम्बई 400050
मोबाइलः9987928358
ईमेलः dnangrani@gmail.com

कैप्टन मनीष को आसाम से नागालैंड में तबादले का ऑर्डर मिला तो दिल कुछ उदास होने लगा। पर और भी बहुत सारे साथियों को तबादले के ऑर्डर आए थे यह जानकार कुछ ढाढ़स मिला। सोचा कुछ तो दोस्त साथ होंगे। वक़्त अच्छा बीतेगा।

नागा विद्रोहियों की सरगर्मियाँ काफ़ी बढ़ी हुई थीं। यही देखते हुए पहाड़ी फ़ौज की चार बटालियन कोहिमा में भेजनी ज़रूरी समझा गया। कैप्टन मनीष कोहिमा रेजीमेंट हैडक्वाटर पर हाज़िर हुए तो उसकी कम्पनी को कोहिमा से 60 किलोमीटर की दूरी पर ख़ूबसूरत पहाड़ियों के दामन में फ़ौजी कैम्प में पहुँचने का आदेश मिला। जैसे ही वे कैम्प पहुँचे तो चारों ओर नज़र फिराते हुए बहुत प्रसन्न हुए। चारों तरफ़ ऊँचे पहाड़, उन पर साल और देवदार के पेड़। नीचे मैदानों में चारों ओर मीलों तक फैली हरियाली और सब्ज़ मख़मली घास। तरह-तरह के कुसुमित पुष्पों ने उसका मन मोह लिया। दूसरे दिन शाम को जीप में कैम्प से दो मील की दूरी पर निरीक्षण चौकी का मुआयना करके लौटे तो रास्ते में छोटे से रेस्टोरेंट में कॉफ़ी पीने के लिए जीप रोक दी। भीतर कोने में पड़ी टेबिल पर कॉफ़ी का ऑर्डर देकर बैठे ही थे कि उनकी नज़र कुछ दूर बैठे एक जोड़े पर गई। दोनों ने मुस्कराते, गर्दन हिलाकर कैप्टन का अभिवादन किया। कैप्टन ने देखा कि दोनों स्थानीय थे। नौजवान टी-शर्ट और जीन्स में और चेहरे-मोहरे से नागा। पर लड़की स्कर्ट व ब्लाउज़ पहने हुए, ख़ूबसूरत सुडौल जिस्म, नाक-नक़्श तीखा! दोनों ने आपस में कुछ खुसुर-फुसुर की और उठकर कैप्टन के पास आए।

'हैलो सर, मे वी गिव यू कम्पनी?'

'ओ शुअर, शुअर।' कैप्टन ने चारों तरफ पड़ी कुर्सियों की ओर इशारा करते हुए कहा। पहाड़ी वेषभूषा में बैरा कॉफ़ी लेकर आया तो कैप्टन ने उसे दो कप और लाने के लिए कहा। बैरा कॉफ़ी रखकर चला गया, पर वे तीनों तब तक चुप रहे। आँखों में हल्की मुस्कराहट, पर बिना कुछ कहे नागा नौजवान ने कॉफ़ी का कप कैप्टन की ओर बढ़ाया।'थैंक यू।' कैप्टन ने कप लेकर उन्हें भी इशारा किया।

'डॉली वाँगज़ू,' नौजवान नागा ने पास बैठी लड़की के कंधे पर हाथ रखते हुए उसका नाम बताया।

'मी फिलिप'-फिर अपना नाम दोहराया। कैप्टन ने मुस्कराते हुए अपनी पहचान दी-'मनीष।'

कैंम्प में लौटकर मनीष हाथ-मुँह धोकर रात को मेस (भोजन-कक्ष) में डिनर लेने गया। वहाँ बातों-बातों में उसने मेजर खन्ना को नागा जोड़े के साथ हुई मुलाक़ात के बारे में बताया।

'जोड़ी तो बहुत ख़ूबसूरत थी, पर पता नहीं चला कि उनका आपसी रिश्ता क्या है?' कैप्टन ने बड़े चाह के साथ कहा।

'पर आपको चिंता क्यों है कि वे आपस में क्या लगते हैं?'

'नहीं, नहीं, मेरा उसमें क्या!' कैप्टन ने तत्पर जवाब देकर बात को टाल दिया।दूसरे दिन पूर्व निर्धारित प्रोग्राम के अनुसार बाग़ियों के खिलाफ़ अभियान में तीन दिन के लिए जाने का ऑर्डर मिला। कैम्प से लारियों का क़ाफ़िला उत्तर-पूर्व की तरफ़ रवाना हुआ तो नौजवानों में उत्साह था। उनके चमकते चेहरों से यूँ जान पड़ता था कि वे मैदान मारकर लौटेंगे।

कैम्प से रवाना होने पर मैदानी इलाक़े से गुज़रतीं लारियों का क़ाफ़िला थोड़ी देर के लिए मिट्टी के गुबार में गुम हो गया। सिर्फ़ लारियों की इंजन की गड़गड़ाहट और ज़ू-ज़ू की आवाज़ सुनाई दे रही थी। कुछ देर के बाद मैदानी इलाक़ा पार करके क़ाफ़िला जैसे बोम-ला पहाड़ी के कच्चे रास्ते से ऊँचाई चढ़ने लगा, वैसे ही गुबार पीछे रह गया। दूर से जटिल पहाड़ी पगडंडियों में लारियों का सिलसिला इतना छोटा सा लग रहा था मानों बच्चों ने अपने लारी नुमाँ

खिलौनों में चाबी भरकर एक दूजे के पीछे छोड़ दी हों। कैम्प में पीछे रह गए जवान हाथ हिलाकर क़ाफ़िले को देर तक विदा कराते रहे। पल में ही क़ाफ़िला ओझल हो गया। तीन दिन के बाद क़ाफ़िला लौटा। मुख़बिरों की सूचनानुसार फ़ौजियों ने बोम-ला पहाड़ियों के पीछे बाग़ियों के अड्डों को चारों तरफ़ से घेरा। मगर घेराव के पहले ही बाग़ी फ़रार हो गए। सारा इलाक़ा छान मारा फिर भी कोई सुराग़ नहीं मिला।कैप्टन मनीष दोस्तों के साथ 'मेस' में गप-शप करने के बावजूद भी बोरियत महसूस करने लगा था। एक दिन फिर जीप में बैठकर कैम्प से बाहर जाकर उसी रैस्टोरेंट में कॉफी पीने के लिए पहुँचा। भीतर पहुँचा तो उसकी नज़र डॉली वाँगजू पर पड़ी, जो कोने में पड़ी टेबिल पर अख़बार पढ़ रही थी। इस बार वह अकेली थी। कैप्टन मनीष अभी दूसरे कोने में पड़ी कुर्सी पर बैठ ही रहा था कि डॉली वहाँ से उठकर उसके पास आई।

'हैलो कैप्टन।' डॉली ने मुस्कराते हुए उसका अभिवादन किया।

'हैलो मैडम ! हाउ डू यू डू ?' मनीष उसका नाम भूल गया था।

डॉली ने उसे याद दिलाते हुए कहा-'डॉली सर!'

'ओह डॉली प्लीज़!' कैप्टन ने अपनी ग़लती स्वीकारते कहा।

डॉली फ़ौरन दूसरी कुर्सी पर बैठी और उससे तीन चार दिन नज़र न आने का कारण पूछा। पर मनीष ने 'कैम्प से आने का मौक़ा न मिलने' की वजह बताकर बात वहीं ख़त्म कर दी। दोनों ने मिलकर कॉफ़ी पी। मनीष ने डॉली से उसके माँ-बाप के बारे में जानना चाहा। डॉली ने उसे बताया कि वह मिशनरी स्कूल से दो साल पहले मैट्रिक पास कर चुकी है। उसके माता-पिता दोनों मिशनरी स्कूल में टीचर थे। स्कूल के बाद दोनों मिशनरी के प्रचार का काम करते थे।

मनीष रह-रह कर डॉली की आँखों में निहारता रहा; उनमें बेहिसाब कशिश थी। बॉब कट सुनहरी बालों की लटें कभी-कभी हवा के झोंके से उसके सुर्ख़ गालों को चूमने की कोशिश कर रही थीं, जिन्हें डॉली बायें हाथ की कनिष्ठिका के लम्बे नाख़ून से निहायत ख़ूबसूरत अंदाज़ में हटाती रही। मनीष उसके चेहरे को बार-बार ग़ौर से देख रहा था। सोच रहा था कि डॉली का नाक-नक़्श न बर्मी था, न ही चीनी वंश का। पहाड़ियों की तरह उसका नाक चिपटा और समतल भी नहीं था। बल्कि उत्तरी भारत के मैदानी इलाक़े के आर्य वंश का नाक-नक़्श था। बेपनाह हुस्न का ऐसा बुत देश के दूर-दराज़ घनी पहाड़ियों व वादियों में भी मिल सकता है-वह सोचता रहा।

मनीष का जी उठने को नहीं हो रहा था। पर कैम्प में वक़्त पर पहुँचना था। इसलिए डॉली की ओर मुस्कराकर उठने लगा। डॉली ने एक अजीब मुस्कराहट के साथ कंधे को एक मामूली झटका देकर इजाज़त लेनी चाही, तो मनीष से रहा नहीं गया। डॉली का हाथ हाथों में थामकर उसकी आँखों में झाँकता रहा, जैसे उसके बेपनाह हुस्न को नज़रों से एक ही घूँट में पीना चाहता हो। डॉली की मस्ती भरी निगाहों में मनीष पल भर के लिए अपनी सुध-बुध भुला बैठा। अचानक हाथ की उँगलियों पर डॉली के सुर्ख़ लबों का स्पर्श महसूस करते हुए होश में आया। उसका चेहरा सुर्ख़ हो गया। खुद को सँभालते हुए अगले दिन मिलने का वादा करते हुए वह मुस्कराकर जीप में सवार होकर चला गया। पर रास्ते भर में एक अनोखा अहसास उसके साथ रहा। एक अजीब मादकता उस पर हावी रही। कैम्प में लौटकर थोड़ी देर के लिए वह अपने तम्बू में जाकर लेटा। काफ़ी देर तक किसी ख़ूबसूरत ख़याल ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। काश, डॉली के साथ ब्याह रचाकर उसे राजस्थान में अपने घर लेकर जा सकता। आकाश की इस अप्सरा को अपनी बाहों में भरकर प्यार करता, या कभी सामने बिठाकर सजदा करता। डॉली को हासिल करके, काश वह स्वर्ग के असली आनन्द का अनुभव कर पाता। घड़ी-पल की मुलाक़ात में मनीष को डॉली की शांत नीली आँखों की गहराई में एक अजीब कशिश के साथ-साथ नज़दीकी और अपनापन भी नज़र आया था।

दूसरे दिन फिर बाग़ियों के ख़िलाफ़ अभियान का दूसरा चरण उत्तर-पश्चिम की तरफ़ ज़ो-ला पहाड़ियों की घाटियों में निश्चित हुआ। शाम के वक़्त अँधेरा होने के बाद मुख़बिरों की गुप्त सूचना के अनुसार फ़ौजी दल ज़ो-ला पहाड़ियों की तरफ़ रवाना हुआ। बाग़ियों का दल ज़ो-ला की बड़ी पहाड़ी के पीछे छिपे रहने की जानकारी थी। फ़ौजी जवानों ने ज़ो-ला दर्रे से काफ़ी पहले लारियों को रोका और हथियारों के साथ पैदल चल पड़े। चाँदनी रात थी। दुश्मन की नज़र न पड़े इसलिए छोटी-छोटी टोलियों में ज़ो-ला दर्रे के नज़दीकी द्वार पर पहुँचे। और फौरन दो-दो आदमियों के ग्रूप में तितर-बितर होकर पहाड़ियों के घने झुंड की ओट छुपकर मोर्चे सँभाले बैठे रहे। कैप्टन मनीष ने अपने साथ तेज कर्ण को रख लिया।

अमावस के बाद चौथे दिन वाला चाँद बहुत देर न रुक सका। अँधेरा जैसे-जैसे बढ़ने लगा वैसे-वैसे सिपाहियों की बेसब्री बढ़ने लगी। पता नहीं, शायद सारी रात यूँ ही टोह में बैठे गुज़र जाए। यूँ ही इन्तज़ार करते रात का अन्तिम पहर आ गया। अचानक ज़ो-ला दर्रे के छोर पर ऐसे लगा, जैसे कुछ धुँधली परछाइयाँ बिना आवाज़ के आगे बढ़ रही हैं। टोह में बैठे फ़ौजी दल के सिपाहियों में हरकत आ गई। सभी हाथ राइफिलों और मशीन गनों के ट्रिगरों पर पहुँच गए; और कैप्टन मनीष के ऑर्डर का इन्तज़ार करने लगे।

धुँधली परछाइयाँ काले लिबास में धीरे-धीरे उन झड़ियों के घने झुरमुट की तरफ़ बढ़ रही थीं, जिनकी ओट में कैप्टन मनीष और सूबेदार तेज कर्ण टोह में बैठे थे। दूसरे दल से एक फ़ौजी की राइफ़ल से अचानक गोली चल जाने से दो साये एक तरफ़ दौड़े, और दो कैप्टन के दल की तरफ़। कैप्टन की पिस्तौल की गोली से एक गिर पड़ा। फ़ौजी दस्ते के लिये कैप्टन का यह इशारा जैसे ऑर्डर था। चारों तरफ़ से मशीन गनों से गोलियों की बौछार शुरू हो गई। जवाब में बाग़ियों ने गोलियाँ चलाईं, पर कुछ देर के बाद जवाबी गोलियों की आवाज़ शान्त हो गई। फ़ौजी दल की गोली बारी ज़ारी रही। काफ़ी देर तक जवाबी गोलियों के न आने से फ़ौजी दल ने भी गोली बारी बन्द कर दी।

पौ फटते ही रोशनी का प्रभामण्डल बढ़ने लगा। फ़ौजी पहाड़ियों से निकल कर अपने शिकार को कब्ज़े में करने के लिए उतावले हो रहे थे। पर कैप्टन ने उन्हें रोका, कि कहीं दुश्मन ताक लगाए बैठा हो और अचानक हमला कर दे। इसलिए सिर्फ़ दो फ़ौजी जाकर लाशों का निरीक्षण करें। दो नौजवानों ने आगे बढ़कर झड़ियों से लाशें ढूँढ़ निकालीं। कुल दो लाशें मिलीं। शनाख़्त करने की कोशिश की गई, पर बेकार। इतने में कैप्टन और साथी भी पहुँच गए। बाग़ियों की लाशों की पहचान पाना मुश्किल काम था। शक्ल से एक मर्द लग रहा था तो दूसरी औरत। दोनों ने गहरे नीले रंग की बुशर्ट और जीन्स पहनी हुई थी। जैसे ही दो जवानों ने उलटी पड़ी लाशों को सीधा करके लिटाया तो कैप्टन अकस्मात चौंक उठा।

'डॉली ! फिलिप ! माइ गॉड।' ऐसा कहते कैप्टन का चेहरा शांत और गंभीर हो गया।

झुककर उसने डॉली के सर्द चेहरे से बालों की लट अपनी गरम उँगलियों से हटाकर दूर कर दी। पर डॉली का सर्द चेहरा मनीष की उँगलियों का गरम स्पर्श महसूस कर न सका !

❐

बदलते परिवेश में वृद्ध और समकालीन कहानियाँ

सुबोध शर्मा

विमर्शों के इस दौर में साहित्य का तेवर और कलेवर तो बदला ही है साथ ही सरोकार भी बदले-बदले नज़र आते हैं। समय और परिस्थितियों ने साहित्य को समयानुरूप समायोजित कर मुखर और धारदार बनाया है। विमर्शों के इस दौर में दलित, स्त्री और आदिवासी मुख्य रूप से चर्चा में हैं; जिसके कारण पठन-पाठन और लेखन का कार्य इन्हीं विषयों पर अधिक सिमटा हुआ है। वहीं दूसरी ओर प्रवासियों, वृद्धों, किन्नरों और बाल समस्याओं पर पर्याप्त चर्चा नहीं होने के कारण यह साहित्य की मुख्यधारा से विरत आज भी हाशिये का साहित्य बना हुआ है।

'नई कहानी' निजी अनुभव का ताप लेकर आई है। इस दौर के कहानीकार अपनी कहानियों में निजी अनुभव को चित्रित करते हैं। यहाँ फामूर्लाबद्ध जीवन नहीं, बल्कि जीता-जागता मनुष्य चित्रित हुआ है। इस दौर की कहानी का चरित्र नायक न तो महामानव है और न ही देवत्व के गुणों से विभूषित कोई व्यक्ति। वह कहानी के पटल पर समान्य मनुष्य के रूप में अवतरित होता है-अपनी तमाम अच्छाइयों और बुराइयों के साथ। नई कहानी दो पीढ़ियों के संघर्ष को चित्रित करती है। निर्मल वर्मा की कहानी 'बीच बहस में' पिता-पुत्र का संघर्ष और दोनों के अहं की टकराहट को दिखाया है। वहीं ज्ञानरंजन की कहानी 'पिता' में पिता, पुत्रों द्वारा अपने लिए की गई कोई सेवा स्वीकार नहीं करते हैं। पिता का मानना है कि 'पिता का कर्त्तव्य है पालन करना पलना नहीं..।'

सन् 1956 में श्रीपत राय ने अपने 'कहानी' विशेषांक में भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' को प्रकाशित किया। 'नई कहानी' जिस शहरी मध्यवर्ग के जिये, भोगे जीवन को चरितार्थ करने में लगी थी, उनके केंद्रीय विषय 'मध्यवर्ग' को ही 'चीफ की दावत' में भीष्म साहनी ने कठघरे में खड़ा कर दिया। मध्यवर्गीय मानसिकता को दर्शाती यह कहानी मध्यवर्ग पर व्यंग्यात्मक प्रहार है और मध्यवर्गीय मानसिकता क्या है? इसका वे ही सहज रेखांकन करती है-पुरानी पीढ़ी को अप्रासंगिक ही नहीं, भौतिक प्रगति में बाधक समझाना, असंवेदनशीलता, दावत जैसे उत्सवधर्मी आयोजन में भी वैयक्तिक फायदे की चिंता अर्थात बाज़ारवाद की मानसिकता के साथ जीवन को जीने वाले मध्यवर्गीय समाज को रेखांकित करती यह कहानी वृद्धों की समस्या को उजागर करती है। नई कहानी में जीते-जागते आदमी की आवाज़ सुनाई देती है। इस समय के कहानियों में बाबा, दादी-दादा, नाना-नानी को केंद्रित कर अनेक कहानियाँ लिखी गई हैं। इन कहानियों के माध्यम से तत्कालीन समाज में बुजुर्गों की स्थिति को देखा जा सकता है।

'चीफ की दावत' कहानी की शुरुआत एक अड़चन से होती है। चीफ को दी जाने वाली दावत में बूढ़ी माँ की उपस्थिति ही सबसे बड़ी अड़चन है। जिस तरह से घर के पुराने समानों को आलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छुपाकर घर को साफ़-सुथरा करने की कोशिश की जाती है; उसी प्रकार से बूढ़ी माँ को भी फटी-पुरानी वस्तु समझ कर शामनाथ छुपाने कि कोशिश करता है। एक पुत्र को चीफ के आदर-सत्कार से इतना मोह कि माँ तक को छुपाना पड़ा ! जन्म देने वाले माँ-बाप कब अपने बच्चों के लिए बोझ बन जाते हैं, शायद इसका अंदाजा वे नहीं लगा पाते ! शायद इसीलिए तो शामनाथ को लग रहा था कि बूढ़ी, निरक्षर और कुरूप माँ का दावत के समय घर में होना ही रंग में भंग करने के लिए काफ़ी है। आख़िर पुरानी-पीढ़ी, नई पीढ़ी के लिए समस्या क्यों है? इसलिए न कि पुरानी-पीढ़ी आधुनिक अंग्रेज़ी शिक्षा एवं तहज़ीब में ढल नहीं पाई हैं। क्या माँ का अशिक्षित होना चीफ के नज़र में शामनाथ को गिरा देता? यदि हैंड शेक करना, हाउ डू यू डू बोलना, शराब पीना और गैरों से माँ को हीन समझना ही आधुनिकता है तो इससे लाख गुना बेहतर है माँ की अशिक्षा; जिसने उपेक्षा और अवहेलना पाकर भी पुत्र के भले के लिए सब कुछ सहने का कलेजा पाया है।

'चीफ की दावत' कहानी 'बूढ़ी काकी' की याद दिलाती है। बूढ़ी काकी और चीफ की दावत की 'माँ' पुरानी पीढ़ी से हैं। दोनों भोज या दावत के दिन ही भूखी रह जाती हैं। प्रेमचंद की बूढ़ी काकी जहाँ भतीजे की उपेक्षा का शिकार होती हैं; वहीं 'चीफ की दावत' की माँ बेटे की। अर्थात् परिवार में पुरानी पीढ़ी के प्रति नई पीढ़ी और अधिक संवेदनाशून्य हुई है। बूढ़ी काकी का जूठा पत्तल चाटना भतीजे को वित कर देता है, लेकिन चीफ की दावत में माँ की उपयोगिता बेटे को श्रद्धावनत बना देती है। प्रेमचन्द के यहाँ पुरानी पीढ़ी; जो दया के पात्र दीखती

मोहल्ला पंचशील नगर, ए.एन.एस. बरह के पास,
पोस्ट बरह, जिला पटना, बिहार 803213
मोबाइल 8102102905
subodh.sharma2013@gmail.com

है, नई कहानी में पुरानी पीढ़ी अपनी उपयोगिता से नई पीढ़ी के लिए उपयोगी हो जाते हैं। इस कहानी के माध्यम से भीष्म साहनी ने यह दर्शाया है कि पुरानी पीढ़ी अभी अप्रासंगिक नहीं हुई है। जब उदय प्रकाश की कहानी 'छप्पन तोले का करधन' को पढ़ते हैं, तो आज के समाज की नग्न तस्वीर से रु-ब-रु होते हैं। बेटे और बहू ने अपनी बूढ़ी माँ से करधन प्राप्त करने के लिए.....दादी को बीमारी में भी बहुत डराया धमकाया। छुरा चमकाती रही, दादी का गला दबाया और नाक-मुँह बन्द करके उनकी साँस भी देर तक रोकी। साँस रुकने से दादी का शरीर गुब्बारे की तरह फूल गया, लेकिन उन्होंने तब भी नहीं बताया कि करधन कहाँ हैं! आज के समाज में वृद्धों के प्रति संवेदनहीनता कितनी अधिक बढ़ गई है। इस कहानी के माध्यम से लेखक ने बता दिया है।

'पिता' ज्ञानरंजन की महत्त्वपूर्ण कहानियों में से एक है। इस कहानी में रूढ़ियों से पिता के ज़िद्दी रूप को व्यक्त किया गया है। संयुक्त परिवार के टूटने और नई पीढ़ी का रुझान शहरों की तरफ होने के कारण वृद्धों की समस्याएँ बढ़ती ही जा रही हैं। 'पिता' कहानी के पिता असहाय नहीं है। वे परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढाल लेते हैं। वे स्वाभिमानी हैं। किसी का एहसान नहीं लेना चाहते, यहाँ तक कि अपने बेटों का भी नहीं। बच्चे जब अपने पिता के लिए सुख-सुविधा का प्रबंध करते हैं और पिता इसे नकार देता है, तो पुत्रों को लगता है कि पिता के बुलंद दरवाज़ानुमा व्यक्तित्व से टकराकर वे भावनात्मक रूप से लहुलुहान हो जाते हैं।

लेकिन उषा प्रियंवदा की कहानी 'वापसी' के पिता अपने परिवार वालों से उपेक्षित होकर अकेले जीवन जीने को विवश होते नज़र आते हैं। परिवार के सभी सदस्य स्वयं में सिमटे हुए हैं और एक दूसरे से अलग और कटे-हुए से हैं। वे अपने ही घर में एक मेहमान बनकर रह गए हैं। आज की वास्तविकता यही है कि परम्परा द्वारा मान्य संबंधों पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है और एक हद तक इन्हें निरर्थक बना दिया है।

'दो गज़ कपड़ा', 'बोनस की ज़िन्दगी', 'माँ पीड़ित क्यों', 'आशियाना', 'छलते रिश्ते', 'तन्हाई', 'छटपटाहट' आदि डॉ. प्रेमा खुल्लर की चर्चित कहानियाँ है। इन कहानियों में वृद्धों की समस्या को दिखाया गया है। दो पीढ़ियों के संघर्ष को लेखिका कलात्मकता के साथ पाठकों के सामने पेश करती हैं। जीवन के उतार-चढ़ाव को देखते हुए छलते रिश्ते की नायिका भाभो अपने जीवन के अट्ठानवें वसंत गुज़ार चुकी हैं। अब भी वह यही समझती हैं कि टूटे हुए परिवार को सँभाल लेगी, लेकिन यह आस अधूरी रह जाती हैं। समीर पूरी संपत्ति एक ट्रस्ट को दान कर देता है और अपना बसेरा वृद्धाश्रम को बना लेता है।

'तन्हाई' कहानी में दो पीढ़ियों के बीच के संघर्ष को लेखिका ने चित्रित किया है। पुत्र को जब सरकारी नौकरी मिल जाती है, तो वह स्वयं के जीवन-स्तर को व्यवस्थित करने में लग जाता है, वह माँ-बाप और कुमारी बहन को भी नज़रअंदाज कर देता है। वैयक्तिक लाभ की मानसिकता के साथ जीवन व्यतीत करने वाले मध्यवर्गीय समाज की मानसिकता को व्यक्त करती यह कहानी वृद्धों की समस्या रेखांकित करती है। आख़िर बूढ़े माँ-बाप आज के युवाओं के लिए समस्या क्यों है? इस कहानी का केन्द्रीय प्रश्न है।

'दो गज़ कपड़ा' कहानी की नायिका ठाकुराइन पाँच बेटों और दो बेटियों की माँ है। गाँव में शायद ही कोई बचा हो; जिसको ठकुराइन ने सहयोग न किया हो। जीवन भर कड़ी मेहनत से बच्चों को अपने मुकाम तक पहुँचाने वाली बूढ़ी माँ जब बीमार पड़ जाती हैं, तो कोई पुत्र माँ को देखने तक नहीं आता है, रुपये-पैसे का सहयोग तो दूर की बात है। पूरा परिवार मिलकर भी एक वृद्ध माँ के लिए दो गज़ कपड़े का इंतजाम नहीं कर पाता है। वृद्धों के प्रति असंवेदनशीलता को चित्रित करती यह कहानी सोचने पर मजबूर करती है। जीवन भर शानो शौकत से जीवन-यापन करने वाली ठकुराइन को अपनी ही संतान से दो गज़ कफ़न भी मुअस्सर नहीं हो पाता है। इससे बड़ी बिडम्बना और क्या हो सकता है।

सुधा ओम ढींगरा की कहानी 'कमरा नंबर 103' में वृद्धों की समस्या को आधार बनाया गया है। अति महत्त्वाकांक्षी होने के कारण नष्ट होती मानवता का चित्रण इस कहानी में किया गया है। बड़ा बनने की मानसिकता को लेकर अमेरिका भेजे गए भारतीय बच्चे जब अपना भविष्य वहीं देखने लगते हैं, अपने वृद्ध माता-पिता को वहाँ ले जाकर जो पीड़ा देते हैं; उन पर लिखी गई मार्मिक कहानी है। प्रवास में रहते भारतीय अपने माँ-बाप को अपने बच्चों की देख-रेख के लिए बुलाते हैं ...डे केयर और बेबी सिटर का पैसा बचाते हैं। जब तक वे स्वस्थ्य होते हैं अपने ममत्व के कारण बच्चों की देख-रेख और घर का काम भी कर देते हैं; लेकिन माँ-बाप जैसे ही बीमार पड़ते हैं, उन्हें सरकारी अस्पताल में भर्ती कर देते है और फिर देखने तक नहीं आते हैं। इस कहानी में वृद्धों की समस्या को दिखाया गया है। वे अपनी कहानी में सामंजस्य-विघटन, संघर्ष, मान-अभिमान जैसे जीवन को पूर्णता देने वाले तत्त्व को समाहित करती हैं। जिसके कारण जीवन के शुभ और अशुभ दोनों पक्ष उनकी कहानियों में दिखते हैं। इनकी कहानियाँ इंसान के अन्दर की इंसानियत और मार्मिकता को कुरेदते हुए अपना तादात्मय स्थापित कर लेती है। प्रवास में अकेलापन, कुंठा, हताशा, वृद्धों के साथ अमानवीय व्यवहार आदि अनेकानेक समस्याओं को लेखिका ने उठाया है।

'कौन सी ज़मीन अपनी' प्रवास के दर्द को व्यक्त करने वाली वृद्धों की कहानी है। पराई धरती पर वास करते हुए अपनी धरती के सुख को भोगने की इच्छा रखने वाला मनजीत दिन-रात मेहनत करता है। एक-एक अमेरिकन डॉलर जोड़ कर अपने भाइयों को भेजता है; ताकि इतनी ज़मीन खरीदी जा सके, जिससे बाकी बची ज़िन्दगी को सम्मानपूर्वक जिया जा सके। अपनी पत्नी मनविंदर को रोमांचित होकर कहता है- 'मनविंदर कौर, जाटों की पहचान ज़मीनों से होती है।' यह कहते हुए मनजीत की छाती गर्व से चौड़ी हो जाती है। मनजीत के इस व्यवहार से मनविंदर ख़ुश नहीं है; वह कई बार मना भी कर चुकी हैं। पर मनजीत का जुनून थमने का नाम ही नहीं ले रहा है। मनजीत के इस व्यवहार से परिवार के लोगों की आवश्यकता को टाला भी जाता रहा है। दुःखी मन से चिढ़ते हुए मनविंदर कहती भी है 'पर कितनी पहचान सरदार जी, कहीं तो अन्त हो। वर्षों से आपके घर वाले ज़मीनें ही तो ख़रीद रहे हैं।...किल्ले पर किल्ले इकट्ठे करते जा रहे हैं।' यह संवाद मध्यवर्गीय भारतीय समाज की सोच को व्यक्त करता है। यह हाल केवल मनजीत का नहीं है। इस संवाद के माध्यम से लेखिका उन तमाम प्रवासियों के मनोभावों को व्यक्त करने में सफल रही हैं। प्रवास में रहते हुए व्यक्ति एक ही साथ बहुत सारे जीवन को जीता है। यहाँ भी मनजीत प्रवास करते हुए वर्तमान में कम जीता है। भविष्य को सुरक्षित करने की चिंता ज़्यादा दिखती है। आपसी संवाद जब विवाद का रूप धारण करने लगता 'मनविंदर का पारा चढ़ते देख मनजीत घर से बाहर दौड़ लगाने चला जाता है।...' मनजीत का दौड़ लगाना प्रतीकात्मक रूप से उन भारतवंशियों की दौड़ है; जो अपने कल को सुधारने के लिए दिन-रात एक जगह से दूसरे जगह, एक वतन से दूसरे वतन में प्रवास करते हैं, ताकि उनके परिवार को अच्छी सुख-सुविधा प्राप्त हो सके।

कहानी का मुख्य कथ्य इस प्रश्न से जुड़ा है कि

क्या जीवन भर बाहर रहने वाला व्यक्ति पूरी मेहनत के साथ पाई-पाई जोड़कर पैसा सिर्फ़ इसलिए भेजता है ताकि अपने वतन में अपना बुढ़ापा व्यतीत कर सके। यह इच्छा रखना अपने आप में कोई मूल्य रखता है? जीवन भर अपने वतन से आसक्त रहने वाले प्रवासी और जीवन भर वतन को उपभोग करने वाले देशवासी क्या प्रवास करने वालों की तुलना में तुच्छ होते हैं? क्या वतन में रहने वाले त्याग का मूल्य नहीं जानते? ऐसे कई प्रश्न हैं जो इस कहानी में उठाए गए हैं, जिनकी प्रासंगिकता से इनकार नहीं किया जा सकता। इस कहानी की त्रासदी तो तब उभरती है; जब अपने ही उन्हें मारने की योजना बनाते हैं; ताकि उनकी ख़रीदी ज़मीनें हथिया सकें। 'कौन सी ज़मीन अपनी' प्रवासी परिवेश और भिन्न सरोकार की कहानी है। इस कहानी में वृद्धों की समस्या को भी चिह्नित किया गया है। वैचारिक धरातल पर वह आधुनिक मूल्यों का वाहक है।

'कौन सी ज़मीन अपनी' कहानी उच्चवर्गीय समाज के खोखले संबंधों, अवसरवादिता और मानवीय मूल्यों की गिरावट पर व्यंग्यात्मक प्रहार करती हैं। इस कहानी में उत्तर आधुनिकता के चकाचौंध में व्यक्ति किस हद तक अमानवीय, असहष्णु हो सकता है, का बड़ा ही आत्मिक वर्णन किया है। डॉ. सुधा पात्रों के माध्यम से अपनी सहानुभूति को व्यक्त करती हैं। सामाजिक व्यवस्था की तमाम बातों को वे ही सहजता के साथ पाठकों के सामने खोलकर रख देती हैं। सुधा जी अपनी कहानियों में पाश्चात्य एवं भारतीय मान्यताओं को भरपूर जगह देती हैं, जिसके कारण यथार्थ और मानवीयता का महत्त्व अधिक मुखर होकर सामने आता है। वे जीवन की आधुनिकता को स्वीकार करते हुए भी मानवता, बंधुत्व एवं रिश्तों की गहराई को अधिक तरजीह देती हैं। वे अपनी रचनाओं के माध्यम से जीवन की संपूर्णता को बनाए रखने के लिए जिन मानवीय मूल्यों की आवश्यकता होती है, उसका उल्लेख अपनी कहानियों में करती है। आज हिन्दी साहित्य अपनी क्षेत्रीय संकीर्णता, रूढ़िवादिता एवं राष्ट्रीय सीमाओं को पारकर अंतर्राष्ट्रीय जगत् में अपनी पहचान बना चुका है। विश्व पटल पर आज हिन्दी अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है। परन्तु बुज़ुर्गों की समस्या कम होती नज़र नहीं आ रही है।

❐

संदर्भ-वागर्थ, समकालीन कहानियाँ, डॉ. पुष्पपाल सिंह, कमरा नंबर 103-डॉ.सुधा ओम ढींगरा।

चोका

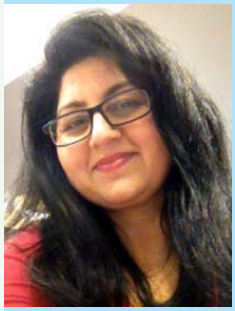

ऑस्ट्रेलिया (सिडनी) में रह रहीं डॉ. भावना कुँअर की तारों की चूनर, धूप के खरगोश (हाइकु संग्रह),जाग उठी चुभन(सेदोका-संग्रह), चन्दनमन (हाइकु-संग्रह), भाव कलश (ताँका संग्रह), गीत सरिता (बालगीतों का संग्रह-तीन भाग),यादो के पाखी (हाइकु संग्रह),अलसाई चाँदनी (सेदोका संग्रह), उजास साथ रखना (चोका-संग्रह), डॉ0सुधा गुप्ता के हाइकु में प्रकृति (अनुशीलनग्रन्थ),हाइकु काव्यःशिल्प एवं अनुभूति (एक बहु आयामी अध्ययन) संपादन संकलन और तक़रीबन आठ संग्रहों में रचनात्मक सहयोग है।
संपर्कः bhawnak2002@yahoo.co.in

(जापानी शैली की लम्बी कविता है। 5-7 वर्ण क्रम में; अन्त में 7-7 की दो पंक्तियाँ होती हैं।)

मेरी माँ

कल माँ खूब रोई
अँखियाँ मेरी
रातभर न सोईं
उसका दुःख
मैं समझ न पाती।
मैं देती प्रेम
झोली भर उसको,
दिखता कोई
अधूरा एक कोना,
माँ के दिल का।
भरती उसको भी
मेरी बहना।
जाने क्यूँ छलकती
आँखें फिर भी।
जाने क्यूँ रहती है
राहें तकती।
हर आहट पर
दौड़ के जाती,
भारी मन लिये वो
लौट के आती।
परछाई-सी अब
दिखती है माँ।
मुरझाई-सी अब
खिलती न माँ।
लगँड़ाई सी अब
चलती है माँ।
बिस्तर पकड़ती,
कभी थकती,
कमज़ोर पड़ती
मन से है माँ।
न ही खाती, न पीती
कैसे है जीती?
मन आस-गागर
हो गई रीती।
मैं आज बरसों में
समझ पाई
माँ के दिल का दर्द,
रुकी ख़ामोशी,
माँ का अधूरापन,
वो अधूरी है-
बिना पुत्र प्रेम के
क्यूँ नहीं आता?
खाली मन का कोना
प्रेम-रस से
ख़ुद ही भर जाता।
क्या मजबूरी
क्यूँ न कभी बताता।
माँ की चाहत
है एक बराबर
उमड़े जैसे
हो गहरा सागर
प्रेम पुत्र का
तनिक मिल जाता
पलभर में
अटकती साँसों को
आराम मिल जाता।

❐

कविताएँ

बृजेश नीरज उ.प्र. सरकार की सेवा में कार्यरत हैं। 'कोहरा सूरज धूप' (कविता संग्रह) 'त्रिसुगंधि', 'परों को खोलते हुए-1' (साझा संकलन) हैं। बृजेश जी ने कविता संकलन 'सारांश समय का' का संपादन किया और 'शब्द व्यंजना' मासिक ई-पत्रिका के विशेष संपादक हैं। विमला देवी स्मृति सम्मान 2013 से सम्मानित सम्प्रति जनवादी लेखक संघ, लखनऊ इकाई के कार्यकारिणी सदस्य हैं।
ईमेलः brijeshkrsingh19@gmail.com
संपर्क : 65/44, शंकर पुरी, छितवापुर रोड, लखनऊ-226001
दूरभाष : 09838878270

कुछ ज़रूरी बात

छोड़ो
गेंदे और गुलाब की बातें
बोगनबिलिया पर तो
मधुमक्खियाँ भी नहीं बैठतीं

चलो, बात करते हैं
ध्रुवों पर पिघलती बर्फ की
दरकती चट्टानों की
धँसती ज़मीन की

खोजते हैं कारण कि
क्यों बढ़ती जा रही है
घरों में दीवारों की सीलन;
हल्की से गर्मी में भी
क्यों पिघलती है सड़क

सोचते हैं
साँसों में बढ़ती खड़खड़ाहट
गले में रुँधती आवाज़
आसमान के बदलते रंग के बारे में

इस कठिन समय में
जब पेड़ों से पत्ते लगातार झड़ रहे हैं
सीना कफ़ से जकड़ गया है
बाजू कमज़ोर हो रहे हैं,
कविता को
सुन्दर फ्रेम में मढ़कर
ड्राइंग रूम में सजाने के बजाय
करनी है कुछ ज़रूरी बात
***

तारों की तलाश

किसी गर्वीले मैदान में रह गए
खूँट की तरह
बाज़ार की रोशनी के जगमग शोर में
अँधेरा चुपचाप सिमटा पड़ा है

रोशनी के साथ ही पलता है अँधेरा

बहुत से प्रश्न-बीज बिखरे हैं
फ़सल बनने की उम्मीद में
लेकिन चुँधियाते प्रकाश में
हर अंकुरण
आँख मिचमिचाकर रह जाता है

खूँट चुभता है
यह चुभन बनाती है घाव
और इस नासूर से रिसता बदबूदार मवाद
जमता जा रहा है
आँखों की दोनों कोरों पर

मंदिर के लालची पुजारी की तरह
आँखें ढूँढ़ती हैं
आरती के लिए उठे हाथों की मुट्ठियों में
छिपे सिक्के
श्रद्धा न ईश्वर में हैं, न आरती में

रोशनी की ऊष्मा में
पिघलता अँधेरा
धीरे-धीरे फैलता जा रहा है
धरती के एक छोर से क्षितिज के पार तक;
दीपक तले से व्योम तक

इस स्याह होते आकाश में
तारों की तलाश है!
***

अँधेरे से लड़ने के लिए

अँधेरे से लड़ने के लिए
धूप ज़रूरी नहीं होती
ज़रूरी नहीं होते चाँद और सूरज

ज़रूरी नहीं दीपक
तेल से भीगी बाती
माचिस की तीली

ज़रूरी है आग
मन के किसी कोने में सुलगती आग!
***

गंध

दुनिया में जितना पानी है
उसमें
आदमी के पसीने का भी योगदान है

गंध भी होती है पसीने में

हाथ की लक़ीरों की तरह
हर व्यक्ति अलग होता है गंध में
फिर भी उस गंध में
एक अंश समान होता है
जिसे सूँघकर
आदमी को पहचान लेता है
जानवर

धीरे-धीरे कम हो रही है
यह गंध
कम हो रहा है पसीना
और धरती पर पानी भी।
❐

कविताएँ

डॉ. अंजना बख्शी समकालीन हिन्दी कविता में एक उभरता हुआ नाम है। 'गुलाबी रंगोंवाली वो देह' (कविता-संग्रह) है। देश विभाजन पर जे एन यू से डॉक्टरेट हैं। 'कादम्बिनी युवा कविता' पुरस्कार 2006, डॉ. अम्बेडकर फैलोशिप सम्मान, युवा प्रतिभा सम्मान 2004 इत्यादि से सम्मानित अंजना जी ने ग्रामीण अंचल पर मीडिया का प्रभाव, हिंदी नवजागरण में अनुवाद की भूमिका, अंतरभाषीय संवाद, संपादन की समस्याएँ, पंजाबी साहित्य एवं विभाजन की त्रासदी आदि विषयों शोधकार्य भी किए हैं। कविता, कहानी, आलेख, लघुकथा, साक्षात्कार, समीक्षा एवं फीचर-लेखन आदि लेखन-विधाओं में बराबर हस्तक्षेप रखनेवालीं अंजना बख्शी अभिनय भी करती हैं।
ईमेल : anjanajnu5@yahoo.co.in
संपर्क : 207, साबरमती हॉस्टल, जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी, नई दिल्ली-110067
दूरभाष : 09868615422

कविता

कविता मुझे लिखती है
या, मैं कविता को
समझ नहीं पाती
जब भी उमड़ती है
भीतर की सुगबुगाहट
कविता गढ़ती है शब्द
और शब्द गढ़ते हैं कविता
जैसे चौपाल से संसद तक
गढ़ी जाती हैं जुल्म की
अनगिनत कहानियाँ,
वैसे ही,
मुट्ठीभर शब्दों से
गढ़ दी जाती हैं
काग़ज़ों पर अनगिनत
कविताएँ और कविताओं में
अनगिनत नक़्श, नुकीले,
चपटे और घुमावदार
जो नहीं होते सीधे
सपाट व सहज वर्णमाला
की तरह!!
***

जीत मुबारक हो

वक़्त, बेवक़्त, आ जाया
करते थे अक्सर
मुश्किल होता था
सँभालना इनको!
उस रोज़ मैंने बादलों से कहा
बरसो तो वो बरसने लगे
मैंने आँसुओं को होले से
बोला मुस्कराते हुए
जीत मुबारक हो!!
***

ज़िन्दगी बेहद खूबसूरत है

कभी ये टमाटरों सी झक्क
लाल हो जाती है,
कभी प्याज़-सा रुलाती है
तो कभी मिर्च-सी तीखी और
इमली-सी चटपटी हो जाती है!
ज़िन्दगी बेहद खूबसूरत है
कभी ये बच्चों की रंगबिरंगी
फिरकी-सी चलती है गोल-गोल
और कभी ठहर जाती है
पल भर को जैसे,
बचपन में माँ ठहर जाया
करतीं थीं कहानी सुनाते वक़्त,
और फिर उनका ओजमय
चेहरा बुनता था एक नई
कहानी, उनके अपने संघर्षों की।
ज़िन्दगी बेहद ख़ूबसूरत है
ये बिखेरती है इन्द्रधनुषी छटा
से सात रंग
और कभी-कभी तो हो जाती है बेरंग,
जैसे बिना देगी मिर्च के मटर-आलू
कभी ज़िन्दगी गौतम बुद्ध-सी
शांत-सौम्य लगती है
तो कभी हातमतायी-सी
दानवीर और कभी-कभी
हो जाया करती है द्रोणाचार्य-सी
निष्ठुर, जो माँग बैठता है
एकलव्य-से उसका अँगूठा
वैसे ही ज़िन्दगी भी माँगती
है बहुत कुछ
सचमुच ज़िन्दगी बेहद ख़ूबसूरत है!!
***

प्यार ऐसा होता है?

कितनी बार चाहा ऐनी
तुझे बताना -आज-कल
तुम मेरे सपनों में रोज़ ही चली आती हो
अपने 'अक्षरों के साये' के साथ,
कभी धुँए के छल्ले उड़ाती
तो कभी 'नागमणी' के पन्ने पलटती
वो देखो तुम्हारा अक्स
इन दीवारों पर सजीव हो
उठा है लाल-पीला
और दूधिया रंगों से
आड़ी-तरछी रेखाएँ
तुम हवा में बनाने लगी हो अमृता,
कभी-कभी सोचती हूँ
तुम्हें और 'रसीदी टिकट' को
क्यों नहीं समझा गया इतना
जितना कि एक सागर की
गहराई को समझा जाना चाहिए!
तुम्हारे भीतर के सागर से
कई सीप निकाले हैं
मैंने और कुछ फूल तुम्हारी
बगिया से चुन लाई हूँ मैं.!!
इमरोज़ से मिलकर लगा उस रोज़,
तुम यहीं हो, उसी में ज़िन्दा
तुम्हारी साँसें, उसकी साँसों में महक रही हैं
नहीं जानती थी,
प्यार ऐसा होता है।
❐

कविताएँ

कैलिफोर्निया, यूएसए की अंशु जौहरी हार्डवेयर इंजीनियर हैं। खुले पृष्ठ (खंड काव्य), शेष फिर (कहानी संग्रह) हैं। सन् 1998 में 'उद्गम' की स्थापना की; जो विश्व की प्रथम साहित्यिक वेबज़ीनो में से एक थी, सन् 2004 तक उसका सम्पादन किया। हिंदी नाट्य 'तलाश वजूदों की' (2001) तथा अंग्रेज़ी नाट्य 'मॉम'स मॉम' (2011) का सैन होसे, कैलिफोर्निया में मंचन।
ईमेलः anshu@udgam.com
संपर्कः 2839 नौर्क्रेस्ट ड्राईव सैन होसे, कैलिफोर्निया, 95148, यू.एस.ए।

पतंग

कुछ डोरियाँ
कुछ ख़्वाहिशें
कुछ काग़ज़ रंगीन

एक पतंग रंगबिरंगी
जो उड़ने से थी बेख़बर
मैं उड़ाने में उसे लीन

हाथ में डोर का छोर था
हवाओं का ज़ोर था
वह झिझकी
दो एक बार ठिठकी
फिर उड़ी वह यूँ नभ में
जैसे पंख नए मिले
कि मैं खींचू भी अगर
तो जँगली हवा के लगे गले

हाथ में डोर का अंतिम सिरा
एक उदास सुगबुगाहट
मैंने उसमें देखी
विस्तार ढूँढ़ते स्वप्नों की फड़फड़ाहट

उँगलियों की गिरफ्त
कमज़ोर सी हुई
जो जोड़े थी डोर हमें
हवा में गुम हुई

कुछ कोशिशें मैंने की
छूटे सिरों को पकड़ने की
सिहर कर, फिर दौड़ कर
आगंतुक हवाओं से लड़ने की

दूर क्षितिज की ऊँचाई में
उसे मैंने ढलते देखा था
किसी कोलाहल के सन्नाटों सा
फिर नेपथ्यों में फेंका था
पर जानते हो
वो सारी उड़ती हुई ख़्वाहिशें
किसी ज़मीन के बिना
एक बड़े से वृक्ष की
टहनियों में जा अटकी हैं

डर लगता है
पतंग के फटने, छितरने का
तुम्हीं बताओ
कैसे खींचू
वो बौनी सी डोर
जो उस पतंग से लटकी है।।

***

वो अंतिम बात

शायद ये वाक्य वो अंतिम बात हो
और उसे बाँधते ये आख़िर के कुछ शब्द
जहाँ आरम्भ क्या था
क्या होना चाहिए था
ये मायने नहीं रखता

मैं हर पल में
जीवन के पूर्ण विराम को जीती हूँ
तुम हर आते पल में
एक दबी सी जिज्ञासा बन
कहानी में प्राण फूँका करते हो
देखो, मैं हर समाप्ति में
तुम्हारे दिए आरंभ को भर रही हूँ
यात्रा जैसा कुछ भी नहीं मेरे पास
मैं बस
हर पल के ठौर से गुज़र रही हूँ।।

***

काल कोठरी

अजीब सा सपना
मैं अंतरिक्ष के अंतहीन विस्तार में
दौड़ रही हूँ निर्बाध गति से
जहाँ न आदि है, न अंत है
न कोई ओर, न छोर
न कोई आवाज़, जो रोके या टोके
न कसकर पकड़ती कोई भी डोर

न प्रतीक्षा है, न प्रतिज्ञा
न आज्ञा है, न अवज्ञा
एक क्षण में मैं युगों को जी रही हूँ
प्यास के मंथन में
हर प्यास को पी रही हूँ

फिर अचानक हुई निर्वाण से विरक्ति
और मैं लौटना चाहती हूँ
वापिस उस काल कोठरी में
जहाँ ज़ंजीरों को काटने की प्रबलता
मेरी शिराओं में बहा करती है
और जहाँ अँधेरों में रहकर
मुझे रोशनी को कुरेदने की
आदत पड़ गई है

मुक्त मैं यूँ भी थी
मुक्त मैं यूँ भी हूँ

राख होती उल्काओं को
अंतरिक्ष की कामना भी क्यूँ हो?
उनके लिए
एक काल कोठरी का विस्तार ही काफी है
और एक छोटी सी आस
कि तुम धुँधलकों में भी
सब साफ़-साफ़ देख सको।।

❐

कविताएँ

मृदुला प्रधान के लेखन की मुख्य विधा कविता है। हिंदी और मैथिली में लिखती हैं। हिन्दी में छह कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। साहित्यिक और सामाजिक पत्र-पत्रिकाओं, पोएट्री सोसाइटी ऑफ इंडिया एवं अन्य कई संस्थाओं से जुड़ी हुई हैं।
ईमेलः mridulap12@gmail.com
संपर्कः डी-191, ग्राउण्ड फ्लोर, साकेत, नई दिल्ली-110017
मोबाइलः9810908099

जाने कैसे .....

जाने कैसे
पता चल जाता है
मेरी कविताओं को
मेरा उदास होना .....
आने लगती हैं
झुंड-के-झुंड
किताबों के पन्नों से,
डायरी की काट-छाँट से,
मुड़े-तुड़े काग़ज़ की
तहों से
घुमाने, हँसाने, बहलाने .....
ले आती हैं
लुभावने शब्दों के
मनमोहक पिटारे
कि..... चुन-चुन कर
सजाऊँ,
थमा देती हैं
हाथों में
काग़ज़, कलम, दवात
कि.....कल्पनाओं में पंख
लगाऊँ ,
और मैं..
भावों की रस-वीथि में
विचरती हुई,
डूबती हुई,
उतराती हुई
लिखने की कोशिश में
कुछ नया
लग जाती हूँ.....
कि क़र्ज़ है मुझपर
कविता का
तो फ़र्ज़ मेरा भी है
सो
निभाती हूँ ..
***

सुबहों का समय .....

सुबहों का समय
अख़बार के पन्नों का
खुल जाना.....
वो ख़ुशबू भाप की
उठती हुई
चाय के प्यालों से..
पराठों की वो प्लेटें
सब्ज़ियाँ सूखी-करीवाली,
करारे से पकौड़े
और भागम-भाग
वो भगदड़ ..
घड़ी की दौड़ती सूइयों से
उठते शोर की
हलचल
वो जल्दी से भरा जाना
'टिफिन'
'मिल्टन' के डब्बों में .....
तुम्हारी याद का आना
वो मेरा दिल
बहल जाना .....
***

शाख़-ए-गुल से ...

शाख़-ए-गुल से
ये मैंने
कहा एक दिन...
अपनी ख़ुशबू तो दे दो
मुझे भी जरा
कि लुटाऊँगी मैं भी
यहाँ-से-वहाँ.....
कुछ झिझकते हुए
उसने हामी भरी...
फिर कहा, मित्र
लेकिन.....
सिखा दो मुझे
पहले
अपनी तरह तुम
ये चलना मुझे भी
यहाँ-से-वहाँ.....
❐

ग़ज़ल

गिरिराजशरण अग्रवाल

सन्नाटे में गूँज, भीतर शोर बहुत है, मौसम बदल गया कितना, रोशनी बनकर जिओ, शिकायत न करो तुम, आदमी है कहाँ (ग़ज़लें), नीली आँखें और अन्य एकांकी, जिज्ञासा और अन्य कहानियाँ, बाबू झोलानाथ, राजनीति में गिरगिटवाद, मेरे इक्यावन व्यंग्य (व्यंग्य), समय एक नाटक (ललित निबंध), दंगेः क्यों और कैसे, विश्व आतंकवाद : क्यों और कैसे, हिन्दी पत्रकारिता : विविध आयाम; आओ अतीत में चलें, मानवाधिकार : दशा और दिशा, ग़ज़ल और उसका व्याकरण, बच्चों के हास्य-नाटक, बच्चों के रोचक नाटक, बच्चों के शिक्षाप्रद नाटक, ग्यारह नुक्कड़ नाटक, नारी : कल और आज, पर्यावरण : दशा और दिशा, हिंसा : कैसा-कैसी, वादविवाद प्रतियागिता : पक्ष और विपक्ष, मंचीय व्यंग्य एकांकी, अक्षर हूँ मैं (काव्य), मेरी हास्य-व्यंग्य कविताएँ, हिन्दी तुकांत कोश 'विद्यासागर'; 'बाबू झोलानाथ' पर उ.प्र. हिन्दी संस्थान लखनऊ का अनुशंसा पुरस्कार; 'राजनीति में गिरगिटवाद' पर उ.प्र. हिन्दी संस्थान लखनऊ का अनुशंसा पुरस्कार; मानवाधिकार : दशा और दिशा पुस्तक पर राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, भारत सरकार का प्रथम पुरस्कार; डॉ. रत्नलाल शर्मा स्मृति न्यास, दिल्ली का श्रीमती रतन शर्मा बाल साहित्य पुरस्कार; सहस्राब्दी विश्व हिन्दी सम्मेलन द्वारा 'राष्ट्रीय हिन्दी सेवी सहस्राब्दी सम्मान'; 'आओ अतीत में चलें' पुस्तक पर उत्तरप्रदेश हिंदी संस्थान का सूर पुरस्कार;'समन्वय' सहारनपुर का सारस्वत सम्मान।

संपर्क : प्रधान संपादक शोध दिशा
16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ.प्र.) 246701
07838090732
ई-मेल giriraj3100@gmail.com

हमसे पूछो ज़िन्दगी में आज क्या कम हो गया
आदमी से आदमी का वास्ता कम हो गया
साथ चलकर भी तो हममें दूरियाँ क़ायम रहीं
दिल से दिल जब मिल गए तो फ़ासला कम हो गया
मील के पत्थर से गिनने में तो लगता था बहुत
हमने क़दमों से जो नापा, रास्ता कम हो गया
प्रेम के चेहरे को चादर स्वार्थ की ढकती रही
धीरे-धीरे उसका-मेरा वास्ता कम हो गया
मन में थी उम्मीद जब तक थी शिकायत भी बहुत
मिट गईं आशाएँ तो शिकवा-गिला कम हो गया

0

गीत गा, तान लगा, प्यार का सरगम बन जा
खेत सूखे हों तो बरसात का मौसम बन जा
ज़ख़्म तो ज़ख़्म है, तेरा हो या मेरा भाई
जो भी घायल हो, उसी के लिए मरहम बन जा
एक ही लम्हे को मोती की तरह बन के चमक
फूल के गाल पे ठहरा हुआ शबनम बन जा
क़ाफ़िला साथ में ले, हाथ बढ़ा, हाथ बढ़ा
रुत है अलगाव की, आ प्यार का परचम बन जा
अब के महफ़िल में किसी को भी अकेला मत छोड़
दोस्त, इसका तो किसी और का हमदम बन जा

0

जो लक्ष्य है मिलेगा, भरोसा न छोड़िए
पत्थर भी हों तो राह में चलना न छोड़िए
उम्मीद जिसका नाम है जीवन के साथ है
नाकामियों के बाद भी आशा न छोड़िए
कुछ घात करने वाले भी हैं, दोस्तों के बीच
इन सिरफिरों के वास्ते दुनिया न छोड़िए
चाहत के बावजूद वह हासिल नहीं, न हो
उसका ख़याल, उसकी तमन्ना न छोड़िए
पहचान है जो फूल की अपनी महक से है
काँटों पे फूल बनके महकना न छोड़िए

0

बूँद का सारा हुनर सागर को पी जाने में है
पेड़ जो बरगद का है, बारीक़ से दाने में है
काम ख़ुद ही बोल उठता है, मुनादी क्यों करें
सुख गरजने में नहीं, बादल बरस जाने में है
मन की दुनिया शांत हो तो धूप में भी छाँव है
चैन कहते हैं जिसे, बस्ती न वीराने में है
चल गईं पुरवाइयाँ, बाग़ों में झूले पड़ गए
और कितनी देर अब बरसात के आने में है
कोई फूलों से कहे जाकर कि राहत जो भी है
ख़ुद महकने में नहीं, दुनिया को महकाने में है

0

कामयाबी कष्ट के विवरण से आँकी जाएगी
ज़ोर से पटकोगे जितना, गेंद ऊँची जाएगी
हो सके तो तुम हवस बनने न दो इच्छाओं को
जितना इंधन झोंक दोगे, आग बढ़ती जाएगी
दर्द से लड़कर गुज़ारो या दुखों में काट दो
रात जितनी रह गई है, बीत वह भी जाएगी
झूठ पॉलिश है, उतर जाता है लम्हे भर के बाद
बात कड़वी ही सही, सच हो तो मानी जाएगी
आज है, जो कुछ भी है, जो आज से बिछुड़ा, गया
कल का दिन जब आएगा तो कल की सोची जाएगी

0

अब क्षितिज की ओट से सूरज निकलना चाहिए
रात लंबी हो गई है, अब सवेरा चाहिए
देखते-ही-देखते कुछ लोग पत्थर हो गए
मुझको भी तो दोस्तो, कुछ सख़्त होना चाहिए
रास्ते दोनों के इक दिन तो अलग होने ही थे
मुझको अपनापन तो उनको सिर्फ़ दुनिया चाहिए
यों ही गर बैठे रहे तो घेर ही लेगा तिमिर
रात हो कितनी घनी दीपक तो जलना चाहिए
अब तो भरना चाहिए इसमें कोई अच्छा-सा रंग
अब तो इस संसार का नक़्शा बदलना चाहिए

0

चमकता भी है लेकिन चाँद को गहना भी पड़ता है
पुरानी हो चुकी दीवार को ढहना भी पड़ता है
सभी बातों को मनवाने की ज़िद करने से बाज आओ
निभाने के लिए कुछ छोड़ना-सहना भी पड़ता है
ये बेहतर है कि होंठों पर न आने दो कसक अपनी
मगर मजबूर हो जाने पे दुख कहना भी पड़ता है
कभी अपनत्व का बंधन, कभी दुनिया की मजबूरी
कई अवसर वे होते हैं कि चुप रहना भी पड़ता है
ज़रूरी है कभी जीवन में सूरज की तपन बनना
मरुस्थल में नदी बनकर कभी बहना भी पड़ता हैं

0

सागर की हलचलों से न डरने की सीख दे
डूबे हुओं को दे तो उबरने की सीख दे
है कारवाँ को सामना, पर्वत का, रात का
तू आके घाटियों से गुज़रने की सीख दे
छाई हुई है किसलिए वातावरण में चुप
होंठों के क़हक़हों को बिखरने की सीख दे
मोती नहीं मिलेंगे किनारे पे बैठकर
पाताल में नदी के उतरने की सीख दे
बीते हुए दिनों में लगे थे जो दिल पे घाव
अब उनको भूलने की, बिसरने की सीख दे

0

हाइकु

अनिता मण्डा

नभ-सागर
भर तारे गागर
पीते चाँदनी।

0

काटो न पेड़
नभ के मेहमान
ढूँढ़ेंगे नीड़।

0

नभ-आँगन
उषा देती बुहार
तारों के फूल।

0

तारों का दोना
साँझ के हाथ गिरा
नभ में फैला।

0

निशा सेंकती
तारक-अंगार से
चाँद की रोटी।

0

तारों के मोती
निशा पिरोने बैठी
भोर ले भागी।

0

टूटता तारा,
माँगा मन में कुछ,
मूँदके आँखें।

0

हाँक ले जाता,
चाँद गड़रिये-सा,
तारों की भेड़ें।

0

लगा डिठौना
तारों के साथ खेले
चाँद सलोना।

❐

सेदोका

कृष्णा वर्मा

व्यक्ति बेमोल
फिर बिक जाता है
जीवन में सहसा
आस्था के हाथों
लालच स्वार्थ में या
बरबस प्यार में।

0

उमड़ आया
प्रेम के घुमड़ते
आभासी बादलों से
स्मृति छाया में
आँसुओं का सैलाब
तोड़ कोरों का बाँध।

0

मरता मन
सजग जो कामना
चिंता बने सहेली
ठेल सत्य को
पाले भ्रम-कुहासा
ख़ाली रहे हथेली।

0

जब तक कि
चलना न सीखा था
सँभालते थे लोग,
सँभला ज्यों मैं
गिराने की विधियाँ
सोचने लगे लोग।

0

तड़पे मन
प्रिय बिछुड़न से
तड़पें ज्यों किनारे
तिड़के मिट्टी
तड़पें मछलियाँ
सूखें नदिया धारे।

❐

माहिया

ज्योत्स्ना प्रदीप

अब सब कुछ बदल गया
फूलों-से दिल को
वो पल में मसल गया।

0

ये प्यार न शर्तें हैं
जीवन का क़र्ज़ा
हम अब तक भरते हैं।

0

मन को अब होश नहीं
रस घन से बहता
मौसम पर रोष नहीं।

0

फिर भी कुछ बाक़ी है
अलकों में उलझी
बूँदें एकाकी हैं।

0

यूँ न कभी रोना है
देखो शबनम को
काँटे भी धोना है।

0

अब बहुत हुआ सहना
नभ पर चमकेगी
बेटी घर का गहना।

0

सहने का काम नहीं
बनना क्यों सीता
मिलते जब राम नहीं।

0

कुछ ऐसे नाते हैं
कितनी दूरी हो
मन में बस जाते हैं।

0

होठों को भान नहीं
कितने दिन बीतें
इन पर नव-गान नहीं।

❐

पुस्तक समीक्षा

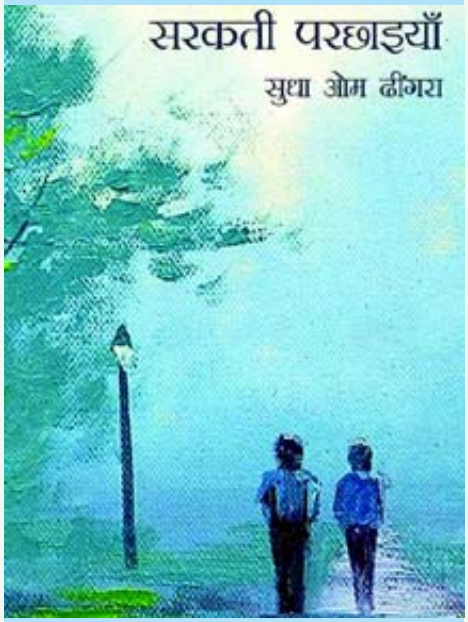

सरकती परछाइयाँः काव्य-संग्रह
रचनाकारः सुधा ओम ढींगरा
प्रकाशकः शिवना प्रकाशन, सीहोर, मध्य प्रदेश
संस्करण : प्रथम (2014)
पृष्ठ :120 मूल्य : रु. 150 /-

मनीषा जैन
संपर्कः65 ए, वेस्टर्न एवेन्यू, सैनिक फार्म, नई दिल्ली-110080
मोबाइलः 09871539404
ईमेलः22manishajain@gmail.com

जीवन के आरोह-अवरोह की कविताएँ : सरकती परछाइयाँ

समीक्षक:मनीषा जैन

साहित्य की लगभग सभी विधाओं में लिखने वाली लेखिका का काव्य-संग्रह 'सरकती परछाइयाँ' के आरम्भ में प्रतिष्ठित साहित्यकार रामेश्वर काम्बोज 'हिमांशु' ने कहा है-'गहन संवेदना की सहज और कलात्मक अभिव्यक्ति ही किसी रचना को सम्प्रेष्य बना सकती है।' यह कथन इस काव्य संग्रह पर सटीक बैठता है। ये कविताएँ इतनी सम्प्रेषणीय हैं कि हर पाठक इनमें अपने जीवन की छवि देखेगा तथा इन कविताओं से स्वयं को जोड़ेगा। और यही किसी भी कवि के लिए महत्त्वपूर्ण होता है कि उसके पाठक उसकी कविताओं से जुड़ाव महसूस करें।

इस संग्रह की कविताएँ जीवन के आरोह-अवरोह की कविताएँ हैं। जीवन के अहसासों की कविताएँ हैं। जीवन के दुःख-सुख के संचालित लय की कविताएँ हैं। कविता संग्रह का शीर्षक ही बहुत कुछ कह जाता है। सरकती परछाइयाँ मानों जीवन को व्यक्त करती है। मानव जीवन क्या है ? मात्र सरकती परछाइयों-सा ही तो है, जिसमें व्यक्ति आता है और चला जाता है और पीछे रह जाते है अहसास, यादें, स्मृतियाँ। उम्र बढ़ने के साथ-साथ जीवन रूपी रंगमंच पर परछाइयाँ जैसे सरकती हैं और एक दिन लुप्त हो जाती हैं। और रह जाती हैं बस समय की स्मृतियाँ; जिन्हें व्यक्ति अपने हृदय में रख बस स्मृतियों के सहारे जीता जाता है। जीवन की धूप-छाँव को ही व्यक्त करता हुआ शीर्षक।

पहली ही कविता 'पतंग' जैसे की जीवन। वे कहती हैं-'दो संस्कृतियों के टकराव में/कई बार कटते-कटते बची/ शायद देसी माँझे में दम था'/। एक भारतीय में इतना दमखम होता है कि वह विदेश में भी अपनी पहचान बना पाता है। भारतीय मिट्टी से जुड़े अहसास ही विदेशों में रह रहे लोगों को स्थायित्व प्रदान करते हैं। 'सच कहूँ' कविता में जीवन का यथार्थ एक स्त्री के माध्यम से किया गया है। जब विश्व आर्थिक मंदी के दौर से गुज़र रहा था तब आत्महत्या कर चुके पति की पत्नी के मन के भाव इस कविता में आए हैं। कौन समझ सकता है ? एक स्त्री के मन की व्यथा कथा-'वह बच्चों को सीने से लगाए/ बिलख रही थी.../आँखों में सपनों का सागर समेटे,/ अमेरिका वे आए थे/सपनों ने ही लूट लिया था उन्हें.../सच कहूँ /प्रकृति की बातें/फूलों की ख़ुशबू अब नहीं भरमाती..../' इसीलिए जब जीवन की परिस्थितियाँ दारुण हों, तब कहाँ भाती है भला प्रकृति, प्यार, ख़ुशबू व महक।

काव्य संकलन में स्मृतियों का अनूठा संसार है और सच भी है। ये स्मृतियाँ ही हैं; जो मनुष्य को तरोताज़ा रखती हैं। स्मृतियाँ ही वो अनमोल धरोहर होती हैं; जिनसे हम पलभर में रूबरू हो लेते हैं। 'वर्षों की यात्रा' कविता में कवयित्री अपने बचपन की यादों में ऐसे डूबती हैं जैसे कल की सी बात हो। ऐसी यादें ही धरोहर की तरह होती हैं। जैसे निराला जी 'सरोज स्मृति' में अपनी बेटी को याद करते हैं तथा वे यादें ही उनकी धरोहर बनते हैं। इस तरह प्रवासी भारतीय अपने दिलों में भारत की लौ को ज़िंदा रखते हैं।

आज तक जितने भी लेखक हुए सभी ने माँ पर कविता या कहानी ज़रूर लिखी है। यह एक सार्वभौमिक सत्य है कि माँ को कभी भूलाया नहीं जा सकता, सो ही कवयित्री भी। एक अमेरीकन महिला में माँ की छवियाँ देखती हैं और कह उठती हैं-बस को जाते देखने वाली/वह अमरीकी महिला/मुझे मेरी माँ-सी लगी। माँ एक ऐसा

शब्द जिसमें लाड़-दुलार टपकता है। माँ होती ही ऐसी है, जो अपनी पीड़ा भी छुपा लेती है अपने बच्चों व पति की ख़ातिर। वे कहती हैं-दफ़्तर से थके-माँदे पिता जी/घर आते/माँ भी थकी होतीं/अपनी थकान को/ मुस्कराहट में छुपा जातीं। इस लम्बी कविता में कवयित्री ने एक अमेरिकी महिला के रोज़नामचे में अपनी माँ को देखा है यानी कि स्त्री का संघर्ष पूरी दुनिया में एक जैसा ही है।

आज के उत्तरोतर आधुनिक समय में जब व्यक्ति के पास व्यक्ति के लिए समय नहीं, ऐसे कलिहारे समय में हम आधुनिक होने की होड़ में स्वयं को ही छल रहे है इसी भाव की कविता 'छलना' यही कुछ कहती है-'समय की कमी है..../आधुनिक होने की/पहचान और/व्यस्त बताने की/होड़ में/स्वयं को छलते रहते हैं हम।' यह समय स्वयं को छलने का भी है तथा जहाँ मानवीय संवेदनाएँ खत्म होती हैं, वहीं से ग्लोबलाइज़ेशन शुरू होता है और इस ग्लोबलाइज़ेशन ने हमें कितना अकेला व हताश किया है यही भाव 'ग्लोबलाइज़ेशन' कविता में दिखाई देता है कि मानव ग्लोबल होकर अपने घर का भी नहीं रहता।

संग्रह में कई कविताएँ आज की बुज़ुर्ग पीढ़ी के लिए हैं कि किस तरह आज बुज़ुर्ग अकेले हो कर वृद्धाश्रम की शरण लेते हैं; जोकि एक चिन्ता का विषय है। इस तरह कवि ने यहाँ समाज की गंभीर व ज्वलंत समस्या को उठाया है। चाहे देश हो या विदेश समस्या दोनों ओर है। मानव शरीर पाँच तत्त्वों से बना है और पंचतत्त्वों में ही समा जाता है। फिर व्यक्ति जीवन के रंगमंच पर अभिनय कर चला जाता है; लेकिन उसकी यादें अपनों को सताती रहती हैं। इसी मृत्यु का भाव कवयित्री ने 'गन्तव्य की यात्रा' में उठाया है। वे कहती हैं-आत्मा अपने सृजनहार/आदि और अंनत में/विलीन होकर/मुक्ति पाती है/पंच तत्त्वों से।/ संग्रह की कई कविताओं में देश छोड़ने का दंश व देश प्रेम की भावना का चित्रण मुखर हुआ है। भारत से बाहर रह रहे भारतवासी अपना देश कभी नहीं भूलते और यही देश प्रेम उन्हें बार-बार भारत की मिट्टी से जोड़ता है। और प्रवासी भारतीय बार-बार भारत आने की इच्छा रखते हैं। संग्रह की कविता 'सच कहा आपने' में कवयित्री कहतीं हैं-'देश छोड़ा तो/अपनी मुट्ठी में हम/सोंधी-सोंधी खुशबू/बंद कर लाए/पोटली में सभ्यता के परौंठे /संस्कृति का आचार बाँध लाए/माथे पर हिन्दी की बिन्दी/संस्कारों की साड़ी औ/अस्मिता के गहने पहन आए/सही कहा आपने हमें जीना नहीं आता.../' कवयित्री भारतीयता की बाँसुरी विदेश में भी बजाती हैं और साथ ही वे भारत की आज की स्थिति पर गहरा कटाक्ष भी करती हैं। भारत में जो आज सरकारी तंत्र में हो रहा है वह उजागर करने की कोशिश करती हैं-ठीक कहा आपने/ देश को लूटने वाले/ देश प्रेमियों की तरह 'हमें जीना नहीं आता।' यहाँ कवयित्री ने उन देश प्रेमियों पर व्यंग्य किया है; जो स्वयं को देश प्रेमी कहते हैं और भीतर ही भीतर देश को भ्रष्टाचार में लिप्त रखते हैं। इस तरह कवयित्री एक सजग देश भक्त की तरह भारत की परिस्थितियों पर भी अपनी नज़र बनाए रखती है। संग्रह की 'संदेश' कविता के ये अंश कितने प्रासंगिक लगते हैं-काश ! जला पाते/भीतर के रावण को/मिटा पाते/उस मानसिकता को/जो उत्साहित करती है/रावणी प्रवृत्ति को। इन पंक्तियों में ही जीवन का संदेश है और बहुत कुछ सोचने के व स्वयं को तौलने के लिए। और लेखक की यही सार्थकता होती है कि वह पाठक को सोचने के लिए मजबूर करें तथा आत्मविश्लेषण की ओर धकेले।

आज के यथार्थ को प्रस्तुत करती कवि की कविता 'कवि की पीड़ा' के कुछ पंक्तियाँ-कहीं पर भी हँसी /गले मिलती ही नहीं/ऐ ! मायूस दिल/बता अब तुझे कहाँ ले जाऊँ। आज हर व्यक्ति का दिल हताश है, यह समय ही हताशा भरा है। हमारी हँसी तिरोहित होती जा रही है। व्यक्ति व्यस्त से व्यस्ततम होता जा रहा है। हँसने के मौक़े गुम होते जा रहें हैं। पहले वक़्तों में संयुक्त परिवारों में कोई भी परिजन हँसी मज़ाक करके निकल जाता था इसके विपरीत आज घर एकान्त व शांत हैं। कविता 'संधि रेखा' में आज के त्वरित समय को पहचाना गया है-सिमटी सहमीं सूरतें/रोतीं दहलीज़ें आज/आख़िर कब तक न लिखूँ / इस अनपहचाने कहर को...। मानो कवयित्री ने समय को ही अनपहचाना कहर कह दिया जो कि आज का कटु सत्य है।

यह काव्य संग्रह एक अप्रवासी भारतीय कवि की भारत में बसी आत्मा का आख्यान है। वह हर दृष्टि को भारत के नज़रिए से देखती हैं, जो कि उनका भारत प्रेम दर्शाता है। कवयित्री ने काव्य-संग्रह में अनेक प्रश्न भारत के समकालीन यथार्थ के संदर्भ में उठाए हैं। आज जो सामाजिक स्थिति पश्चिमी देशों में है कमोवेश वही स्थिति भारत में भी है। 'प्रश्न चिह्न' कविता में भारत का सबसे ज्वलंत विषय चाइल्ड लेबर का उठाया है। अमेरिका में भी जो बच्चों का संघर्ष है वह इस कविता में दिखाई देता है-स्कूल के बाद/बच्चे घास काटते/बेबी सिटिंग करते/बर्फ़ हटाते/कर्मयोग की शिक्षा लेते/पैसे की क़ीमत समझते माने जाते हैं...'स्वदेश में नन्हें-नन्हें हाथ/दो वक़्त की रोटी की जुगाड़ में/कार के शीशे साफ़ करते/छोटा मोटा सामान बेचते/मज़दूरी करते/चाइल्ड लेबर कहे जाते हैं....। यह कवयित्री की संवेदनशीलता की उदात्ता ही है कि कौन सोचेगा बच्चों के लिए ?

काव्य-संग्रह के अन्त में क्षणिकाएँ तथा संग्रह की अन्य कविताएँ जैसे परिवर्तन, एक किशोरी की तलाश, अजब पहेली, अद्भुत कृति हूँ मैं, मत रोना, कटु सत्य, दौड़ आदि कविताएँ अपना प्रभाव छोड़ती हैं। कविताएँ मानवीय संवेदनाओं से लबरेज तथा सामाजिकता के परिवेश को दिखाती अपना प्रभाव छोड़ती हैं। कविताओं में सम्प्रेषणीयता का गुण व बहुत ही सहज, सरल भाषा व चित्रात्मकता के गुण से ओत-प्रोत है। कवयित्री ने रोज़मर्रा के बिंबों के द्वारा काव्य-संग्रह में पाठकीय रोचकता प्रदान की है। कविताएँ यथार्थ के चित्रों को उकेर कर ज़िन्दगी की जद्दोजहद को मुखर करती हैं। उम्मीद है इस काव्य-संग्रह को काव्य जगत में भरपूर स्नेह प्राप्त होगा। ❐

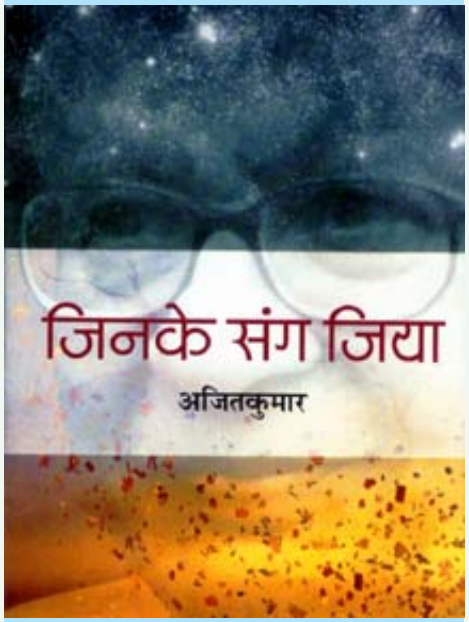

जिनके साथ जिया(संस्मरण)
लेखक : अजित कुमार
प्रकाशकः नई किताब,1/11829, प्रथम मंज़िल,
पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा दिल्ली-110032
द्वितीय परिवर्धित संस्करणः 2015,
मूल्यः150 रुपये
पृष्ठः 176

पुष्पा मेहरा
बी-201, सूरजमल विहार, दिल्ली-92
मोबाइलः91-011-22166598

पठनीय और संग्रहणीय संग्रह : जिनके संग जिया

समीक्षक : पुष्पा मेहरा

आधुनिक हिंदी साहित्य-जगत में कविता से पदार्पण करते हुए कहानी, उपन्यास, अंकन, संपादन, आत्मकथन,यात्रा वृतांत, निबंध, आलोचना, शोध, समीक्षा लेखन में पूर्णरूपेण ख्याति अर्जित करते हुए श्री अजित कुमार अपने संस्मरण लिखने में भी पीछे नहीं रहे। 'जिनके संग जिया' उनका चौथा संस्मरणात्मक संग्रह है। इससे पूर्व 'दूर वन में, निकट मन में' और 'अँधेरे में जुगनू' संस्मरणात्मक संग्रह भी बहुत सराहा गया।

'जिनके संग जिया' संग्रह को पढ़ने से महसूस हुआ कि जीवन में आगे बढ़ते पग तो पीछे नहीं लौटते पर बीते समय की सुनहरी परछाइयों की निजी रोशनी जब उन पगों को घेर लेती है, तो एक चिंतनशील मन उन मूक अदृश्य यादों को अपने शब्द-गढ़ में सजाने और उनको प्रकाश में लाने के लिए बाध्य हो जाता है, तभी लेखक की कुशल लेखनी स्वतः सामर्थ्यवान् हो उठती है, यही अजित कुमार के संवेदनशील मन का विशेष स्वभाव है जो उनके द्वारा लिखित इस संस्मरण में पूर्णतया लक्षित हो रहा है।

यह संस्मरण 24 अनुक्रम में विभक्त है; जिनका समग्र प्रकाशन इस समीक्षा में विस्तार की दृष्टि से संभव न होगा, किंतु कुछ पर प्रकाश डालना मैं आवश्यक समझती हूँ।

खंड प्रथम-अकेले वे नहीं, पूरा कुनबा : नवीन-में नवीन जी की जन्मतिथि की भ्रांतियाँ, उनकी संपत्ति की कुल कीमत; जो आज के बिखरे संबंधों के कारण अपनों को भी ज्ञात नहीं होती और साथ में संपन्न परिवार होने के कारण उनमें उस संपत्ति के प्रति कोई आकर्षण भी नहीं होता। धन-संपदा के साथ ही लेखक की साहित्यिक, सामाजिक सुरुचियों, रचनाओं, प्रकाशन, रॉयल्टी आदि का गुमनाम अँधेरे में पड़ा रह जाना श्री अजित कुमार को स्वीकार नहीं है अतः उन्होंने लिखा है कि 'माना कि व्यक्तियों के निजी मामलों में दखल देना शिष्टता की मर्यादा का उल्लंघन करने जैसा समझा जा सकता है, पर जब ऐसे व्यक्तियों की खोज-ख़बर लेने वाला कोई दिखे ही नहीं तो क्या यह सजग-सचेत समाज का दायित्व नहीं बनता कि वह अपने दिवंगत विशिष्टों-मूर्धन्यों के हितों की रक्षा में तत्पर हो और इसे एक दायित्व समझा जाए ?'

ऐसी निस्पृह भावना से निष्णांत विचारक के रूप में अजित कुमार का व्यक्तित्व अति धनी है। उनका मानना है कि दिवंगत साहित्यकारों की अर्जित संपदा से संपन्न परिवार यदि अपना वास्ता नहीं रखना चाहते, तो वह राशि किसी 'साहित्यकार सहायता कोश' स्थापित करने हेतु दी जा सकती है या नवीन जी की समग्र रचनावली के नए सिरे से प्रकाशन हेतु भी उस संपत्ति का इस्तेमाल हो सकता है। इसमें उनके परहित का उदात्त आदर्श छिपा है।

खंड द्वितीय-सचाइयों का ताल-मेल-पंत-बच्चन

आपसी स्नेहालु संबंध कब दृढ़ विचार रूपी पत्थरों के टकराव से टूट कर बिखर जाएँ कहा नहीं जा सकता, यही सच, इस खंड में आपने पंत व बच्चन जी की अभिन्न मित्रता के टूटने को, कारण सहित लिखा है। हरिवंशराय बच्चन से पंत जी की दाँत-काटी रोटी थी। पंत जी के बच्चन जी के नाम लिखे लगभग 700 पत्र थे; जिन्हें बच्चन जी ने पंत जी की सलाह के बिना प्रकाशित करवा दिए, इन पत्रों का प्रकाशन ही दोनों की दुश्मनी और कोर्ट-कचहरी का कारण बना। यहीं मैं यह बताना चाहती हूँ कि 'स्मृतियाँ और आख्यान खंड' में लेखक ने प्रकृति के प्रति संवेदनशील पंत जी को अपने रूप और साज-सज्जा के प्रति सजग पाया है और यह भी बताया है कि नाज़ुक मिजाज़ पंत जी अपने स्वास्थ्य के प्रति सचेत भी रहते थे। इस खंड को लिखने का एकमात्र उद्देश्य सुमित्रानन्दन पंत के माध्यम से नई पीढ़ी को उनकी सीमित रुचि और सीमित दायरों से बाहर निकालना रहा है। यह तथ्य पुस्तक को पढ़ने से ही ज्ञात हो सकेगा।

'कल भी मैं कहूँगा' खंड में लेखक ने अज्ञेय के व्यक्तित्व व कृतित्व को लेकर साहित्यकारों की अनेक वैचारिक मान्यताओं को अपने विचारों से साम्य स्थापित न करते हुए लिखा है कि 'आधुनिक हिंदी साहित्य में अज्ञेय यदि सिरमौर नहीं तो निराला, पंत. महादेवी, हज़ारीप्रसाद द्विवेदी आदि के साथ निश्चय ही रखे जाएँगे'। अजित जी ने आगे भी लिखा है कि 'अज्ञेय का सधा हुआ स्वर, संयत चाल-ढाल और संतुलित वक्तव्य उन्हें किसी भी कुशल अभिनेता से कहीं अधिक आकर्षक और स्मरणीय बना देते थे'। लेखक ने अज्ञेय जी को 'सेंस ऑफ़ टाइमिंग' का बेजोड़ धनी माना है।

'हमारा प्यारा सदाबहार-राजेन्द्र यादव' खंड में उनके गम्भीर साहित्यिक लेखन की चर्चा करते हुए यह बात

बेझिझक बताई है कि 'यादव जी के चिंतन में आंतरिक व्यवस्था या अनुशासन की कमी का इज़हार उनका अंतर्विरोधी रहा है। यादव जी भले ही काफ़ी सोचते थे किंतु काफ़ी देर तक और काफ़ी दूर तक नहीं सोचते थे'।

'पारिवारिक वृत्त का केन्द्र'-मन्नू भंडारी में-जहाँ अजित जी ने राजेन्द्र जी व मन्नू जी के मधुरतम निजी पारिवारिक संबंधों का खुलासा किया है, वहीं मन्नू भंडारी में जीवन की जटिलताओं, मूल्यों की विषमताओं के समाधान ढूँढ़ने की संतुलन क्षमता में पति-पत्नी दोनों का एकात्म भाव भी दर्शाया है। लेखक के अनुसार मन्नू जी एक सहज-सजग-शिक्षित-उन्मुक्त-संस्कारी महिला हैं, उनके निष्प्रयास लेखन के वे प्रशंसक भी हैं।

'हरफ़न मौला निर्मला जैन'-के संदर्भ में लेखक ने निर्मला जैन को एम.ए., पीएॅच.डी, डी.लिट, प्रोफ़ेसर, विदुषी आदि बनाने में उनके पति स्वर्गीय विद्या सागर जैन से मिले सहयोग की सराहना की है। निर्मला जैन की वैचारिक दृढ़ता, लेखन-भाषण में उनकी विद्वत्ता और सरसता की भी सराहना की है।

इसके अतिरिक्त विविधताओं का संगम-केशव चंद्र वर्मा, सौजन्य से जुड़ी तटस्थता-विष्णुकांत शास्त्री, वृहत्तर जनसमुदाय से जुड़े श्रीलाल शुक्ल, एक ठीहे पर टिके-मार्कंडेय सिंह, एक संपूर्ण व्यक्ति-रामस्वरूप चतुर्वेदी, बीच बहस में उठ गये-कुबेर दत्त, कुछ मिली-जुली यादें-अमिताभ बच्चन, तृष्णा के दिन-राजस्थान की झलकियाँ-आलेखों में सबके समग्र व्यक्तित्व का सरस वर्णन करते हुए लेखक ने इलाहाबाद में मिले, लंदन में बिछुड़े बंधु-ओंकारनाथ श्रीवास्तव खंड में बी.बी.सी., लंदन में कार्यरत रहे स्वर्गीय ओंकारनाथ श्रीवास्तव के साथ अपने घनिष्ठ संबन्ध होने के नाते उनके चारित्रिक गुणों का वर्णन विस्तार से किया है और उनसे अपना पारिवारिक रिश्ता जुड़ने की बात बहुत सरल एवं सहज शैली में की है।

अंत में यह संग्रह एक पठनीय और शोध कर्ताओं की दृष्टि से संग्रहणीय भी है। लेखक गुमनाम रहते हुए भी अपने साथ बिताये पलों से संबद्ध अपने अंतरंग साथी साहित्यकारों की मुस्कान, खिलखिलाहट और उनकी सौरभ-सुरभि को आधुनिक शिक्षित तथा साहित्यिक अभिरुचियों से जुड़े युवा वर्ग तक अपने संस्मरणों के माध्यम से पहुँचाने को अपना लक्ष्य समझता है।

❐

पुस्तक समीक्षा

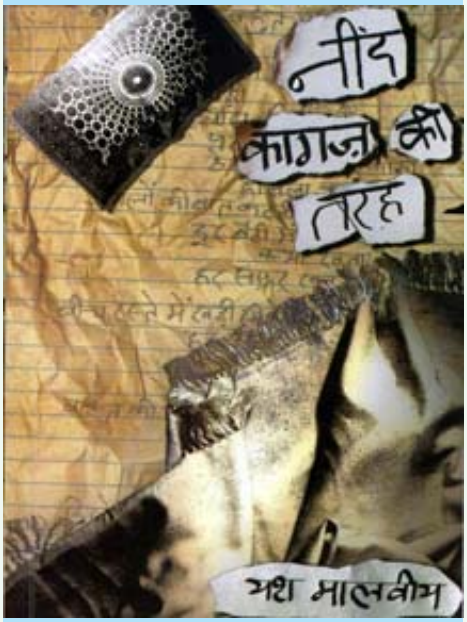

लेखक-यश मालवीय
मूल्य-रु. 120 /
प्रकाशन-अंजुमन प्रकाशन, इलाहाबाद
942, आर्य कन्या चौराहा, मुट्ठीगंज, इलाहाबाद-211003
उत्तर प्रदेश, भारत

सौरभ पाण्डेय
एम-II/ए-17,
ए.डी.ए. कॉलोनी, नैनी, इलाहाबाद-211008
संपर्क-09919889911
ई-मेल : saurabh312@gmail.com

नींद कागज़ की तरह

समीक्षक : सौरभ पाण्डेय

मानव-इतिहास साक्षी है कि जब भी सुख-दुःख, हर्ष-विषाद या संघर्ष की अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने की आवश्यकता हुई है, लयात्मक कविता ही सहज माध्यम के तौर पर अपनायी गई है, किन्तु यह बात भी उतना ही सही है कि नवगीत की अवधारणा मात्र रागात्मकता का कोई नवीन पहलू नहीं है। समकालीन हिन्दी कविता के समीक्षक डॉ. शिवकुमार मिश्र अपने एक विचारोत्तेजक लेख में कहते भी है- 'नवगीत भावुक मन की मध्य-युगीन बोध की चीज़ नहीं है, बल्कि वह समय की सारी आक्रामकता तथा समय की सारी विसंगतियों, विद्रूपताओं से उसी तरह से मुठभेड़ कर रहा है जिस तरह आधुनिक कही और मानी जानी गद्यकविता कर रही है। नवगीतों के रचनाशिल्प में भाषा, अलंकार, छन्द आदि समूचे रचना विधान में बदलाव आया है। आज यह ज़रूरी था कि नवगीत और उसकी परम्परा अपनी पूरी वस्तुनिष्ठता और प्रामाणिकता के साथ सामने आती।' वरिष्ठ नवगीतकार नचिकेता के शब्दों में कहें तो, 'ऊपरी सतह पर देखने में गीत भले ही रचनाकार के आत्म की अभिव्यक्ति महसूस हो। किन्तु, आंतरिक संरचना में उसके आत्म की खोज ही है। क्योंकि गीतकार रचना के माध्यम से केवल अपने को अभिव्यक्त ही नहीं करता, अपने अनुभवों को समाज के अनुभवों से संश्लेषित कर अपने आत्म को ही नये साँचे में ढाल कर एक नई-सृष्टि की रचना करता है।' यानी, इसी बात को दूसरे ढंग से कहें तो गीतों की रचना लगातार बदलते हुए सामाजिक-पारिवारिक सम्बन्धों से उपजे तनाव से होती है।

इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो यश मालवीय का सद्यः प्रकाशित नवगीत-संग्रह 'नींद कागज़ की तरह' अपनी अंतर्वस्तु और अपने सहज शिल्प के कारण पाठकों का ध्यान अवश्य खींचती हैं। नवगीत-संग्रह में सम्मिलित कुल 65 रचनाएँ पठनीय तो हैं ही, एक बड़े समुदाय तक पहुँच पाने तथा अनुमोदन ले पाने में सक्षम भी हैं। यश मालवीय को जानने वाले जानते हैं कि उनकी रचनाएँ किन परिस्थितियों का प्रतिफल रही हैं। या, उनका रचनाकार किन परिस्थितियों का साक्षी रहा है। इस संग्रह से गुज़रते हुए सहज ही जुझारू रचनाकार की काल जीवी रचनाओं से सामना होता है।

प्रकृति किसी संवेदनशील मानस को कुछ और दे या न दे उसे भाव-संप्रेषण हेतु सार्थक संज्ञाएँ अवश्य देती है, और साथ ही देती है उन संज्ञाओं के मर्म को बूझ सकने की तार्किक किन्तु अत्यंत भावमय समझ। इन संज्ञाओं का बिम्बात्मक प्रयोग कथ्य की तथ्यात्मकता को और गहन करती है। यश मालवीय के लिए इस बात को समझना सहज है। कारण, यही उनकी रचना-परम्परा का मूल है। गीतधर्मिता आरोपित कर नहीं सीखी जा सकती, न ही सिखाई जा सकती। बल्कि यह धमनियों में बहते हुए रक्त के साथ घुली होती है। अलबत्ता, आगे चल कर कोई गीतकार गीति-व्यवस्था के साँचे को व्यवस्थित करता हुआ दीखता है। अपने को उनके अनुसार लगातार ढालता जाता है। इन बिन्दुओं की कसौटी पर ही 'नींद कागज़ की तरह' की रचनाओं को देखा जाना अधिक उचित होगा। बल्कि कहा जाय तो इसी आधारभूमि पर नवगीतों का देखा जाना उचित भी है।

सटीक शब्दावलियों और ठेठ मुहावरों की समृद्धि तथा आधुनिकबोध यश मालवीय के नवगीतकार को आवश्यक पैनापन देते हैं-एक आँख का हँसना देखा एक आँख का रोना / शादी वाला कार्ड / पत्र का कटा हुआ सा कोना !

ऐसे ठेठ ज़मीनी मुहावरे संग्रह में जगह-जगह पर महीनी से बुने गये हैं। यही नवगीतों की भाषा के बल भी हैं।

आजके गीति-संप्रेषणों में असहाय जीवन का भावुक लिजलिजापन या आँसुओं के अतिशय आलोड़न का यदि औचित्य नहीं दिखता तो उसका बड़ा कारण आजका अति व्यस्त दौर तथा आत्मविश्वासी समाज की स्वयं को लेकर आश्वस्ति भी है। इस तरफ कवि के इंगित देखें-आँखों के रेशे-रेशे रतनारे होते / मुट्ठी में ही सारे चाँद-सितारे होते / खिलते प्यार-प्रणाम / बहुत अच्छा लगता है इस अदम्य आश्वस्ति को 'हमें पता है' शीर्षक से सम्मिलित हुए नवगीत में देखें-हमें पता है / कुआँ कहाँ, कब खाई है ? / लिखते जाना भी तो / एक लड़ाई है / सबकुछ मिलता / सम्वेदन के घर जाकर / शब्द बता देते हैं / धीरे से आकर / ढाल कहाँ है, कैसी कहाँ चढ़ाई है ?

भूमण्डलीकरण के युग में सबसे ज्वलन्त मुद्दा पर्यावरण-प्रदूषण का है। इसे मानवीय संत्रास का प्रिज्म बनाना नवगीतकार की सम्वेदनशील दृष्टि को उभार कर सामने लाता है। 'पेड़ का क्या हो भला अब ?' की पंक्तियों में देखें-दाँत काटे की जहाँ रोटी रही हो / उन्हीं डालों में परस्पर असहमति है / पेड़ का क्या हो भला हो अब ? / पत्तियों में है अजब-सी सुगबुगाहट है / जड़ों तक पहुँचा हुआ विद्रोह है / सिरफिरी-सी हवाओं के हवाले अब / हरेपन का सघनतम व्यामोह है / फटे कागज़ तरीखे हैं पात पीले / पतझरों के हाथ लम्बे / फँस रहा है फिर गला अब !

कहना न होगा 'नींद कागज़ की तरह' नवगीत-संग्रह नवगीत के प्रतिमानों के सापेक्ष अडिग दिखता है। लेकिन हक़ीक़त यह है कि यह संग्रह अनुभूति-समृद्धि के बावज़ूद कई-कई अवसानों की पोटली-सा बँधा हुआ हमारे सामने आता है। मनुष्य की जिजीविषा की आवृतियाँ मात्र दहलाती हुई अभिव्यक्तियों से उजागर नहीं होतीं। मनुष्य का दुर्निवार संघर्ष ही उसकी जिजीविषा की आवृतियों की प्रामाणिकता को नियत करता है। जो बात इस संग्रह से गुजरते हुए बार-बार उभर कर आती है, वह है कवि का अपने आसपास की विसंगतियों और विकृत मनोदशा के समक्ष मात्र दर्शक बन कर रह जाना। इस भाव को इन पंक्तियों के माध्यम से महसूस करें-रास्ते हैं पुरख़तर / ख़तरे से खाली कुछ नहीं / हर तरफ़ हैं हादसे, होली-दिवाली कुछ नहीं / आग की लपटों घिरा है, / नर्म मिट्टी का घड़ा / वासना के एक अंधे मोड़ पर है सच खड़ा / इस तरह से औरतों की बात करना छोड़िए / है नहीं कुछ द्रौपदी औ/ आम्रपाली कुछ नहीं / आरती की ही तरह / इज़्ज़त उतारी जा रही / हाँफती हैं मोटरें / उनकी सवारी जा रही / बीच संसद शान से बैठे हुए हैं रहनुमा / जाम सड़कों पर लगा, गुण्डा-मवाली कुछ नहीं !

नवगीतों का सबसे सशक्त पहलू मनुष्य के संघर्ष के साथ बनी उसकी संलग्नता है। यह तथ्य इस संग्रह से एकदम नदारद तो नहीं है, किन्तु, प्रखरता के साथ उभर कर सामने आता हुआ नहीं दिख पाता है। शब्द-चित्रों के माध्यम से हुआ कोई काल-जीवी वर्णन कालजयी वर्णन तभी हो सकता है जब नवगीतकार संप्रेषण के प्रस्तुतीकरण में समाधान के बिन्दु भी इंगित करता चले। इस तौर पर कहा जाय तो तमाम समस्याओं का ज़िक्र अवश्य हुआ है, लेकिन उनके निदान हेतु कोई सार्थक प्रयास नहीं दिखता, या ऐसा कुछ है भी तो नगण्य है। इस विषाक्त प्रतीत होते दौर में क्या कोई आशा की किरण नहीं बची है ? भावनाओं के उबाल के अलावा यदि समाधान के विन्दु नवगीतकार नहीं देगा तो ऐसी किसी हताश अभिव्यक्ति का प्रयोजन क्या ? इन मायनों में नवगीत और नवगीतकार की दृष्टि क्या है यह जानना अधिक आवश्यक है। नवगीत यदि गद्य कविताओं की लयात्मक प्रस्तुति मात्र रह जायें, जहाँ विद्रूपता और आपसी व्यवहारों को लेकर जुगुप्साकारी वर्णन हैं, तो फिर साहित्य का हेतु आमजन रह भी पायेगा क्या ? प्रत्येक नवगीत में संज्ञा से चेतना का और व्यक्ति का समाज से आंतरिक सम्बन्ध अभिव्यक्त होना चाहिए। यह सम्बन्ध नवगीतों में जितना अधिक गहन होगा, नवगीत उतना ही अर्थपूर्ण होगा। समस्याओं के संकेत ही नहीं समाधान या सकारात्मक दृष्टिकोण भी आज के समय की माँग है। यानी, अर्थवत्ता का व्यापक स्वरूप रचनाओं में हो और यही नवगीत-प्रस्तुति की गुणवत्ता हो। नवगीत की विधा मध्यवर्गीय क्लिष्ट मनोदशाओं को शाब्दिक करती है। इसने आजकी आस्था-अनास्था ऊब, घुटन, कुण्ठा, संत्रास, कशमकश, आत्मीय सम्बन्धों को धकियाता अबूझ व्यामोह, सम्बन्धों में पारस्परिक अजनबीपन, जैसे आधुनिकतावादी जीवन मूल्यों को आधार-भूमि बनाया है। यह सारा कुछ यश मालवीय के पास भी है। लेकिन आजके क्लिष्ट दौर में इस नवगीतकार से पाठक-समाज अपने कन्धों पर सकारात्मक थपकी भी चाहता है।

यश मालवीय के नवगीतों की काव्यभाषा सहज किन्तु बेहद कसी हुई होती है। काव्यात्मकता में कलावाद का वैसा आतंक नहीं होता। फिर भी, कहन में लालित्य से कोई बिगाड़ भी नहीं दिखता। नवगीतों की विशेषताओं में भी आकारगत संक्षिप्तता, सटीक शब्द-चयन, मुहावरे-कहावत, बिम्ब, प्रतीक और संकेतों के चुनाव में प्रयोगधर्मी सतर्कता अवश्य दीखती है। ये सारे तत्त्व यश मालवीय के नवगीत के केन्द्र में सदा से रहे हैं और आज भी पूरी आश्वस्ति के साथ विद्यमान हैं। प्रस्तुति का संवाहक या हेतु स्वयं रचनाकार नहीं होता, उसका अधिकारी होता है समाज। और, नियंता होती है व्यापक जनता। यश मालवीय को इस तथ्य का भान है, इसकी आश्वस्ति इस संग्रह के कई नवगीत देते हैं-फूट-फूट कर रोने वालो / हँसो कि जैसे सुबह हँस रही / किरनों का इक जाल कस रही / माना दुख है बहुत मगर कब / फूलों ने खिलना छोड़ा / प्यार कर रहे जो आपस में / कब हिलना-मिलना छोड़ा / फूट-फूट कर रोने वालो / हँसो कि जैसे धूप हँस रही / धारा में कहीं धँस रही ..

ऐसी प्रतीति को व्यापक बनाना सजग रचनाकार का महत्त्वपूर्ण दायित्व है।

❐

चौबीसवें व्यास सम्मान समारोह में डॉ. कमल किशोर गोयनका द्वारा दिए गए वक्तव्य के कुछ अंश

पूर्वजों का कथन है कि अकेला चलने तथा एक की साधना करने से ही व्यक्ति सिद्धि तक पहुँच सकता है। प्रेमचंद जैसे कालजयी कथाकार को अपने जीवन की आधी शताब्दी अर्पित करने में आज अपने जीवन की सार्थकता अनुभव करता हूँ। हिंदी साहित्य में अनेक ऐसे साहित्यकार हैं; जिन्हें एक जीवन अर्पित करके उनकी सम्पूर्ण प्रमाणिक मूर्ति पाठकों तक पहुँचाकर इतिहास का स्थायी अंग बनाया जा सकता है। प्रेमचंद के मानस में केवल अपना वर्तमान ही नहीं था, उसमें भारतीय ज्ञान-विज्ञान, परम्परा और जीवन-मूल्यों के साथ पश्चिम की नई संस्कृति तथा उसके भारतीय जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का गहरा दवाब था। गांधी के स्वाधीनता संग्राम के तो वे साहित्यिक नायक ही थे। प्रेमचंद ने लिखा था कि उनके साहित्य के दो उद्देश्य हैं- स्व राज्य की प्राप्ति और भारतीय आत्मा की रक्षा। उनके सम्मुख भारत का एक स्वरूप था, एक स्वप्न था जिसे वे अपने साहित्य के द्वारा प्रतिबिम्बित कर रहे थे। ऐसे लेखकों को सम्पूर्ण रूप में तथा प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत करने में, अज्ञात सामग्री को खोजने तथा ज्ञात सामग्री की भारतीय आत्मा की दृष्टि से व्याख्या-विवेचन करने में तथा उनके सरोकारों और चिंताओं को वर्तमान समय से जोड़ने में मुझे अपने जीवन की सार्थकता दिखाई देती है।

मैंने प्रेमचंद पर शोध-कर्म डॉ. नगेन्द्र की प्रेरणा और आदेश पर आरम्भ किया; जबकि मैं जयशंकर प्रसाद के साहित्य की खोज-ख़बर लेना चाहता था, लेकिन आज मैं कह सकता हूँ कि प्रेमचंद पर शोध करना और नए तथ्यों-दस्तावेज़ों से उनकी व्याख्या करना मेरी नियति थी। अमृतराय ने 1962 में प्रेमचंद पर नौ पुस्तकें प्रकाशित की थीं, जिससे प्रेमचंद की ज्ञात-अज्ञात मूर्ति का विकास हुआ। मैंने अपना शोध-कार्य इसके बाद शुरू किया और सैकड़ों पृष्ठों की नई सामग्री और दस्तावेज़ों से एक नए और दबा दिए गए प्रेमचंद मेरे सामने आ खड़े हुए और उसका यह परिणाम हुआ कि प्रेमचंद पर मेरी तीस पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आज इन नए तथ्यों, प्रसंगों और दस्तावेज़ों से हिंदी संसार अवगत है, परन्तु मेरी दृष्टि शोधकर्मी के रूप में सदैव तथ्य और सत्य पर रही है और इतिहासकार के समान पूरी जाँच के बाद ही उन पर लिखा है। मैंने आत्मा की आवाज़ नहीं तथ्यों की आवाज़ सुनी है और उनका राजनीतिक उपयोग करने से बचता रहा हूँ, परन्तु इस शोध-यात्रा में मुझे दक्षिण-वाम के चक्कर में अब तक कई प्रकार के अपमान तथा आलोचना का शिकार होना पड़ा है।

हमारे प्रगतिशील मित्रों ने प्रेमचंद की जो सीमित, राजनीतिक एवं असत्य मूर्ति बनाई थी तथा जो झूठे मिथक बनाये थे, वे सब धूल-धूसरित होते चले गए। इन मित्रों ने प्रेमचंद पर एकाधिकार घोषित किया और प्रेमचंद के साहित्य-दर्शन को बदल दिया। प्रेमचंद राजनीति के आगे साहित्य की मशाल जलाना चाहते थे, इन्होंने साहित्य के आगे राजनीति को बैठा दिया। प्रेमचंद को आठ-दस रचनाओं तक सीमित कर दिया गया और प्रेमचंद को प्रेमचंद के विरुद्ध खड़ा कर दिया गया। प्रेमचंद के 90 प्रतिशत साहित्य को आदर्शवादी कहकर उसे ख़ारिज किया गया और उसे पाठ्यक्रमों से बाहर कर दिया गया।

मैंने जब-जब इस पर संवाद की कोशिश की, तब-तब अपमान और आक्रमण के अतिरिक्त कुछ नहीं मिला। प्रेमचंद का साहित्य विराट् भारतीय जीवन का साहित्य है, उसमें लगभग तीन हज़ार पात्र हैं और अधिकांश धर्मों, वर्गों, जातियों के पात्र हैं, लेकिन प्रगतिशील आग्रहों पर इन्हें परिदृश्य से हटा दिया जाता है। प्रेमचंद भारतीय आत्मा के रक्षक हैं, भारतीय विवेक और अस्मिता के चित्रकार हैं, इसमें बहुलता एवं विविधता है, क्योंकि इसी रूप में राष्ट्रीय जीवन का अन्वेषण हो सकता है, परन्तु भारतीय आत्म् अविभाज्य् है, विविधता में भी एकता है, अतः इस संश्लिष्ट भारतीयता के द्वारा ही उनके साहित्य में व्याप्त भारतीय आत्मा से साक्षात्कार किया जा सकता है।

प्रेमचंद हों या कोई अन्य साहित्यकार, उसे समग्रता में ही पहचाना और समझा जा सकता है। हिंदी शोध एवं आलोचना में ऐसी दुर्घटनाएँ बराबर होती रहीं हैं; जब एक साहित्यकार की रचना-दृष्टि सम्पूर्णता में न देखकर टुकड़ों में देखी गई हैं और उसे ही अंतिम सत्य मानकर फतवे दिये जा रहें हैं। प्रेमचंद के साथ भी ऐसा ही हुआ और एक प्रसिद्ध आलोचक ने मेरे सम्पूर्णता के दर्शन का मज़ाक उड़ाया। प्रेमचंद को जीवन के यथार्थ और अमंगल पक्षों तक सीमित नहीं किया जा सकता, क्योंकि वे यथार्थ और कल्पना, अमंगल और मंगल एवं वास्तविकता तथा यूटोपिया को मिलाकर ही जीवन को रूप देते हैं। इसलिए प्रेमचंद की साहित्य-यात्रा अन्धकार से प्रकाश तथा अमंगल से मंगल की ही यात्रा है और यही वह मंत्र है; जो पाठक को प्रेमचंद-साहित्य से मिलता है कि वह एक अच्छा मनुष्य बने, एक अच्छे समाज की रचना करे और अपने देश एवं संस्कृति की आत्मा की रक्षा करे। यह तभी संभव है जब हम प्रेमचंद को खंड-खंड में बाँटने का पाखण्ड न करके उनके साहित्य को सम्पूर्णता में पढ़ने, सोचने तथा लिखने की अनिवार्यता को समझेंगे। जिन आलोचकों एवं पाठकों को प्रेमचंद की समग्रता प्रिय नहीं है, वे प्रेमचंद के दावेदार नहीं हो सकते और न उन्हें प्रेमचंद की वसीयत को जीवन की एक धारा तक सीमित करने का अधिकार दिया जा सकता है। प्रेमचंद का पाठक उनकी किसी एक-दो कहानी या उपन्यास से समृद्ध नहीं होता, उनका संपूर्ण साहित्य उसे विकसित एवं परिष्कृत करता है, उसे समृद्ध करता है और वह उसका अंग बन जाता है और वह उसकी अपार सामूहिकता तथा राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक धारा को आत्मसात करने लगता है। कला भिन्नत्व को एकाकार करती है। प्रेमचंद की साहित्य-कला ने इसी धर्म का निर्वाह किया है।

इसके विपरीत ज्ञान का विकास भिन्न-भिन्न सोचने से होता है। मनुष्य ने जितने भी अन्वेषण और आविष्कार किये हैं, वे रूढ़िगत एवं परम्परागत विचारों के विरुद्ध सोचने से ही हुए हैं। साहित्य में भिन्न-भिन्न प्रकार से सोचने की कुछ परम्परा तो मिलती है, परन्तु प्रेमचंद के जीवन, साहित्य एवं विचार के संबंध में भिन्न प्रकार से सोचने एवं लिखने पर जैसा आलोचनात्मक विस्फोट हुआ वैसा हिंदी में कभी नहीं देखा गया। यह आलोचनात्मक विस्फोट पूर्णतः तर्कहीन था और मूल दस्तावेज़ों को ही नकारा गया था। यह इन आलोचकों का वैज्ञानिक आलोचनात्मक विवेक था, जैसा हमें सरस्वती नदी और द्वारका के समुद्र में महाभारतकालीन अवशेषों के प्राप्त होने पर दिखाई देता है। इतिहास हो साहित्य, प्रामाणिक खोजों और उनके निष्कर्षों को अस्वीकार करना और मिथ्या

डॉ. कमल किशोर गोयनका को व्यास सम्मान

22 सितम्बर को इंडिया इंटरनेशनल सेंटर के मल्टी परपस सभागार में, संध्या छह बजे के.के बिरला फ़ाउण्डेशन का चौबीसवाँ व्यास सम्मान डॉ.कमल किशोर गोयनका को प्राप्त हुआ। इस समारोह की अध्यक्षता विश्व नाथ प्रसाद तिवारी ने की, जो साहित्य अकादमी दिल्ली के अध्यक्ष हैं। चयन समिति की प्रसिद्ध लेखिका मृदुला गर्ग ने पुरस्कृत कृति और पुरस्कृत लेखक का परिचय दिया।

आरोप लगाना ज्ञान के विकास में अवरोधक बनते हैं।

इससे आप समझ सकते हैं कि मेरी प्रेमचंद-यात्रा आसान नहीं थी, परंतु मैं 'चरैवति चरैवति' के अनुसार अपने शोध-कर्म में लगा रहा और हर बार प्रेमचंद को समझने के लिए नई समग्री देता रहा। इस दृष्टि से नवीनतम प्रकाशन है 'गो-दान' के प्रथम संस्करण का प्रकाशन और उसमें मूल पाण्डूलिपि से लगभग 40 पृष्ठों का संयोजन। ऐसा प्रकाशन पहली बार किसी भाषा में हुआ है।

इस व्यास पुरस्कार से पहली बार शोधात्मक आलोचना को राष्ट्रीय स्वीकृति मिली है। इसके लिए मैं सभी संबंधित विद्वानों का आभारी हूँ। हिंदी में अभी तक लगभग तीस हज़ार शोध ग्रंथ लिखे गए हैं, लेकिन इससे पूर्व किसी की इतनी चर्चा और इतनी आलोचना एवं इतना समर्थन किसी को नही मिला। शोध के बिना आलोचना का विकास नहीं हो सकता, यह साहित्य-संसार को समझने की आवश्यकता है। प्रेमचंद पर मेरा शोध-कार्य साहित्य की नई पीढ़ी तक पहुँच रहा है, किंतु प्रतिबद्ध अध्यापक अभी तक उसे अछूत मान रहे है।

मैं इसे जानता हूँ कि प्रेमचंद पर मेरा कार्य अंतिम नहीं है। सदैव ही ज्ञान और शोध में कुछ न कुछ छूट ही जाता है और फिर यह छूटा हुआ सूत्र ही भविष्य में ज्ञान का विकास करता है। प्रेमचंद को आने वाली पीढ़ियाँ अपनी दृष्टि से देखेगी, परंतु इस प्रक्रिया में उन्हें मेरे शोध-एवं अलोचनात्मक कार्य से गुज़रना ही होगा। ज्ञान की विकास यात्रा इसी प्रकार चलती है और प्रेमचंद के अध्ययन और अनुसन्धान में भी यही प्रक्रिया रहेगी। मुझे संतोष है कि प्रेमचंद के विराट् और भव्य साहित्य के बीच आधी शताब्दी व्यतीत करने तथा उन्हें समझने का अवसर मिला और उपलब्ध नए ज्ञान को साहित्य-संसार तक पहुँचा सका।

❐

पाँचवें झिलमिल कवि सम्मेलन ने सियैटल में जमाया झिलमिलाती कविताओं का रंग

अमेरिका के पर्यटन नगर सियैटल क्षेत्र में स्थित 'बैलव्यू यूथ थियेटर' में हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में प्रतिध्वनि द्वारा पाँचवें झिलमिल कवि सम्मेलन का आयोजन भव्य स्तर पर किया गया; जिसमें लगभग सोलह स्थानीय कवियों तथा आमंत्रित कवियों ने काव्य पाठ किया। कवि सम्मेलन का प्रारंभ करते हुए अंकुर गुप्ता ने प्रतिध्वनि संस्था की ओर से उपस्थित श्रोताओं का स्वागत किया तथा मंच की बागडोर संचालन हेतु कवि अभिनव शुक्ल के हाथों में सौंप दी। अभिनव ने तीनों आमन्त्रित कवियों डॉ. गीतांजलि गेरा (पोर्टलैण्ड), जनार्दन पाण्डेय 'प्रचण्ड' (वैंकूवर) तथा डॉ. कविता वाचक्नवी (ह्यूस्टन) को अपनी काव्य पंक्तियाँ समर्पित करते हुए मंच पर आमंत्रित किया। कार्यक्रम दो सत्रों में आयोजित हुआ। लगभग डेढ़ घंटे चले प्रथम सत्र में पाँच स्थानीय कवियों तथा आमंत्रित कवियों के विशेष काव्य पाठ के पश्चात कार्यक्रम के सूत्रधार कवि अभिनव शुक्ल की तीसरी काव्य कृति 'हम भी वापस जाएँगे' का अमेरिका की धरती पर लोकार्पण माननीय अतिथियों तथा नगर के कुछ गण्यमान्य अतिथियों द्वारा संपन्न हुआ। शिवना प्रकाशन (सीहोर, मध्य प्रदेश) द्वारा प्रकाशित इस पुस्तक में अभिनव के गीतों, ग़ज़लों सहित कुछ अन्य गंभीर रचनाओं को भी स्थान मिला है।

कार्यक्रम के दूसरे सत्र में शेष स्थानीय कवियों के पश्चात् पुनः तीनों आमंत्रित कवियों का काव्य पाठ संपन्न हुआ। कवि सम्मेलन में अंकुर गुप्ता, दीप्ति व्यास, अनु गर्ग, आलोक प्रकाश 'ख़ुशफ़हम', धीरज मेहता, युविका शर्मा, राहुल उपाध्याय, दिव्या रूसिया, मनीष कुमार गुप्त, संतोष खरे, फराह सय्यद, श्वेता श्रीवास्तव, अभिनव शुक्ल, गीतांजली गेरा, जनार्दन पाण्डेय 'प्रचण्ड' एवं डॉ. कविता वाचक्नवी ने काव्य पाठ किया। अगस्त्य कोहली, अंकुर गुप्त, संतोष खरे, नंदा तिवारी तथा दिनेश कोर्डे सहित प्रतिध्वनि संस्था से जुड़े अनेक स्वयंसेवकों ने कार्यक्रम के आयोजन में सहयोग किया।

'लघु पत्रिकाओं का यथार्थ' पर विचार विमर्श

नई दिल्ली में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण पर उपेक्षित विषय, 'लघु पत्रिकाओं का यथार्थ' पर हिंदुस्तानी प्रचार सभा एवं व्यंग्य यात्रा के संयुक्त प्रयास तथा हिंदी भवन के महत्त्वपूर्ण सहयोग से कार्यक्रम आयोजित किया गया। मुख्य अतिथि डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने कहा-मेरी तो कर्मभूमि यही है। लघु पत्रिकाओं की भूमि संघर्ष और मिशन की होती है। मेरा मानना है कि लेखक को जितना संभव हो स्वयं को चरितार्थ करना चाहिए। लघु पत्रिका अव्यवसायिक ही होती है और जो अव्यावसायिक है उससे कमाई का कैसे सोच सकते हैं। यह एक कठिन और जोखिम भरा काम है, जिसे मैंने विनम्र भाव से किया है।

अध्यक्षीय भाषण में डॉ.महीप सिंह ने कहा-लघु पत्रिका कभी भी बंद हो सकती है और इसके बंद होने का अफसोस नहीं करना चाहिए। पत्रिका में रचनाओं का चुनाव करते समय हमारे लिए रचनाकार नहीं रचना महत्त्वपूर्ण रही। ऐसी रचना जो मानवीय सरोकारों और सबंधों से जुड़ी हो।

संचालन करते हुए अपने आंरभिक वक्तव्य में प्रेम जनमेजय ने कहा-लघु पत्रिकाएँ एक ज़िद् का परिणाम होती हैं। यह एकतरफा प्रेम जैसा भी होता है। ऐसी अधिकांश पत्रिकाओं के संपादक/ प्रकाशक लेखक ही होते हैं और पत्रिका चलावन प्रक्रिया में उनका लेखन बैक सीट पर चला जाता है। पत्रिका निकालने एवं साधन जुटाने की प्रक्रिया में वह अपनी पत्नी, बच्चों और मित्रों के श्रम का शोषण करता है। काम करवाता है पर पैसे नहीं देता। लेखकों से लिखवाता है और पारिश्रमिक देने के स्थान पर उनसे सदस्यता वसूल करता है।

आंरभ में हिंदुस्तानी प्रचार सभा श्री संजीव निगम श्री फिरोज पैच का स्वागत भाषण पढ़ा जिसमें उन्होंने सबका स्वागत करते हुए अपेक्षा की, कि इस विषय पर एक सार्थक बहस होगी। संजीव निगम ने कहा-मुम्बई से बाहर यह हमारा पहला कार्यक्रम है। मेरे विचार से लघु पत्रिकाओं की मार्केटिंग आवश्यक है। हमें चार पी-प्रोडेक्ट, प्राईस, प्रोडेक्शन एवं प्रेसेंटेशन पर ध्यान देना होगा। क्यों न हम चार-पाँच पत्रिकाओं का समूह एक दूसरे का प्रचार-प्रसार करें, विज्ञापन साँझा करें।

डॉ. रमेश उपाध्याय ने कहा-लघु एक सापेक्ष शब्द है। रहीम का दोहा है कि जहाँ काम आवे सूई का करे तलवार। सूई का काम सूई करेगी और तलवार का काम तलवार। लघु पत्रिका एक अव्यावसायिक कर्म है और इस पर व्यवसायिक चीज़ें लागू नहीं होती। इसके लिए अलग तरह के मापदंड लागू होते हैं। इसके लिए एक आंदोलन की आवश्यकता है। संगठन से आंदोलन नहीं चलते, आंदोलन से संगठन चलते हैं।

बलराम ने कहा-आजकल रचनाएँ छपती रहती हैं पर उनपर कोई प्रतिक्रिया नहीं होती हैं। पाठकों की सहभागिता पत्रिकाओं में कम रह गई है। उन्होंने 'पहल' के प्रकाशन का स्वागत किया और कहा कि इसके बंद होने से एक सन्नाटा छा गया था।

सुशील सिद्धार्थ ने कहा-मेरे पास अनेक पत्रिकाओं के अनुभव हैं। लघु पत्रिका का सबसे बड़ा यथार्थ यह है कि आप जितने दोस्त बनाते हो; उससे कहीं अधिक दुश्मन बनाते हो। इसका यथार्थ यह है कि आप घर फूँक तमाशा देखते हो। और इसका यथार्थ यह भी है कि आपकी आधी लेखन शक्ति का क्षय होता है। यह एक बहुत ही कठिन कार्य है जिसके लिए बहुत बड़ा जिगरा चाहिए।

राधेश्याम तिवारी ने कहा-लघु पत्रिकाओं का सबसे बड़ा संकट अर्थिक है। सरकारें अपने प्रचार के लिए असीम धनराशि ख़र्च करती हैं, परंतु संकट से जूझ रही पत्रिकाओं को कोई मदद नहीं करती हैं।

रामकुमार कृषक ने अपने लघु पत्रिका निकालने संबंधी अनुभवों की विस्तार से चर्चा की। उनका कहना था कि बिना संगठित हुए हम लड़ाई नहीं लड़ सकते। उन्होंने सूचित किया कि वर्तमान दिल्ली सरकार की हिंदी अकादमी ने निर्णय लिया है कि वह किसी भी लघु पत्रिका को कोई विज्ञापन नहीं देगी।

डॉ.सुशीला गुप्ता ने सूचित किया कि हिंदुस्तानी प्रचार सभा अपने सीमित साधनों में बहुत सार्थक कार्य कर रही है। हिंदुस्तानी प्रचार सभा की पत्रिका हिंदी, उर्दू एवं ब्रेल में प्रकाशित होती है। उन्होंने दुख प्रकट किया कि कुछ पत्रिकाएँ आपका समाचार प्रकाशित करने के लिए आपसे धन माँगती हैं।

कार्यक्रम के आंरभ में प्रसिद्ध व्यंग्यकार यज्ञ शर्मा के अकस्मात् निधन पर उनकी स्मृति को प्रणाम किया गया, उन्हें श्रद्धांजलि दी गई।

प्रेमचंद और आज का समय

मुंशी प्रेमचंद जयंती के मौक़े पर प्रगतिशील लेखक संघ की घाटशिला इकाई ने एक गोष्ठी आयोजित की। विषय था, 'प्रेमचंद और आज का समय'।

कार्यक्रम की शुरुआत करते हुए शेखर मल्लिक ने कहा कि घाटशिला में प्रलेसं की नींव डल चुकी है और और इसे एक पुख़्ता इमारत बनाने की कोशिशें हम करते रहेंगे। सबसे पहले घाटशिला स्थित महिला महाविद्यालय की छात्रा लतिका पात्र ने प्रेमचंद की कहानी 'ठाकुर का कुआँ' के संक्षिप्त रूप का पाठ किया। इस कहानी पर बोलते हुए युवा कथाकार और 'परिकथा' के सहायक संपादक अजय मेहताब ने कहा कि इस कहानी पर उनकी एक समझ है, और आवश्यक नहीं कि सभी इस पर सहमत हों।

अपने अध्यक्षीय उद्बोधन में कथाकार जयनंदन ने कहा कि प्रेमचंद को गए चौहत्तर-पचहत्तर वर्ष हुए, तब भी वे शिद्दत से याद किए जा रहे हैं। आज देशभर में हज़ारों जगह प्रेमचंद जयंती मनाई जा रही है। वे सही मायनों में भारतीय ही नहीं विश्व साहित्य के स्टार हैं। वे स्वयं में एक पाठशाला हैं। प्रेमचंद को पढ़ना पूरे भारतीय समाज को पढ़ने के बराबर है।

कार्यक्रम में कई छात्र और छात्राएँ मौजूद रहे। संचालन कथाकार शेखर मल्लिक ने किया।

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान-2015 समारोह

उषा प्रियंवदा (अमेरिका) समग्र साहित्यिक अवदान हेतु, चित्रा मुद्गल (भारत) कहानी संग्रह-'पेंटिंग अकेली है' हेतु, डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी (भारत)उपन्यास-'हम न मरब' हेतु सम्मानित

अमेरिका के मोर्रिस्विल्ल (नार्थ कैरोलाइना राज्य) शहर में हुआ आयोजन

(रिपोर्ट : नीलाक्षी फुकन, छायाकार : संदीप कपूर)

'ढींगरा फ़ाउण्डेशन-अमेरिका' ने, मोर्रिस्विल्ल शहर के हिन्दू भवन कल्चरल हॉल में आयोजित एक भव्य समारोह में वर्ष 2014 हेतु 'ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान' प्रदान किए। समारोह में समग्र साहित्यिक अवदान हेतु उषा प्रियंवदा (अमेरिका) को, कहानी संग्रह-'पेंटिंग अकेली है' हेतु चित्रा मुद्गल (भारत) को, उपन्यास-'हम न मरब' हेतु डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी (भारत) को सम्मानित किया गया। सम्मान के अंतर्गत तीनों रचनाकारों को शॉल, श्रीफल, सम्मान पत्र, स्मृति चिह्न, प्रत्येक को पाँच सौ डॉलर (लगभग 31 हज़ार रुपये) की सम्मान राशि, प्रदान की गई।

तीनों रचनाकारों को ढींगरा फ़ाउण्डेशन के अध्यक्ष डॉ. ओम ढींगरा, हिन्दी प्रचारिणी सभा कैनेडा के संरक्षक श्याम त्रिपाठी, मोर्रिस्विल्ल शहर के मेयर मार्क स्टोलमैन, काउंसलर विक्की जानसन, स्टीव राव भारत से आए लघुकथाकार, कहानीकार सुकेश साहनी ने यह सम्मान प्रदान किए। तीनों सम्मानित रचनाकारों को नार्थ कैरोलाइना के गवर्नर पैट मेकरोरी, मेयर मार्क स्टोलमेन तथा मेम्बर ऑफ कांग्रेस जार्ज होल्डिंग की ओर से भी विशेष रूप से प्रशस्ति पत्र प्रदान किये गए। गवर्नर पैट मेकरोरी और मेम्बर ऑफ कांग्रेस जार्ज होल्डिंग की ओर से ये प्रशस्ति पत्र स्थानीय समाज सेवी एवं नायक हरिनाथ माथुर ने तीनों रचनाकारों को दिए। साहित्यकार पंकज सुबीर को मोर्रिस्विल्ल शहर की ओर से मेयर मार्क स्टोलमैन ने हिन्दीय सेवा के लिए सम्मान पत्र प्रदान किया।

इससे पूर्व कार्यक्रम का शुभारंभ अमेरिका तथा भारत के राष्ट्र गान से हुआ; जिन्हें दो विद्यार्थियों ने प्रस्तुत किया। प्रार्थना के गायन के साथ वॉयलिन पर संगती दी दीक्षा ने। लोकप्रिय कोरियोग्राफ़र और कुचीपुड़ी की गुरु कुबी बाबू द्वारा कुचिपुड़ी नृत्य प्रस्तुत किया गया। 'ढींगरा फ़ाउण्डेशन-अमेरिका' ने स्थानीय युवा नेता आलोक शर्मा की स्मृति में 'आलोक शर्मा मेमोरियल सम्मान' इस वर्ष से शुरू किया। अमेरिका के मोर्रिस्विल्ल शहर के आलोक शर्मा युवा पीढ़ी की शिक्षा को लेकर बहुत सतर्क थे और समय-समय पर कम सामर्थ्यवान बच्चों की आर्थिक सहायता भी करते रहते थे। विद्यार्थी भावना सिंह की सहायता करने की, आलोक शर्मा की हार्दिक इच्छा थी। जिसकी जानकारी सुभाषिनी उनकी पत्नी ने ढींगरा फ़ाउण्डेशन को दी, जब उन्हें आलोक शर्मा मेमोरियल सम्मान के लिए किसी विद्यार्थी का नाम देने के लिए निवेदन किया गया। भावना सिंह एक प्रतिभा संपन्न विद्यार्थी है। 1000 डॉलर की सम्मान राशि उसकी आगे की शिक्षा के लिए दी गई है।

इस अवसर पर बोलते हुए डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी ने कहा कि विदेशों में रह कर हिन्दी की सेवा जो प्रवासी भारतीय कर रहे हैं; वह बहुत प्रशंसनीय है। चित्रा मुद्गल ने अपने संबोधन में कहा कि हिन्दी को लेकर; जो उत्साह यहाँ नज़र आ रहा है वह सुखद है। उषा प्रियंवदा ने अपने संबोधन में कहा कि हिन्दी ने भारत की सीमा के बाहर आकर जो स्थान बनाया है; उसका ही प्रमाण है यह कार्यक्रम।

कार्यक्रम के अगले चरण में आयोजित रचना पाठ सत्र में डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी, अभिनव शुक्ल तथा पंकज सुबीर ने अपनी रचनाओं का पाठ किया। प्रथम सत्र का आरम्भ स्वाति गिरगिलानी ने किया और सम्मान समारोह का संचालन पंकज सुबीर ने किया। दूसरे सत्र का संचालन प्रवासी कवि अभिनव शुक्ल ने किया। डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी द्वारा किए गए व्यंग्य पाठ को श्रोताओं ने बहुत सराहा। कार्यक्रम में बहुत बड़ी संख्या में भारतीय हिन्दी प्रेमी श्रोतागण उपस्थित थे। अंत में आभार दिल्ली विश्वविद्यायल के प्रोफ़ेसर और ढींगरा फ़ाउण्डेशन से जुड़े डॉ. प्रमोद शर्मा ने व्यक्त किया। हिन्दी चेतना के मुख्य संपादक श्याम त्रिपाठी और संपादक सुधा ओम ढींगरा ने सम्मानित रचनाकारों, उपस्थित श्रोताओं, मोर्रिस्विल्ल के मेयर, काउंसलर, सभागार की सजावट के लिए ड्रीम वर्क प्लैनर, भोजन के लिए बिंदु सिंह, हिंदी सेवी ऋचा कपूर, अरुंधति बाबा, विरल त्रिवेदी, रेखा भाटिया, छायाकार संदीप कपूर, वीडियो ग्राफ़ी के लिए सतीश बाबू और माइक संयोजन के लिए शिवा रघुनानन का धन्यवाद किया और उपन्यासकार, कहानीकार पंकज सुबीर को उनके योगदान के लिए सम्मानित किया।

(नीलाक्षी फुकन, हिन्दी प्राध्यापक, एन सी स्टेट यूनिवर्सिटी, नॉर्थ कैरोलाइना, अमेरिका)

❐

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान-2015 समारोह की चित्रमय झलकियाँ

प्रथम सत्र का संचालन स्वाति गिरगिलानी द्वारा किया गया।

अमेरिका तथा भारत का राष्ट्रगान प्रस्तुत किया प्रार्थना ने तथा वॉयलिन पर संगती दी दीक्षा ने।

लोकप्रिय कोरियोग्राफ़र और कुचीपुड़ी की गुरु कुबी बाबू द्वारा कुचिपुड़ी नृत्य की प्रस्तुति

लोकप्रिय कोरियोग्राफ़र और कुचीपुड़ी की गुरु कुबी बाबू द्वारा कुचिपुड़ी नृत्य की प्रस्तुति

मोर्रिस्विल्ल शहर के मेयर मार्क स्टोलमैन कार्यक्रम को संबोधित करते हुए।

मेयर मार्क स्टोलमैन, काउंसलर विक्की जानसन तथा स्टीव राव

मोर्रिस्विल्ल शहर के मेयर मार्क स्टोलमैन चित्रा मुद्गल को प्रशस्ति पत्र प्रदान करते हुए।

मोर्रिस्विल्ल शहर के मेयर मार्क स्टोलमैन डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी को प्रशस्ति पत्र प्रदान करते हुए।

मोर्रिस्विल्ल शहर के मेयर मार्क स्टोलमैन उषा प्रियंवदा को प्रशस्ति पत्र प्रदान करते हुए।

मोर्रिस्विल्ल शहर के मेयर मार्क स्टोलमैन पंकज सुबीर को प्रशस्ति पत्र प्रदान करते हुए।

मेयर मार्क स्टोलमैन, काउंसलर विक्की जानसन तथा स्टीव राव के साथ सम्मानित रचनाकार।

स्थानीय समाज सेवी एवं नायक हरिनाथ माथुर कार्यक्रम को संबोधित करते हुए।

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान-2015 समारोह की चित्रमय झलकियाँ

गवर्नर पैट मेकरोरी और मेम्बलर ऑफ कांग्रेस जार्ज होल्डिंग की ओर से प्रशस्ति पत्र देते हरिनाथ माथुर।

गवर्नर पैट मेकरोरी और मेम्बलर ऑफ कांग्रेस जार्ज होल्डिंग की ओर से प्रशस्ति पत्र देते हरिनाथ माथुर।

गवर्नर पैट मेकरोरी और मेम्बलर ऑफ कांग्रेस जार्ज होल्डिंग की ओर से प्रशस्ति पत्र देते हरिनाथ माथुर।

उषा प्रियंवदा, चित्रा मुद्गल, डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी के साथ हरिनाथ माथुर।

डॉ.ओम ढींगरा, श्यांम त्रिपाठी, सुकेश साहनी, मेयर मार्क स्टोलमेन, काउंसलर विक्की जानसन।

उषा प्रियंवदा को सम्मान प्रदान करते सुकेश साहिनी साथ में सभी अतिथिगण।

चित्रा मुद्गल को सम्मान प्रदान करते मेयर मार्क स्टोलमैन, साथ में सभी अतिथिगण।

डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी को सम्मान प्रदान करते डॉ. ओम ढींगरा, साथ में सभी अतिथिगण।

उषा प्रियंवदा, चित्रा मुद्गल तथा डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी सभी अतिथियों के साथ।

काउंसलर स्टीव राव, आलोक शर्मा की स्मृति में स्थापित सम्मान के बारे में बोलते हुए।

काउंसलर स्टीव राव, आलोक शर्मा की स्मृति में स्थापित सम्मान भावना सिंह को प्रदान करते हुए।

पंकज सुबीर प्रथम सत्र के द्वितीय चरण, सम्मान समारोह का संचालन करते हुए।

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान-2015 समारोह की चित्रमय झलकियाँ

सम्मान पश्चात कार्यक्रम को संबोधित करते सम्मानित रचनाकार डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी।

सम्मान पश्चात कार्यक्रम को संबोधित करती हुईं सम्मानित रचनाकार चित्रा मुद्गल।

सम्मान पश्चात कार्यक्रम को संबोधित करती हुईं सम्मानित रचनाकार उषा प्रियंवदा।

मोर्रिस्विल्ल शहर के मेयर मार्क स्टोलमैन को पारंपरिक पगड़ी पहनाते पंकज सुबीर।

मोर्रिस्विल्ल शहर के मेयर मार्क स्टोलमैन के साथ कवि अभिनव चतुर्वेदी तथा पंकज सुबीर।

कवि अभिनव चतुर्वेदी कार्यक्रम के दूसरे सत्र में कवि सम्मेलन का संचालन करते हुए।

कार्यक्रम के दूसरे सत्र में आयोजित कवि सम्मेलन में काव्य पाठ करते पंकज सुबीर।

कार्यक्रम के दूसरे सत्र में आयोजित कवि सम्मेलन में काव्य पाठ करते डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी।

आभार व्यक्त करते दिल्ली विश्वविद्यायल के प्रोफ़ेसर डॉ. प्रमोद शर्मा।

हिन्दी चेतना की ओर से श्याम त्रिपाठी तथा सुधा ओम ढींगरा पंकज सुबीर को सम्मानित करते हुए।

धन्यवाद ज्ञापित करती हुईं हिन्दी चेतना की संपादक डॉ. सुधा ओम ढींगरा।

हिन्दी चेतना के मुख्य संपादक श्याम त्रिपाठी धन्यवाद ज्ञापित करते हुए।

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान-2015 समारोह की चित्रमय झलकियाँ

कार्यक्रम के दौरान हिन्दू भवन का सभागार अतिथियों से खचाखच भरा हुआ था।

उषा प्रियंवदा को लाइफ टाइम अवार्ड दिये जाने पर खड़े होकर स्वागत करते अतिथि श्रोता।

कार्यक्रम पश्चात् सम्मानित रचनाकारों के साथ सुधा ओम ढींगरा, श्याम त्रिपाठी तथा सुरेखा त्रिपाठी।

कार्यक्रम पश्चात् मेयर मार्क स्टेलमैन, काउंसलर विक्की जानसन तथा स्टीव राव।

सुधा ओम ढींगरा तथा चित्रा मुद्गल कार्यक्रम के पश्चात् वार्तालाप करते हुए ।

दोनों देशों तथा नार्थ कैरोलाइना राज्य के ध्वज के साथ तीनों सम्मानित रचनाकार।

ढींगरा फ़ाउण्डेशन के सहयोगी कार्यक्रम पश्चात् छायाकार के कैमरे में क़ैद होते हुए।

कार्यक्रम पश्चात् हास-परिहास के क्षण उषा प्रियंवदा तथा चित्रा मुद्गल के बीच।

कार्यक्रम पश्चात् हिन्दी चेतना की लेखिका शशि पाधा एवं मीरा गोयल, श्याम त्रिपाठी के साथ।

कार्यक्रम प्रारंभ होने से ठीक पूर्व ड्रीम वर्क प्लैनर द्वारा सुसज्जित सभागार।

कार्यक्रम प्रारंभ होने से ठीक पूर्व ड्रीम वर्क प्लैनर द्वारा सुसज्जित सभागार।

कार्यक्रम प्रारंभ होने से ठीक पूर्व ड्रीम वर्क प्लैनर द्वारा सभागार।

जमूरे की आत्ममुग्धता लक्ष्मण रेखा पार कर चुकी है

डुगडुगी की आवाज़ के साथ ही एक आवाज़ उभरती है....साहेबान..... क़द्रदान.... अल्लाह के नाम पे, दाता के नाम पे, मेरे जमूरे की बात सुनिए..... वह आपसे पैसा नहीं चाहता, बस चाहता है तो आज़ादी और छुटकारे की तरकीब। साहेब बहुत दुःखी है। डुगडुगी फिर बजी..... साहेबान हँसिए मत। वह भी जनता है आज़ादी 1947 में मिली थी और वह पूरे मन से उसे भोग रहा है..... सड़कों पर लघुशंका कर, यहाँ-वहाँ थूक कर, पान की पिचकारियों से दीवारें रँग कर, गंद के ढेर लगा कर, प्रदूषण फैलाकर, वह अपनी आज़ादी का आनंद मना रहा है। साहेबान क्या हुआ अगर टीबी की बीमारी में देश सबसे आगे है, डेंगू से लोग मर रहे हैं..... वह तो चैन की बंसी बजा कर आज़ाद सोता है और, फिर सोए भी क्यों नहीं! जब क़ानून सो रहा है और उसे पारित करने वाले आज़ादी से साँस ले रहे हैं; क्योंकि उन्हें याद है, देश को आज़ाद करवाने के लिए कितने लोगों ने क़ुर्बानियाँ दीं, जेल में बंद रहे; इसलिए वे क़ानून की बंदिशों से सबको स्वतंत्र रखना चाहते हैं। क्या कहा आपने? मैंने सुना नहीं ज़रा ज़ोर से कहें..... मेरा जमूरा अगर आज़ादी का मतलब समझता है तो वह और कौन सी आज़ादी चाहता है, और छुटकारा किससे!

साहेब लोचा तो यहीं है तभी आपकी मदद चाहता हूँ। दरअसल मेरा जमूरा साहित्यकार है। जबसे सोशल साइट्स से जुड़ा है, पगला गया है। बेपेंदी का लोटा तो पहले ही था। अब बहुत रंग बदलने लगा है। किसी को सम्मान मिलने की ख़बर पढ़ता है, किसी की पुस्तकें छपने का समाचार सुनता हैं, ईर्ष्या और द्वेष दो बहनों से उसने दोस्ती कर ली है, बस उनके साथ मिलकर सिर धुनता रहता है। उसे ग़ुस्सा आता है, जब दूसरे साहित्यकारों की तारीफ़ के पुल लोग बाँधते हैं। वह बीमार हो गया है। डाक्टरों ने कहा है, इसे इस मानसिकता से छुटकारा दिलवाओ, ताकि यह खुल कर साँस ले सके। इसका दम घुटने लगा था।

साहेब कैसे छोड़ दे सोशल साइट्स! वर्षों से गुमनामी के अँधेरे में जी रहा था। फ़ेसबुक पर विरोधाभासी टिप्पणियाँ देकर, रोज़-रोज़ नई रचनाएँ सुना कर, नए-नए चित्र डाल कर मेरे जमूरे ने जितनी शोहरत हासिल की है, जनाब आप सोच भी नहीं सकते। समस्या तो यही आन खड़ी हुई, मेरे जमूरे को किसी और की वॉल पर कुछ भी लिखा पसंद नहीं आता, बस कूद पड़ता है, विमर्श के नाम पर वाद-विवाद में। सिर फूटने-फुटाने तक की नौबत आ जाती है।

कुछ दिन रोकता हूँ उसे, फ़ेसबुक पर नहीं जाने देता। साहेब वह अवसाद में चला जाता है। फिर कुछ ऐसा लिख देता है, जिससे वह चर्चा में आ जाता है। जमूरे की आत्ममुग्धता लक्ष्मण रेखा पार कर चुकी है, झूठे अहंकार का रावण उसका अपहरण कर चुका है। मेरा जमूरा तिकड़म बाज़, जुगाड़ू भी हो गया। उठा-पटक के तरह-तरह के विचार उसके मस्तिष्क में घूमते रहते हैं। मैं उसे उससे छुड़वाना चाहता हूँ। मैं उसकी इन प्रवृत्तियों से उसे आज़ाद करवाना चाहता हूँ.....

डुगडुगी फिर बज उठती है..... साहेबान..... क़द्रदान..... आपके पास कोई हल हो तो बताएँ.....

सुधा ओम ढींगरा

वर्षा बीत गई है और अब पर्वों का आगमन होने को है। पर्वों के आगमन की सूचना देते हैं पोखरों में, तालाबों में खिले हुए कमल। परिवर्तन की सूचना देते हैं यह पुष्प। वर्षा का चौमासा बीत गया और अब शीत ऋतु के साथ आ रहे हैं त्योहार, अपना हर्ष और उल्लास लिये हुए।

ढींगरा फ़ैमिली फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान समारोह-2015

हिन्दी की वरिष्ठ कथाकारा उषा प्रियंवदा को "ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय साहित्य सम्मान" प्रदान किया गया।

हिन्दी की वरिष्ठ कथाकारा चित्रा मुद्गल को "ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान" प्रदान किया गया।

हिन्दी के वरिष्ठ व्यंग्यकार पद्मश्री डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी को "ढींगरा फ़ाउण्डेशन-हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान" प्रदान किया गया।

उषा प्रियंवदा, चित्रा मुद्गल तथा डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी को गवर्नर पैट मेकसेरी और मेम्बर ऑफ कांग्रेस जार्ज होल्डिंग की ओर से सम्मान।

उषा प्रियंवदा, चित्रा मुद्गल तथा डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी को मोरिस्विल्ल शहर की ओर से मेयर मार्क स्टोलमैन द्वारा सम्मानित किया गया।

लोकप्रिय दैनिक समाचार पत्र पंजाब केसरी ग्रुप का महत्त्वपूर्ण योगदान

देश जब भी प्राकृतिक आपदाओं की चपेट में आया है, पंजाब केसरी ग्रुप हमेशा सहायता के लिए आगे आया है..... भूकम्प पीड़ित नेपाल की सहायता के लिए पंजाब केसरी ग्रुप ने 11 लाख का योगदान देकर Prime Minister's Relief Fund (Nepal) शुरू किया। पत्र समूह ने रुपये /-2, 60, करोड़ एकत्रित किए और 22 जुलाई 2015 को रुपये-2, 41, 18, 494/- का पहला झाफ़्ट प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी को दिया।

In the picture, Shri Vijay Kumar Chopra,CMD & Editor-in-Chief, Punjab Kesari Group and Shree Amit Chopram Jt.Managing Directerof Punjab Kesari Group, are handling over the first installment of Rs. 2,41,18,494/- collected by the Punjab Kesari Group in the Prime Minister's Relief Fund (Nepal), to Shri Narendra Modi, Prime Minister Of India. Shri Avinav Chopra, Miss Amiya Chopra, Shri Aroos Chopra, Shri Abhijay Chopra, Director of the Group and Shri Avinash Rai Khanna, Member Parliament (Rajaya Sabha), are also standing.

पंजाब केसरी ग्रुप जम्मू एवं कश्मीर से स्थानांतरित होकर आए लोगों के लिए ट्रकों में राहत सामग्री भी भेजते हैं और 408 वां ट्रक बार्डर के इलाके तहसील बिश्ना, ज़िला जम्मू के शरणार्थियों के लिए भेजा गया है।

In the picture, while Shri Vijay Kumar Chopra,CMD & Editor-in-Chief, Punjab Kesari Group, is flagging off the 408th truck of relief material, sponsored by Lala Jagat Narain Sewa Society & Shri Gyan Sthal Mandir Sabha, Ludhiana, Maharaj Kamalbir ji Of Ludhiana, S/ Shri Jagdish Bajaj, Hardial Singh Aman,Bittu Gumber, Ramesh Gumber, Sham Lal Kapoor, Harjinder Singh, Rakesh Bajaj, Rajinder Garg, Tarun Goyal, Amit Mahajan, Kapli Mahajan, Pal Cheema,Rajesh Yadav are seeing standing with them.